काज बिना न करे जिमी उद्यम, लाज बिना रण मांहि न झूझे।
डील बिना न सधे परमारथ, शील बिना सत सौं न अरूझे।
नेम बिना न लहे निहचे पद, प्रेम बिना रस रीति न बुझे।
ध्यान बिना न थंभे मन की गति, ज्ञान बिना शिव पंथ न सूझे॥१॥

प्रिय पाठक! इस अपार संसार में ज्ञान एक अद्वितीय उत्तम पदार्थ है। अज्ञानान्धकार का नाशक और समस्त चराचर पदार्थों का यदि कोई बोधक है, तो वह ज्ञान ही है। जीवाजीव आदि तत्वों का--निजी स्वरूप दिखाने वाला, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु वनस्पति, त्रस इन षट्कायिक जीवों का बोध कराने वाला केवल ज्ञान ही है।

सुदेव, कुदेव, सुगुरु, कुगुरु, धर्माधर्म, भक्ष्याभक्ष्य, कृत्याकृत्य, हिताहित, नित्यानित्य, षट्द्रव्य स्वर्ग, मृत्यु और पाताल आदि का बोधक भी ज्ञान है। अतः मोक्षाभिलाषियों का प्रधान कर्तव्य है कि वे सर्व से प्रथम ज्ञानाराधन करें। ज्ञानाराधन से ही शनैः २ विशेष ज्ञान की प्राप्ति होती है। ज्ञानाराधन के लिए सौभाग्य पञ्चमी--अपर नाम- ज्ञान पञ्चमी

लिखित तक अङ्गिकार करना चाहिए। वह तप किस विधान से किया जाय ? यह वर दत्त कुमार और गुण मञ्जरी कन्या का भूत कालिक उदाहरण देकर स्पष्ट रूप से समझा दिया जाता है।

वर दत्त कुमार की आख्यायिका

जम्बु द्वीप भरत क्षेत्र में पद्मपुर नामक एक अद्वितिय मनोहर नगर था। जहाँ वीर धीर, प्रजा पालक, न्यायी, गुणग्राहक, नीतिज्ञ और अत्यन्त चतुर धर्मात्मा, 'अजितसेन' नामक राजा राज्य करता था। इसी राजा के रूप लावण्यादि विविध गुण सम्पन्ना धर्म-परायणा, 'यशामती' नाम की राणी थी। विनय शीलादि देवोपम गुणों से सुशो भित, महान् भाग्यवान, अतीव रूपवान, राज्य चिन्हालंकृत वरदत्त' नामक राजकुमार इसी राणी की कुक्षी से उत्पन्न हुआ था। जब राजकुमार की अवस्था आठ वर्ष की हो गई तो राजा ने उसको विद्याध्ययन के लिए कलाचार्य के सुपुर्द कर दिया। कलाचार्य के घोर परिश्रम करने पर भी मन्दबुद्धी होने के कारण शास्त्रादि गहन विषय तो दूर, रहे किन्तु एक शब्द भी न सीख सका। शनैः २ राज कुमार ने युवावस्था में पदार्पण किया। इसी बीच में प्रारम्भ संचित अशुभ कर्मोदय से राजकुमार

को भयङ्कर गलित कुष्ट रोग ने आघेरा। जिससे राज कुमार महान् कष्ट--कारागार की काल--कोठरी में जा गिरा। माता-पिता अपने प्राण प्रिय पुत्र को इस प्रकार असह्य दुख से दुखी देखकर बहुत ही चिन्तातुर हुए और रोगोपशांति के लिए लाखों रुपया व्यय कर दिया किन्तु किसी भी प्रकार रोगोपशम नहीं हुआ। अस्तु।

इसी नगर में एक सप्त कोटि द्रुमाधिश (द्रुम-अशर्फी) " सिंहदास " नामक सेठ रहता था। उसके ' कर्पुर तिलका ' नामक धर्म परायण विदुषी पत्नी थी। अपितु उभय दम्पती जैन--धर्म--पालक थे संतानके नाम पर केवल चन्द्र मुखोज्वला, अनन्त गुण भूषिता ' एक गुण मञ्जरी , नामा मनोहर बालिका थी। बडे लाड प्यार से पाली हुइ यह रूपवती बालीका। कुमारावस्था को पारकर शनैः २ यौवनावस्था में आ गइ। इधर यौवन आया और उधर पूर्व भव संचित अशुभ कर्मोदय से गुण मञ्जरी के शरीर में कई भयङ्कर रोगों ने आकर घेरा डाल दिया। कुछ ही दिनों में गुण मञ्जरी गूंगी हो गई। तब सिंहदाससेठ ने अपरमित द्रव्य व्यय अपनी पुत्रीका के रोगोपशमन के लिए किया, किन्तु कोई लाभ नाहीं हुआ. पुत्री

युवती हो चुकी थी, अत उस के विवाह के लिए भी कइ धनी मानी सेठों से उसने नम्रता पूर्वक निवदन किया, किन्तु गूगी के साथ विवाह कौन करता ' इसी चिन्ता में उभय दम्पति दिनों दिन घुलन लगे ।

कुछ ही समय के बाद जन्म सुधारक, दुःख विनाशक, भवोदधि तारक, षट् कायिक जीवोंके प्रति पालक, जगम युग प्रधान, चतुर्ज्ञान धारक श्री मज्जैन धर्म-दिवाकर 'श्री विजय सनाचार्य' पांचसो चेल्यों (मुनियों) सहित पद्म पुर के बाहर 'पुण्य वाटिका " में पधारे । इधर शहर में मुनि पदार्पण का शुभ-सवाद पहुचते ही सभ्या वध नर नारि बहुमूल्य वस्त्राभूषणोंसे अलकृत हो जिन-वाणी श्रवणार्थ मुनि सेवा म उपस्थित हुए । सेठ सिंहदास भी सह कुटुम्ब गुरु-चरणों में उपस्थित हुआ और सेवा में तल्लीन हो गया । उधर नगर स्वामी राजा अजीत सेन भी चतुरङ्गिणी सेना और सह परिवार मुनि दर्शन सेवा और वाणी श्रवणार्थ श्री विजय सेनाचार्य की सेवा में उपस्थित हुआ ।

तब दर्शनार्थ आई हुई नागरिक जनता को मुनि श्री ने सुललित मनोहर अमृतमय शब्दों में सदुपदेश सुनाना प्रारम्भ किया । प्यारे बन्धुओ !

और बहनो !' मुक्ति-मार्ग की प्राप्ति के लिए सब से प्रथम ज्ञान की पुर्णतया आवश्यकता है। उक्तं च " पढं नाणं तवो दया " इति वचनात् जिनेश्वर देवने फरमाया है कि पहले ज्ञान और फिर दया। क्योंकि संसार के समस्त पदार्थों के अंतरंग स्थित नित्यानित्यत्व का बोध कराने वाला केवल ज्ञान ही है। कि ज्ञान की प्राप्ति होने पर समस्त-मुक्ति-मार्ग सहायक गुणों की प्राप्ति हो जाती है। अस्तु। उक्तं हि--

नणं च दसणं चेव, चरित्तं च तओ तहा।
एमग्ग मणुपत्ता, जीवा गच्छति सोग्गइ ॥

इति वचनात्

उ. अ. २८ गा. ३

अर्थात्–ज्ञानकी प्राप्ति होने पर दर्शनकी प्राप्ति होत है। दर्शन की प्राप्ति होने से चारित्र की और चात्रिकी प्राप्ती से तप अर्थात् सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चात्र और तप की प्राप्ति होने पर अत्मा सीधा मो की ओर जाता है। मुक्ति मार्ग की प्राप्ति के चा साधनोंमें से ज्ञान को सबसे प्रथम स्थान दिया गा है। जहांपर सम्यग् ज्ञान है, वहीं पर सयग् दर्शन भी है। और जहांपर सम्यग् दर्शन हैवहां सम्यग् ज्ञान अवश्य है। जहां ज्ञान व दर्शन

दोनों हैं, वहां सम्यग् चारित्र की उपस्थिति
प्रयही हो जाती है। अब, जहां सम्यग् :
सम्यग् दर्शन और सम्यग् चारित्र यह तीनों
थित होजाते हैं, वही मोक्ष का मार्ग है। अ
समस्त सूत्रों में ज्ञान का स्थान सर्व से प्रथम
है। अतएव मुमुक्षु पुरुषों का कर्तव्य है कि वे
ज्ञान की आराधना करें और अन्य भाई ब
से भी सतत ज्ञानार्जन करवाने का प्रयत्न
किन्तु मन वचन और काया से कभी ज्ञान
विराधना न तो करें और न करावें। क्योंकि
से विराधना करने से शून्य मनवाला अर्थात्
हीन होता है। वचन द्वारा ज्ञान विराधना
वाला मूकत्व भाव (गूंगेपन) को प्राप्त होत
और काया स विराधना करने वाले के शरी
कुष्ठादि भयङ्कर रोगों की व्युत्पत्ति होती है।
मन वचन और काया इन तीनों योग द्वारा विर
करने स द्रव्यादि सम्पत्ति नष्ट होती है।
माता, पिता, सुत दारा आदि का वियोग होत
अनेक प्रकार की आधि, व्याधि प्रादुर्भूत होत
इस प्रकार हृदय द्रावक उपदेश श्रवण कर "
दास " सेठ न मुनि श्री से इस प्रकार प्रश्न
कि, हे भगवन्! मेरी पुत्री " गुण मञ्जरी "

भव में ऐसे कौनसे दुष्कृत्यों का समाचरण किया था कि जिससे उसके शरीर में ऐसा भयङ्कर रोग उत्पन्न हुआ! प्रत्युत्तर में आचार्य श्री ने फरमाया कि तुम्हारी पुत्री के शरीर मे रोगोत्पत्ति होने का कारण सुनिये!

घात की खण्ड के पूर्व की ओर सुरम्य 'भरत-खेट क' नामक एक नगर था। 'जिनदास सेठ' अपनी धर्म पत्नी "सुंदरी" नामा सेठानी के साथ आनन्द पूर्वक निवास करते थे। इनके आसपाल, तेजपाल, गुणपाल, धर्मपाल, और धर्मसार नामके पांच पुत्र तथा लीलावती, रङ्गावती, मङ्गावती और कनकावती नामा चार पुत्रियां थी। सेठ ने एक दिन शुभ काल देख कर अपने पांचो पुत्रों को विद्याध्ययन के लिए सुयोग्य अध्यापक के सुपुर्द किए। बालक लाड प्यार में पलेथें, इस कारण पढने लिखने से तो दूर रहे किन्तु दिन रात खेल कूद में ही लीन रहने लगे। जब एक दिन अध्यापक ने उनकी इस प्रकार चंञ्चलता और क्रिडासक्तीके लिये भर्त्सनाकी और ताड़ना भी दी। इस प्रकार भर्त्सना और ताडना से वें इतने दुखी हुए कि रोते हुए अपनी माता के पास गये और उससे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। इसपर माता ने क्रोधित

होकर सब पुस्तकें आग में फेंक कर जला दी, पट्टी फोड़ डाली और बेटों को पुचकारती हुई बोली पुत्रो! तुम्हें पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं। तुम्हें पढ़ कर क्या करना है। पढ़ते हैं, वह भी मरते हैं और बिना पढ़े भी। फिर व्यर्थ ही दांत कटाकट क्यों की जाय? अपने घर में असीम द्रव्य है, बैठे २ खाओगे तो भी जीवन भर पर्याप्त होगा, फिर चिन्ता किस बात की है। अब कभी पढ़ने के लिये न जाना। यदि अध्यापक बुलावे तो उसको गालियां देना पत्थर मारना और मेरे पास भग कर चले आना। इस प्रकार अशिक्षिता माता द्वारा भड़काये जाने पर समस्त लड़के उन्मत्त होकर खेल कूद में ही आनन्द मनाने लगे।

पुत्रों को इस प्रकार उन्मत्त होकर क्रीड़ासक्त देख कर सेठने एक दिन सेठानी से पूछा कि लड़कों को पढ़ने क्यों नहीं भेजती हो? लड़के मूर्ख रह जायगे तो इन्हें लड़की कौन देगा? इन्हें पढ़ने के लिये भेजा करो। तब सेठानी ने उत्तर दिया कि आप जान और आपके लड़के। मैं उन्हें थोड़े ही रोकती हूं। न जाय तो उसका मैं क्या करूं। यदि ये अध्यापक के पास नहीं जाते हैं, तो आप स्वयं ही क्यों नहीं पढ़ाते। किस के मारने के लिये लड़के

थोडेही हैं। पुत्र पिता के आधीन और पुत्रियें माता के आधीन होती हैं। बेटे की चिन्ता पिताको और बेटी की फिक्र मां को होती है। इस लिये लडके पढे या न पढे यह सब आपही का दोष है, इसमें मैं कुछ नहीं कर सकती।

इस प्रकार अशिक्षिता सेठानी का प्रत्युत्तर सुनकर सेठजी चुपचाप अपने नित्य कृत्यों में लग गये। धीरे २ धार्मिक ज्ञान का सतत आराधन करने लगे, और स्वकीय द्रव्य का पाठशाला विद्याश्रम, अनाथालयादि में व्यय कर सदुपयोग कर नित्य धर्म ध्यानादि में प्रवृत्त हो आत्म कल्याण करने लगे।

इधर पांचो पुत्र युवावस्था को प्राप्त हुए, किन्तु अन पढ होने के कारण कोई भी उन्हे कन्या देने को तैयार नहीं होता था, प्रत्युत अरे! यह तो मूर्ख हैं, मूर्ख कहीं विवाह के योग्य होते हैं, कहकर उपहास करते थे। सेठजी अपने पुत्रों का इस प्रकार उपहास सुनकर एक दिन धर्म पत्नी से कहने लगे। तेरी कुशिक्षा से ही पुत्र मूर्ख रह गये। तेने उनकी पट्टिएं फोडकर और पुस्तकें जलाकर ज्ञान की महान् आशातना कर के तेने ज्ञानावर्णीय कर्मो के असीम दलिये एकात्रित

कर लिये हैं, ऐसे महान् दोष का बदला किस जन्म में देगी ! इस प्रकार सेठ जी के वचन सुनकर सेठानी ने प्रत्युत्तर दिया कि यह सारा दोष आप ही का है, मेरा इस में किंचित मात्र भी नहीं ! तब सेठजी ने कहा कि पापिन् ! अपना दोष मुझ पर डालती है ? तब सेठानीने उत्तर में कहा कि पापी तू ! और तेरा बाप !! जिसने तुझे ऐसाकर ऐसी कुशिक्षाए दी। इस भांती सेठानी के दुर्वाक्यों से क्रोधित हो सेठजी ने उसपर पत्थर दे मारा जिसकी मस्तक में मार्मिक चोट लगने से उसी समय मर गई। और अब तेरे घर में ' गुण मञ्जरी ' नामा पुत्री होकर आई है। पूर्वभव में ज्ञान विराधना करने के कारण ही इसके शरीर में रोगोत्पत्ति हुई है।

इस प्रकार मुनि के वचन श्रवण कर ' गुण मञ्जरी को जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न होगया। जिससे अपना पूर्व भव का समस्त वृतान्त जान लिया। तत्पश्चात् मुनिचरणों में निवेदन करने लगी कि भीमवपो ! आपका कथन अक्षर शः सत्य है। इसी बीचमें सेठजी ने प्रश्न किया कि कृपासिन्धो ! इस कन्या की यह व्याधि किस प्रकार शांत हो सकती है ? गुरु महाराज ने प्रत्युत्तर दिया कि

देवानुप्रिय ! " पढमं नाणं तओदया " अर्थात् सर्व प्रथम ज्ञान की भक्तिकर उसकी आराधना करें। जिस से सर्व प्रकार का आनन्द मंङ्गल होगा। तब सेठजी ने पुन: प्रश्न किया कि मुनिवर ! ज्ञान की भक्ति और आराधना किस प्रकार की जाय ? प्रत्युत्तर में मुनि राज ने फरमाया, हे मोक्षाभिलाषी! प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी का उपवास करें। पांच २ लोगस्स के पांच कायोत्सर्ग करे। दो २ नमोत्थुणं एक २ कायोत्सर्ग के साथ देवें। पांच दिन व एक मास पर्यन्त अमुक २ पांच फल अथवा पांच हरी नहीं खाऊंगा ऐसा नियम ग्रहण करे। उपवास के दिन पौषध कर देवसी, रायसी, उभय काल का प्रतिक्रमण आता हो तो अवश्यही करे। नहीं तो किसी दूसरे से ही सुने। ज्ञान कीर्तन करे तथा ज्ञानी पुरुषों के गुण-ज्ञान करे। और देवसी रायसी प्रति क्रमण के अन्त में इस ज्ञान पंञ्चमी के स्तवन को पढे।

"पञ्चमी तप तुमे करोरे प्राणी, जिम पामो निर्मल ज्ञान रे।
पहलुं ज्ञानने पछी किरिया, नहीं कोई ज्ञान समान रे ॥ १ ॥
नंदी सूत्र में ज्ञान वखाण्यु, ज्ञानना पांच प्रकार रे।
मति श्रुति अवधि ने मन पर्यव, केवल ज्ञान श्रीकार रे ॥ २ ॥
मति अठावीस श्रुती चउदे, अवधि छे असंख्य प्रकार रे।
दोय भेद मनपर्यव दाख्युं, केवल एक प्रकार रे ॥ ३ ॥

चंद्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा तेसू अधिक प्रकाश रे।
केवल ज्ञान समूं नहीं कोई लोकालोक प्रकाश रे ॥ ४ ॥
पार्श्वनाथ प्रसाद कराने महती पूरी सम्मेद रे।
समय सुन्दर कहे हूं पण पामूं, ज्ञानमो पाचमो भेद रे।

" ॐ ह्रीं नमो नाणस्स "

इस पदकी २१ माला पर्यङ्कादि आसन से उत्तर पूर्व दिशा की ओर मुंह कर मौन युक्त हो जपकरे। यदि प्रमाद वश जप रहजाय तो पारणे के दिन जप किये विना भोजन नहीं करे। यदि शहर में हो गुरू गुराणी हो तो उनके दर्शन कर माङ्गलिक सुने तथा पारणे के समय गुरु गुराणी को प्रतिलाभ अर्थात् पारणे के पहले अवश्यही पात्र दान दें। यदि गुरु गुराणी का योग न होतो स्वधर्मी बालक तथा बालिकाए और यदि इतनी शक्ति न हो तो एक बालक और बालिका तो अवश्य ही जिमावे इस प्रकार पांच वर्ष और पांच मास पर्यन्त ज्ञान की आराधना करे। उक्त नियम की पूर्ति के दिन यथा शक्ति निम्नाङ्कित विधि पूर्वक ऊजमना करे। जिन शासन की प्रभावना बढ़ावे। प्रसन्न मुख हो स्वधर्मिणी बहिनों के साथ मंगल गान युक्त पांच पुस्तकें पांच उनके बांधने के बोरशा वस्त्र, तथा पांच ठमणियें आदि तथा पीपध आदि के काम में

आवे ऐसे कम्बल, केसले, दरियें आदि सामग्री संयुक्त गुरु महाराज के दर्शन कर उक्त सब वस्तुएं ज्ञान भण्डार में चढावे और ज्ञान प्रचारार्थ ५।) ज्ञान भण्डार में जमा करावे। विशेष शक्ति हो तो व्याख्यान के समय श्रोताओं के बैठने के लिए बड़ी दरी अथवा चंदवा वगैरा भी चढावे और स्वधर्मी प्रत्येक बंधु के घरमें लड्डू की प्रभावना वितरण करे। एवं प्रीति पूर्वक भोजन द्वारा प्रेम तथा वात्सल्यताकी वृद्धि करें। पढनेवाले असमर्थ बालकों को भोजन, वेतन, पुस्तकादी द्वारा यथाशक्ति सहायता करे। तथा विधवाश्रम, कन्या पाठशाला आदि संस्थाओं में भी यथाशक्ति दान प्रदान करें। आदि उपरोक्त सभी वस्तुएं देनेकी शक्ती न हो तो, शक्तयानुसार थोडा बहुतही द्रव्य ज्ञान भण्डार में अवश्य चढावें। इस प्रकार पांच वर्ष और पांच मास तक ज्ञान-पञ्चमी की आराधना करने से अवश्य ही आनन्द मङ्गल होता है।

यदि प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी की आराधना करने की शक्ति न हो तो जीवन पर्यन्त प्रत्येक वर्ष कार्तिक शुक्ला पञ्चमी की आराधना करने पर भी उपरोक्त फल की प्राप्ति होती है.

इस प्रकार गुरूपदेश श्रवण कर सेठजी बोले कि-स्वामिन ! मेरी पुत्री प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी करने में असमर्थ है, इसलिए कृपया प्रति वर्ष की कार्तिक शुक्ला पञ्चमी की आराधना किस प्रकार की जाय, सो विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये

प्रत्युत्तर में मुनि श्री ने फरमाया कि देवानु प्रिय ! जीवन पर्यन्त प्रत्येक वर्ष की केवल एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का उपवास और पौषध व्रत सयुक्त उभय काल का प्रतिक्रमण करे। तथा गुरु गुराणी के दर्शन कर, माङ्गलिक श्रवण करे और हरी वस्तुओं के कुछ त्याग व्रत धारण कर स्वधर्मियों को प्रभावना करें । तथा प्रीति भोजनादि द्वारा स्वधर्मियों में प्रीति तथा वात्सल्य की अभिवृद्धि करें। अनाथाश्रमादि संस्थाओं का दान देकर उनका संरक्षण करें । तथा अवशिष्ट विधि पूर्वोक्त प्रकार ही करे। इस प्रकार मुनि श्री का सदुपदेश श्रवण कर गुण मञ्जरी ने प्रत्येक वर्ष की केवल एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के उपवास का नियम धारण किया।

इसी सुअवसर में राजा अजीत ने भी मुनि श्री से प्रश्न किया कि गुरुदेव ! वरदत्त नामक राजकुमार के शरीर में कुष्ट की

उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? और ऐसे कौन से अशुभ कर्म इसकी आत्मा ने-उपार्जन किये हैं, जिससे यह विद्या विहीन भी रह गया! कृपया इस का विस्तार पूर्वक विवेचन किजिये। प्रत्युत्तर में मुनि श्री ने फरमाया कि राजन्! राजकुमार वरदत्त ने पूर्व भव में ज्ञान की विराधना की थी इसी कारण से यह विद्या हीन हुआ है। इसका समस्त वृतान्त मैं विस्तार पुर्वक कहतां हुं, तू दत्तचित्त होकर सुन। इसी केवल कल्प जम्बू द्वीप के भारत क्षेत्र में श्रीपुर नामक एक रमणीय-नगर था। उस में वसु नामक एक शेठ निवास करता था। उसके वसुसार और वसुदेव नाम के दो पुत्र थे. एक दिन सेठ के दोनों पुत्र खेलने के लिये जंगल में निकल गये। वहां " सुन्दरसूरि " नामक मुनि का समागम हो गया। दोनों महाजन पुत्र मुनि के चरण कमलों में पञ्चाङ्गनमन कर मुनि श्री की वाणी श्रवणार्थ समीप बैठकर सेवा करने लगे। तब मुनि श्री ने देशकाल देख कर पिपासुओं को सुमधुर शब्दों में संसार की असारता दिखलाई। जिससे दोनों पुत्रों को अपूर्व वैराग्य उत्पन्न हुआ और अपने प्रिय माता पिताओं की

आज्ञा लेकर उक्त मुनि वर्य के समीप दीक्षा ग्रहण कर दोनों ही मुनि शुद्ध चारित्र के अनुगामी बने। दोनों ही मुनिओं ने गुरु सेवा कर महत् ज्ञानाभ्यास किया। किन्तु वसुदेव नामक मुनि विशेष गुरु भक्त और विनय सम्पन्न होने के कारण विविध शास्त्र सम्पन्न तथा अन्य कई विद्याओं के विशेष पारदर्शी बन गये। गुरु महाराज ने उन्हें सुयोग देखकर आचार्य पद से विभूषित किये।

कुछ समय के पश्चात् आचार्य वसुदेव स्वकीय पांच सो शिष्यों के परिवार को ज्ञानाभ्यास कराते हुए जनपद देश में विचरण करने लगे। एक दिन शयनानन्तर शिष्य मण्डली में से मुनि जन कोई सूत्रार्थके लिये, कोई भवन पति, व्यन्तर, ज्योतिष और देवविमानवासी देवताओं का स्वरुप एव उनके गतागत के विषय जानने के लिये क्षण २ के पश्चात् पृथक् २ आचार्य महाराज की सेवामें आकर प्रश्नोत्तर करने लगे। जिसके कारण आचार्य श्री रातभर में थोडी निद्राभी नहीं लेने पाये तब आचार्य श्री के मन में ऐसा कुविचार उत्पन्न हुआ कि मेरे बडे भ्राता वसुसार 'जी ने पुर्व भव में महान् पुण्योपार्जन किये हैं, कि जिस के कारण वे बडे आनन्द पूर्वक सारी रात्री सोते रहते हैं।

उनके अल्पज्ञ होने के कारण ज्ञान ध्यानादि गहन विषय पूछने के लिए कोई भी मुनि उनके सन्निकट नहीं जाता है। और वे अपनी इच्छानुसार सोना, बैठना, उठना, खाना, पीना आदि सब कार्य करते रहते हैं। न किसी प्रकार की चिन्ता है, और न असंतोष। मूर्ख जन अपनी आयु बडेही आनन्द से व्यातीत करते हैं। ऐसी मूर्खता मुझे ही क्यों नहीं प्राप्त हुई। यदि ऐसी मूर्खता मुझही में रहती तो बड़े आनन्द की बात थी। मूर्खता में बहुत से गुण दृष्टी गोचर होते हैं। मूर्ख मनुष्य को प्रायः किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती। मूर्ख भोजन भी अधिक करते हैं। लज्जाको तो वे समझते भी नहीं। दिन रात आनन्द से पडे रहते हैं। कार्या-कार्य का उन्हें कोई विचार नहीं रहता, और मानापमान में सदा एक से रहते हैं। रोग रहित और शरीर से हृष्ट कट्ट होते हैं। इस प्रकार अनेक गुण विभूषित होने के कारण मुर्ख संसार में सुख पूर्वक जीवन व्यापीत करता है। इस कारण मैं भी आज से किसी को एक पद भी नहीं सिखाउंगा और अपना पढा हुआ भी सब भूल जाउंगा। इस प्रकार कु विचार कर बारह दिन तक मौन धारण की, और एक भी शिष्य को ज्ञान, ध्यान, पठन.

पाठनादि नहीं कराया। कुछ कालानन्तर उक्त पाप की आलोचना किये बिना ही आर्त ध्यान संयुक्त आचार्य श्री वहां से मर कर मानससरोवर की निकट वर्ती अटवी में हंस रूप उत्पन्न हुए। कुछ काल के पश्चात् हंस रूप आचार्य श्री का जीव वहां से मर कर राजन् मेरे घर पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ है। किन्तु पूर्वोपार्जित ज्ञानावर्णी कर्मोदय से अथवा ज्ञान का अपकार करने से मूकत्व और कुष्टादि रोगों की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार मुनि वाक्य श्रवण कर राजकुमार वरदत्त मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़ा। कुछ ही क्षणानन्तर मूर्छावस्था दूर होते ही पूर्व कृत्य और जन्म का स्मरण करने पर जाती-स्मरण ज्ञान की प्राप्ति हुई। जिससे अपने पूर्वभव कृत कृत्य राज कुमार ने स्वयं ही जान लिये। तब राजकुमार ने मुनि श्री से प्रश्न किया कि कृपा सिन्धो! मेरी यह व्याधि किस भांति दूर हो सकती है, और मूकत्व से मेरा छुटकारा किस प्रकार हो सकता है! तब मुनि श्री ने फरमाया, कि देवानुप्रिय! शुद्ध भावना युक्त प्रत्येक महिने की शुक्ला पञ्चमी के दिन उपवास तथा आयम्बिल तप आदि पूर्वोक्त जपादि किया करने से [illegible]

[illegible] है और [illegible] की [illegible]

होती है। इस प्रकार गुरु वाक्य सुनकर राज कुमार बोला कि हे प्रभो ! जीवन पर्यन्त प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी करने में तो मैं असमर्थ हूं, किन्तु सरलता पुर्वक हो सके ऐसा कोई तप हो तो कृपया बतलाइये। मुनि श्री ने फरमाया कि कुमार! यदि इतना करने की शक्ति न हो तो वर्ष २ प्रति एक शुक्ला पञ्चमी, अर्थात् प्रत्येक वर्ष में एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का उपवास कर पौषध, प्रतिक्रमण, जप, आदि सब क्रिया उपरोक्त विधि पूर्वक करें। इस प्रकार ज्ञान की आराधना करने से समस्त सुख सम्पत्ति और पूर्ण स्वस्थता प्राप्त होती है। तथा स्वल्प काल ही में आत्मा सतत सुखों का अवलम्बन कर लेती है। इस प्रकार गुरु वाक्य श्रवण कर 'वरदत्त' नामक राज कुमार ने प्रत्येक वर्ष की कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का तप आजन्म आराधन करने का नियम गुरु मुख से धारण किया। राज कुमार ने गुरु श्री के सन्मुख प्रतिज्ञा की कि गुरुदेव! आज मैंने श्री मुख से जो व्रत धारण किया है, उसको आपके कथनानुसार आजीवन यथाशक्ति पालन करूंगा। इसी प्रकार राजा, रानी आदि समस्त अन्तः पुरवासियों ने भी ज्ञान पञ्चमी का तप धारण किया, और सहस्त्रों

नागरिक भी इसी व्रत पालन की प्रतिज्ञा कर अपने २ कर घर गये। अस्तु।

उक्त व्रत के प्रभाव से राजकुमार 'वरदत्त' की समस्त व्याधियां नष्ट हो गईं। शरीर पहले की अपेक्षा विशेष हृष्ट पुष्ट और सुन्दर बन गया। तब नृपति अजीतसेन ने राजकुमार के साथ अत्यन्त लावण्यवती और रूपवती एक सहस्र कन्याओं का पाणि ग्रहण करा दिया। और अपने नेत्रों के तारे प्राण प्यारे पुत्र को इस प्रकार सुखी देख कर परम हर्षित होते हुए धर्म ध्यानादि नित्य कृत्यों में प्रवृत्त हुए।

कुछ ही काल के पश्चात् 'विजय सेनाचार्य' अपने अनेक शिष्यों के परिवार सहित पर्यटन करते हुए 'पद्मपुर नगर के बाहर पुष्प वाटिका में पधारे। उनके समीप उपस्थित हो, उपदेश श्रवण कर राजा को वैराग्य उत्पन्न हुआ। राजा महल में आकर राजकुमार वरदत्त को राज मुकुट पहना कर राजा ने सहर्ष दीक्षा ग्रहण की, और आत्म कल्याण के मार्ग में प्रवृत्त हुए।

वरदत्त नृपति ने भी कतिपय वर्षों तक अपने राज्यान्तर्गत मनुष्यों पशुओं और पक्षियों का नीति पूर्वक पालन किया। पश्चात् अपने पुत्र को

राज सिंहासन देकर स्वयं दीक्षा धारण की और गुर्वाज्ञानुसार जिनाज्ञा के आराधन मार्ग में उतर पड़े।

इधर सिंहदास सेठ की पुत्री "गुण मन्जरी" को भी 'ज्ञान-पञ्चमी' के तप के प्रभाव के कारण संपूर्ण रोग दूर हो गये, और पहले की अपेक्षा रूप सौन्दर्य में अत्याधिक अभिवृद्धि हो गई। तब पिता ने अपनी सुकुमारी लाडिली पुत्री का शुभ पाणि-ग्रहण जैन-धर्म पालक 'जिनचन्द्र' सेठ से कर दिया। उभय दम्पति चिरकाल तक पञ्चेन्द्रिय के सुख भोगते रहे, तथा गुरु मुख से धारण किये हुए पञ्चमी-व्रत तप की पुर्ति की। अंत में गुणमन्जरी ने दीक्षा ग्रहण की और स्व स्वरूपाचरण में निमग्न हुइ।

"वरदत्त" मुनि और "गुणमन्जरी" साध्वी दोनों ने निर अतिचार पूर्वक चारित्र का पालन किया और अन्त में "वैजन्त" विमान में देवत्व को प्राप्त हुए। पश्चात् वहां से देव शरीर परित्याग कर, जम्बू द्वीप महाविदेह क्षेत्र की पुष्कलावती विजय और पुण्डरीकणी नगरी में अमरसेन राजा और "गुणवती" राणी की कुक्षि में वरदत्त का जीव आकर अवतरित हुआ। माता पिता ने अपने प्राण

प्रिय पुत्र का "सुरसेन" नाम संस्करण किया। जब सुरसेन आठ वर्ष की अवस्था का होगया तो विद्याध्ययन के लिए कलाचार्य के सुपुर्द किया। राजकुमार अल्प काल ही में बहत्तर कला निधान होगये। यौवनावस्था का पदार्पण हो चुका था, अतः राजा अमरसेन ने सौ राज कन्याओं के साथ राज कुमार का पाणि ग्रहण कर दिया। कुछ ही काल के पश्चात् राजगद्दी राजकुमार सुरसेन को देकर धर्मानुष्ठानादि क्रियाओं का साधन कर राजा परलोकवासी हुआ।

पीछे समय के पश्चात् उपरोक्त नगरी में श्रीसीमंधरस्वामीजी महाराज पधारे। तीर्थंकर भगवान का आगम सुन कर राजा, उसके अन्तः पुर वासी और सम्पूर्ण नागरिक भगवान की वंदना और पर्युपासना के लिए गये। तप श्रवणार्थ आई हुई जनता व भूपति को श्री सीमंधर स्वामी ने धर्मोपदेश दिया, जिसमें "ज्ञान पञ्चमी" के महात्म्य का दिग्दर्शन कराया। उस में उदाहरण देकर आप ने फरमाया कि जिस प्रकार 'वरदत्त' राज कुमार ने उक्त तप की आराधना की उसी प्रकार आराधना कर अभ्यास अपूर्व ज्ञान के आराधक बनो। जिससे तुम्हें भी [illegible] प्राप्ति होगी। इस प्रकार

गी प्रभु के वचनामृत श्रवण कर सुरसेन राजा गेला कि हे प्रभो ! यह वरदत्त कौन और कहां का नेवासी था ? तब श्री सीमंधर स्वामी ने उक्त राज कुमार की पूर्व भव सम्बधी संपूर्ण जीवनी आदि से अन्त तक कह सुनाई । जिसके प्रभाव से बहुतोभवपीडित आत्माओं ने उक्त तप को धारण किया राजा को प्रति बोध हुआ और वैराग्योत्पन्न होगया। राजा गुरु वन्दन कर महलों में आया और स्वपुत्र को राज तिलक करके अन्तःपुर की सो सुंदरियों का तथा सम्पूर्ण रिद्धि का परित्याग कर उक्त श्री प्रभु के कर-कमल से दिक्षा- ग्रहण कर आत्मोन्नति के शुभ मार्ग में प्रवृत्त हुआ । दश हजार वर्ष राज ऋद्धि भोगी और एक हजार वर्ष शुद्ध चारित्र पालन किया । इस प्रकार ग्यारह हजार वर्ष की आयु भोगकर केवल-ज्ञान, केवल दर्शन प्राप्त कर सतत शिव-सुख को प्राप्त हुए।

"गुण मञ्जरी" का जीव भी वैजयन्त विमान से चवकर इसी जम्बू द्वीप के महा विदेह क्षेत्र और रमणीय विजय में महाशुभा नाम की नगरी में अमर सिंह राजा और अमरवती रानी की कुक्षि से पुत्र रूप में अवतरित हुआ । सुग्रीव उसका नाम संस्करण किया गया । क्रमशः राज

कुमार युवावस्था को प्राप्त हो गया। तब राजा ने पुत्र को राज तिलक देकर स्वयम् दीक्षा ग्रहण की। राज तिलक के पश्चात् राजा सुग्रीव ने सहस्रों राज, कन्याओं के साथ विवाह कर खूब आनंद भोगा पूर्व पुण्योदय से राजा का सद् गुरु समागम हुआ। और उपदेश श्रवण कर वैराग्य उत्पन्न होगया। संसार को असार समझ कर जेष्ठ पुत्र को राज, तिलक देकर स्वयं दीक्षा ग्रहण की। तप संयम की, आराधना कर चार घन घातिक कर्मों का नाश कर केवल ज्ञान और केवल दर्शन की प्राप्ति की। और केवल ज्ञान सहित एक लाख वर्ष तक पूर्ण चारित्र का पालन कर मोक्ष पधारे।

उप संहार—इसी प्रकार अन्य जो कोई भी भव भीरु आत्मा पूर्वोक्त तप अङ्गीकार कर विधि पूर्वक उसका पालन करेंगे। वह इस लोक व परलोक में सकल सुख सम्पत्ति तथा सौभाग्य प्राप्त करेंगे और अन्त में केवल ज्ञान, केवल दर्शन की प्राप्ति कर मोक्ष को प्राप्त होंगे। अतएव ज्ञान पञ्चमी का सतत आराधना करें!

ॐ सिद्धि सिद्धि मम दिसन्तु ।।

प्रसिद्ध कर्ता-सुज्ञ श्राविकाओंके नाम.

५ शिवलालजी श्रीश्रीमालकी धर्मपत्नी सौ. जडावबाई.

५ रतनलालजी रुणवालकी मातेश्वरी फूलीबाई.

५ लालचंदजी साढकी मातेश्वरी सोनीबाई.

५ लखीचंदजी कोटेचाकी भग्नि जडावबाई,

४ नथमलजी बोराकी मातेश्वरी सोनीबाई.

४ जसराजजी चतुरमूथाकी धर्मपत्नी सौ. जडावबाई.

२ हीरालालजी नायटाकी भग्नि-वधु, चंपाबाई.

२ भेरूलालजी मोदीकी मातेश्री फूलीबाई.

२ भींवराजजी बोगकी सुपुत्री हर्षाबाई

२ किसनलालजी कुचोरियाकी मातेश्वरी, गुलाबबाई.

२ गुलाबचंदजी चोपडाकी धर्मपत्नी तुलसाबाई

२ व्यंकटलालजी बोराकी धर्मपत्नी सौ. गबदीबाई

१ फूलचंदजी लूणवालकी धर्मपत्नी हरीबाई.

१ चुनीलालजी सिसोदियाकी धर्मपत्नी गोपीबाई

१ घेवरचंदजी दफतरीकी धर्मपत्नी गोटीबाई

१ दीपचंदजी लोढाकी धर्मपत्नी छोटीबाई.

१ माणकचंदजी कोचेटाकी धर्मपत्नी चंन्द्रीबाई.
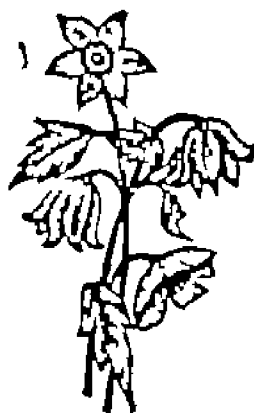
संतोष मुनि ग्रन्थमाला का १२ वाँ पुष्प

—वंदे वीरम्—

पूज्यपाद श्री रघुनाथजित्सूरीश्वरेभ्यो नमः

सती रत्नावती चरित्र

रचयिता

शान्तमूर्ति-मनोहर व्याख्यानी कविवर्य
मुनिमहाराज श्री १०८ श्री
मोतीलालजी महाराज।

प्रकाशक—

श्री जैन श्वे० स्था० जैनमुनि संतोष भंडार,
मु० सादड़ी (मारवाड़).

वीर सं० २४६१	प्रथमावृत्ति	विक्रम सं०
रघुनाथ सं. १४७	१०००	१९९१

भूतेश्वर प्रिंटिंग प्रेस, कटला बाजार जोधपुर।

भुजंग ने महाराज श्री के पैरको डस लिया। सर्प के डसने से मुनि श्री के शरीर में अत्यन्त वेदना उत्पन्न हुई मुंहसे झाग गिरने लगा पाव में सोजन आगई कचुनीत पडीमीत से रुधिर बहने लगा ऐसी स्थिति में जब सूर्योदय हुआ तब श्रावक श्राविकायें महाराज श्री के दर्शनार्थ आये और इस अघटित घटना को देख अत्यन्त चिन्तवी करके पीछे नगर में लेआये और अविलंब द क्टर महोदय श्री जोहरी साहबजी को बुलाया। डाक्टर महोदय श्री ने आतेही पैर में चीरा लगाकर दवाई भर दी किन्तु शरीर में विषका वेग अधिक होनेसे सहसा शान्ति नहीं मिलती, शनैः शनैः उपचार करने से ११ दिन के पश्चात् कुछ कुछ आरोग्यता हुई-श्रीमान् डाक्टर महोदयने अत्यन्त निपुणता से धीरे धीरे मुनि श्री के शरीर को वेदना का अच्छा उपचार किया जिसके लिये जालोर श्रीसंघ आपका आभारी है। डाक्टर महोदय के उपचार से महाराज श्री का शरीर आरोग्य होनेपर यह तपप्रधान सती रत्नावली का चरित्र मुनि श्री ने लिखा। जिस को देख हमने सोचा कि यदि यह चरित्र प्रेसांकित होजायेतो इससे अनेकों नर नारी आत्मिक लाभो पार्जन करसकते हैं बस इसी शुभ भावना को लेकर हमने इसे प्रेसांकित करवा आप श्री के कर कमलों में समर्पण किया है पतदर्थ आशा ही नहीं दृढ विश्वास है कि आत्मो न्नति के इच्छुक स्वधर्मी बन्धु इस छोटीसी पुस्तक को पढ अपनी शक्त्यनुसार तदनुरूप आचरण करेंगे किमधिकम्

भवदीय—

श्री० जै० श्वे० स्था० जैनमुनि सन्तोष ज्ञान भंडार

मु० भादराजी (मारवाड़)

॥ श्री गौतमाय नम ॥

अथ रत्नावती सती व्याख्यान लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

श्री वीर प्रभु शासन पति केरी, सेव करे मघवान ।
चरन कमल प्रणमुं सदा में, दीजो शिवपुर स्थान ॥ १ ॥
साचा सतगुरु सेवीयेरे, चाले खांड़ा धार ।
ममता मोह निवार के मुनि, करता पर उपकार ॥ २ ॥
प्रणमुं शारद मातकोरे, वचन सुदारस देह ।
गौतम गुण धारक नमुंरे, लब्दी पात्र सस नेंह ॥ ३ ॥
दीप मालिका की कथारे, सुनिये चित्त लगाय ।
आलस निन्द्रा टार श्रवण कर, पातिक दूर पुलाय ॥ ४ ॥
तप कर जीव उज्वल वनेरे, पोहछे मोक्ष मजार ।
रत्ना वती सती धर्म प्रभावे, सफल किया अवतार ॥ ५ ॥

ॐ

भूमिका

प्रिय पाठकवृन्द !

इस बातको विचारशील पुरुष भलीप्रकार जानतेही हैं कि मानव जीवन को सार्थक बनाने में तपके सदृश और कोई दूसरा साधन नहीं है, इस तप के प्रभावसे ही अष्ट कर्मों का नाश होता है, जीव निकलंक होकर मोक्षपद प्राप्त करसकता है। तप से अन धन रूपयश-महिमा बल आदि सभी श्रेष्ठ पदार्थ मिलते हैं। अल्प समयमें ही सती शिरो-मणि श्री रतनावती ने तप के प्रभाव से जो आनंद अनुभव किया था उसका सुचारु वर्णन इस पुस्तक में अंकित है। मन शास्त्रों के धुरंधर विद्वान् बाल ब्रह्मचारी शांतमूर्ति तपोधनी स्वर्गीय स्वामीजी महाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री संतोषचन्द्रजी महाराज के सुयोग्य शिष्य शान्तमूर्ति प्रवर्तक मुनि महाराज श्री श्री १०८ श्री धैर्यमलजी महाराज कविवर्य मनोहर व्याख्यानी मुनि महाराज श्री १०५ श्री मोतीलालजी महाराज विद्याप्रेमी मुनि श्री पुकराजजी महा-राज स्थाणे ३ से भव्यजीवों को सदुपदेश देते हुये सादड़ी मारवाड़ से विचरते, विचरते जालोर पधारे। आप श्री का चातुर्मास इस वर्ष भीनमाल के निकट ग्राम दासपा में श्रीसंघ के अति आग्रह से निश्चित होचुका था, अतः आप जालोर अधिक नहीं विराजसके + सिर्फ ४ दिन ही विराज कर आषाढ वदि ११ के दिन ५ बजे विहार करके नगर के बाहर जा ठहरे। आषाढ वदी द्वादशी के प्रात कालको अनुमान के ५ बजे मुनि महाराज श्री १०५ श्री मोतीलाल जी महाराज लघुनीत परठने को जाते थे कि अकस्मात् कृष्ण

भुजंग ने महाराज श्री के पैरको डस लिया। सर्प के डसने से मुनि श्री के शरीर में अत्यन्त वेदना उत्पन्न हुई मुंहसे खून गिरने लगा पास में सोजत आगई बहुनीत बड़ीनीत से रुधिर बहने लगा ऐसी स्थिति में जब सूर्योदय हुआ तब श्रावक श्राविकायें महाराज श्री के दर्शनार्थ आये और इस अघटित घटना को देख अत्यन्त विनती करके पीछे नगर में लेआये और अविलंब डाक्टर महोदय श्री कोठारी लालजी को बुलाया। डाक्टर महोदय श्री ने आतेही पैर में चीरा लगाकर दवाई भर दी किन्तु शरीर में विषका वेग अधिक होनेसे सहसा शान्ति नहीं मिलती शनैः शनैः उपचार करने से ११ दिन के पश्चात् कुछ कुछ आरोग्यता हुई-श्रीमान् डाक्टर महोदयने अत्यन्त निपुणता से धीरे धीरे मुनि श्री के शरीर की वेदना का अच्छा उपचार किया जिसके लिये भाखोर श्रीसंघ आपका आभारी है। डाक्टर महोदय के उपचार से महाराज श्री का शरीर आरोग्य होनेपर यह तपप्रधान सती रत्नावली का चरित्र मुनि श्री ने लिखा। जिस को देख हमने सोचा कि यदि यह चरित्र प्रेषाकित होजायेतो इससे अनेकों नर नारी धार्मिक कामो प्रारंभ करसकते हैं बस इसी शुभ भावना को लेकर हमने इसे प्रेषांकित करवा आप श्री के कर कमलों में समर्पन किया है एतदर्थ आशा ही नहीं दृढ विश्वास है कि आत्मो न्नति के इच्छुक स्वधर्मी बन्धु इस छोटीसी पुस्तक को पढ अपनी शक्त्यनुसार तपमुक्त आचरण करेंगे किम्बहुना।

भवदीय—

श्री० श्वे० म० स्था० जैनमुनि संतोष ज्ञान भंडार

मु० सादड़ी (मारवाड़)

॥ श्री गौतमाय नम ॥

अथ रत्नावती सती व्याख्यान लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

श्री वीर प्रभु शासन पति केरी, सेव करे मधवान ।
चरन कमल प्रणमुं सदा में, दीजो शिवपुर स्थान ॥ १ ॥
साचा सतगुरु सेवीयेरे, चाले खांड़ा धार ।
ममता मोह निवार के मुनि, करता पर उपकार ॥ २ ॥
प्रणमुं शारद मातकोरे, वचन सुदारस देह ।
गौतम गुण धारक नमुंरे, लब्दी पात्र सस नेंह ॥ ३ ॥
दीप मालिका की कथारे, सुनिये चित्त लगाय ।
आलस निन्द्रा टार श्रवण कर, पातिक दूर पुलाय ॥ ४ ॥
तप कर जीव उज्वल बनेरे, पोहछे मोक्ष मजार ।
रत्ना वती सती धर्म प्रभावे, सफल किया अवतार ॥ ५ ॥

॥ ढाल १ ली ॥

प्यार पोदरको दिन हुयरे लाल ॥ ए देशी ॥

जम्बु दीपना भरतमेंरे लाल, आरज देश मझार, सुखकारी र । मनोहर पुर रलियामणोरे लाल, चौरासी पाखार सु० ज० ॥ १ ॥ जितशत्रु नृप सोभतोरे लाल, दय दयालु गुनखान, सु० कमल प्रभा भारी कामनीरे लाल, पति भक्ता मृदु वान, सु० ज० ॥ २ ॥ विजाद्रिम पुर माहि शमेर लाल, सेठ सुदत्त धनवान सु० सुमित्रा नामे भार्यारे लाल प्रीत परस्पर मान, सु० ज० ॥ ३ ॥ धर्म ध्यान करतां कितोरे लाल, काल व्यतीतज थाय, सु० सुख सेज्या सुतां सयोरे लाल, चन्द्र सुपन सुख दाय, सु० ज० ॥ ४ ॥ सुमित्रा उदरे वसेरे लाल, पुन्य वत जीव उदार, सु० माता मन हर्षित थरे लाल, सुभ मुनि कारिहार सु० ज० ॥ ५ ॥ गर्भ स्थित पूरन थयारि, शुभवार सुरत अनोपम सोमतीरे, जनमें देव कुमार ॥ ६ ॥ हर्षित हो पितु मातजीरे । और सकल परिवार । याचक जनको दान दीये, फिर गावे मंगल चार ॥ ७ ॥

॥ ढाल २ जी ॥

॥ राग मार मॅ के ॥

महोत्सव कर पितु मातजीरे, अमर सेनदीये नाम ।

पच धाय पालि जतोरे, विलसे सुख अभिरामजी ॥ १ ॥ भवि भाग्य प्रमाणे मोजां माणे, जाणे सकल जहान ॥ ए टेर ॥ पंडित पामे कला अभ्यासे, विनयोद्यम धर प्यार। थोड़े समयमें वहोत्र कलाको, जानपनो लहे सारजी भवि ॥ २ ॥ पंडितजी ले कुँवर साथमें, आवे सेठ सदन्न। अमरसेन करजोड़ी पिताको, प्रणमें हरष वदन्नजी। भ० ॥ ३ ॥ देख कोमलता कुंवर तणीरे। पितुमन आनन्द थाय, योवन वय थई जान कुंवर की। व्याव करण चित चायजी। भ० ४। तिणहिज मनोहर पुर वसेरे। सेठ पुरंदर सार। तस घर रमणी है गज गमनी। प्रीतवती गुन धारजी। भ० ॥ ५ ॥ एकदिन प्रमदा सुख भर सूती। देखे सुपन रसाल। पुष्प सुगंधित पंच वरन की, माला दोय उदारजी। भ० ॥ ६ ॥ जागृतही पदमन प्रीतमको। विनवे शीस नमाय। द्वितिया ढाले मुनि मोतीलाल सुन। सेठजी हरष भरायजी। भ० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

सेठ पुरंदर कहे प्रिये, तुज कुक्षी अवतार।
पुन्यवंती इक बालिका, थास्ये अधिक उदार ॥ १ ॥
प्रमदा सुन हर्षित भई, जपे प्रमष्ठी जाप।
गरभ दोष टारत कर, दान पुन्य दिल साफ ॥ २ ॥

॥ ढाल ३ जी ॥

॥ छोटो लालच्यिया ए देशी ॥

गभा स्थित पूरन थयांरे । शुभ मुहुरत शुभ वार । भविषण सुनलीजो । कांई मनमी वासा रसाल भ० ॥ १ ॥ ए टेर ॥ विविध प्रकार महोत्सव कर के । रत्नावली दीयो नाम भ० ॥ २ ॥ महिलाकला चोसठ ग्रही । और नव तत्वादिक सार । भ० ॥ ३ ॥ सामायिक प्रति क्रमण करे । कांई चवदा नियम चितार । भ० ॥ ४ ॥ शील दया अटम धर्मी । और रात्री भोजन टार । भ० ॥ ५ ॥ पंच तिथी पाखीहार करे । कांई लीलोती परिहार । भ० ॥ ६ ॥ विविध कार्य करे धर्मठना । कांई रटे सदा नवकार भ० ॥ ७ ॥ हस्त वदन मृग नयनी वाम्ना । चाले चाल मराल भ० ॥ ८ ॥ मीष्ट वचन कोकिल सम जानो । उपजे हरखत धार भ० ॥ ९ ॥ अर्ध चन्द्रवत भाल विराजे । योवन वय हुंसियार । भ० ॥ १० ॥ मोतीलाल मुनि इनपर गावे । तृतिया ढाल मभार । भ० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

एक दिवस रतनावतीरे, आवी गुरणी पास ।
अमरसेन देखी सा सुंदरी, बस गई हिरदे खास ॥ १ ॥

मित्र भनी सब बात सुनादी, कही सेठको जाय ।
सगपन करवा गये पुरंदर, सेठ सदन हरषाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ४ थी ॥

॥ आवो जमाई पावणा जय वन्ताजी ए देशी ॥

आवो पधारो सेठजी । गुनवन्ताजी, मुजलायक कोई काम । वहो पुन्यवन्ताजी ॥ ए टेर ॥ सुद्धदत्त कहे सुणो सठजी । गु० पुरंदर घरप्यार । अहो गु० ॥ १ ॥ तुज तनया मुज पूत्रको, गु० दीजे प्रेम अपार । अ० ॥ २ ॥ जोडी सरिसी जान के गु० भरलीनो हुँकार । अ० ॥ ३ ॥ आरन कारन साचवी । गु० व्याव कियो सुविचार अ० ॥ ४ ॥ आनंद रंग वधामणा, गु० मगल गावे नार अ० ॥ ५ ॥ परन आई बाई सासरे गु० प्रणमे सासु चरणार । अ० ॥ ६ ॥ चाले कुल मर्यादमें । गु० मुक्ता मुनि कही ढ़ार अ० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

धर्मध्यान करतां थकांरे, स्वल्प दिनों के मांय ।
अशुभ कर्म परतापथीरे, लच्मी घरसे जाय ॥ १ ॥
लच्मी राखी नां रहैरे. पापोदय जब आय ।
पुन्य छतां पुन्य कीजियेरे, सुख संपती प्रगटाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ५ मी ॥

॥ देशी क्याफरी ॥

नातकी नारी स्थिर नही लषमी घर २ फिरती रहे ॥ ए टेर ॥ एक ठिकानें रहे न हर गम । नहिं एक घनीकी नारी । ऊंच नीच घर फिरे भटकती । सारी घात पुंनारीकी । ना० ॥ १ ॥ जिस्के है पुन्य घानी पोत । घोनर मोर्भा मांये । मिल पुन्यसे सीरनें खाजा । रानादिक सघामानेंकी । ना० ॥ २ ॥ सेठ तखी पुन्यघानी हलकी । श्राया घन सब आवे । सनेश्सने सब माल खजाना । गर्या सठ पचतावेकी । ना० ॥ ३ ॥ दासी दास लग सब रस्ते । गई दुकानां उठ । सजन सनेहि नहि पतलावे । आवे सबही स्ठकी । ना० ॥ ४ ॥ है मतलबकी धारी सारी । परतष जानने श्रानी । देखे तो पाछो हट जाव । नहिं पावे कोइ पानीकी । ना० ॥ ५ ॥ ऐसी हकीकत बनी सेठकी पुत्र पिता घबरावे । तिन विरियां हुवा बघु धीरपे । होन पदारथ बावेकी । ना० ॥ ६ ॥ विपत पड्यां से धर्म ध्यानकी । रखो आसता भारी । मोतीलाल मुनि धर्म प्रभावे । टेर आपदा सारीकी । ना० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

लोक बोरू करता फिरे, सेठ सुदत्तकी बात ।
पुत्र वधु मिली करकसार, रस्ते लागी आथ ॥ १ ॥
पुन्य हीण आवे जब घरमें, संपति नास कराय ।
देखो परतख अमर सेनकी, वधु आयां धनजाय ॥ २ ॥
सब जन कहे धिग २ यह नारी, जैनधर्म परसंग ।
दरीद्र पणो इन घरमें घाल्यो, बिगड़ गयो सबढंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल ६ ठी ॥

॥ मे[illegible]लामे बेठी हो राणी कमला वती ए देशी ॥

बाई रतनावती सुण चित चिन्तवे । कीधा पूरब भव पाप अघोर । अल्प समयमें धन जातो रयो, कर्म जोरावर दे जकजोर ॥ १ ॥ सांभलहो श्रोता सुख दुःख कीधोड़ा भुगते प्राणीया ॥ ए टेर ॥ म्हारी निन्दाको मुजको डर नही । धर्मनिन्दाको दुःख घटमांय । धर्मकरतां दुःख कोइ नविलहै । पूरब भव करनी कीधी लहाय । सांभलहो ॥ २ ॥ तिणहिज अवसर तिहां ज्ञानी गुर भला । विचरत पउधारे बाग मजार । आप तीरे पर तारक मुनिवरू, परउपकारी करे धर्म प्रचार । सां० ॥ ३ ॥ हय गय सेना लइ नरवर सज थई । जावे मुनि दर्शन करवा काज, श्रावक

भाविका आता देखनें, पूछे रतना सती दई भपाज । सां० ॥ ४ ॥ बोले श्रावक बाई आयो याग में । जैन मुनिजी गुन भंडार । सुनकर रतना सती चाली साथमें । वन्दे विधि पूर्वक मुनिवरधार । सां० ॥ ५ ॥ धर्म सुनावे मुनि मधुरी ध्वनी, शिवरे निश्चल चित श्री नवकार । तप जप करनी कर शिवपुर सुख लेई । जन्म जरा दुःख टारन हार । सां० ॥ ६ ॥ धर्म प्रभावे भाल उतर जावे । धारे तप अष्टम आनन्दकार । कर्म निकाचित इनसे सबटर गावे मुक्त मुनिवर कर प्यार । सां० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

अष्टम तप उत्तोकर, दीप मालिका दिन ।
मौनकरी इक आसनें, बैठे निश्चल मन ॥ १ ॥
देव विमायाँ नां कींगे, तोमन चौंकिय थाय ।
भगवित रिधसिध सुखसहे, अस महिमा प्रगटाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ७ मी ॥

॥ वैरी घुमर की ए ॥

सखी रतनावती धर्मधार्याई । बोले शीश नमाई देखो ॥ ए टेर ॥ सद्गुरु कृपालु हो उपकारी । तुम चरननकी

बलिहारी हेलो । आशा पूरन चिन्ता चूरन । आपद दूर निवारी हेलो । स० ॥ १ ॥ मुनिगुण गाई निजघर आई। सासु सुसर पाय लागी हेलो । मुनि दर्शन कर आनन्द ऊपनो । धर्म करन मती जागी हेलो । स० ॥ २ ॥ इम करतां बहु वासर बीता, धन तेरस दिन आवे हेलो । निजसिर कलंक मिटावन तांई । मतीकहे शुभ भावे हेलो। स० ॥ ३ ॥ अष्टम तप अब करणो म्हारे । अनुमती दो फुरमाई हेलो । सासु कहे वधु लघु वय थांरी । कोमल वय सुख दाई हेलो । स० ॥ ४ ॥ आप कृपासे आनन्द थासी । आपद दूर पुलासी हेलो । आग्या दीजे ढीलन कीजे । सुखसे वासर जाती हेलो । स० ॥ ५ ॥ सासु आग्याले धन तेरस दिन । मुख वस्त्रीका मुख धारी हेलो। यतना पूर्वक पचखे मुनि मुखसे । अष्टम तप चोवी हारी हेलो । स० ॥ ६ ॥ निजघर आई बैठी एकांते । दृढ़ासन सती ठाई हेलो । मन वच काया स्थिर कर शिवरे । नव-पद नवनिध थाई हेलो । स० । ॥ ७ ॥ धन्य बहु मनवस कर लीनो । तप तेलाको कीनो हेलो । बाला वस्था मांहे धारी प्रतिग्या, धर्म करन चित भीनो हेलो । स० ॥ ८ ॥ सासु विचारे अहो पुन्य वन्ती । बहु अरमुझे गुन खानी हेलो । मोतीलाल मुनि सप्तमी ढाले । गावे हरष मन आनी हेलो । स० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

साधु चिन्त धिग २ मुझको, धर्म कर्‌यो कछु नांय ।
खाने पीनेमें उमर बिताही, नरभव निकमो जाय ॥ १ ॥
वार अनन्ती भोजन कीम्या, मन तिरपत नहीं थाय ।
तप तेलाको करनो भाको, कर्मभरी टर जाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ८ मी ॥

॥ म्हारे हाथमें जोकर घाकी ॥ ए देशी ॥

सठांथी सेठी दिल भारी । तप लखो पठधीधारजी । करनो निमय एसी भावना । बस रही मनही मझारजी । से० ॥ १ ॥ नम्र भाव कर पूछे पद्मन । प्रीतमको घर आवजी । पुत्र पधु भष्टम तप कीनों, से तप करनका भावजी । से० ॥ २ ॥ सेठ कहे तप दुष्कर करनो, धर वीरका कामजी । धन्य पधु बालापन मांही । जपे जिनेश्वर नामजी । से० ॥ ३ ॥ इद अवस्था है अब थांरी । तपस्यामया किम भायजी । शक्ती होवेतो मना नहीं म्हारी । धर्मकरन के मांयजी । से० ॥ ४ ॥ भागयाले प्रीतमकी पद्मन । पोंहची बाग मझारजी । पनखाकर तप लखो पचखी । भाई निज घर द्वारजी । से० ॥ ५ ॥ मुन

वस्त्रीका मुख पर बांधी । आसन दीयो बिछायजी । पद्मासन धारन कर बैठी । निश्चल ध्यान लगायजी । से० ॥ ६ ॥ बहु अर ध्यान है जब तक म्हारे । ऊठणको है नेंमजी । मोतीलाल कहे अष्टमी ढाले । धर्मसे पूरन प्रेमजी । से० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

बहुअर पासे मासु शुभचित, जपे जाप नमुकार ।
सेठ विचारे धन्य २ यह, बेठी समता धार ॥ १ ॥
मुजको भी श्रेयकार तपस्या, करनी आछी बात ।
तीन दिवस में स्युं मरजावे, बाजी रखे जगतात ॥ २ ॥

॥ ढाल ९ मी ॥

॥ आनन्दका डंका भारतमें ॥ ए देशी ॥

जो धर्म करे निश्चल भावे, जिनका सब कारज सिध थावे, जिनका० दिन २ सुख संपति वढ़जावे ए टेर ॥ निजपुत्र भनी कहे तात जात । मुज दिलकी भावना सुनलीजे, तुज मात बहु तप धारन कर । बेठी समता रस सुख पावे । जो० ॥ १ ॥ मुजदिल तप तेला करनेका, फिर डरनहीं मुझको मरनेका । संग लेसुं खजाना सुकरत

का, घर काम तुझे सब संभलावे । जो० ॥ २ ॥ कहे पुत्र पितासे करजोरी । पितु वृद्ध अवस्था है तोरी । तप बेला का यह काम कठिन । सुनतेही दिल मुख घबरावे । जो० ॥ ३ ॥ कहे पिता पुत्र मत घबरावो । प्रभु शिवरनसें आनन्द पावो । इतनी कहकर गुरु पास गये, विधि पूर्वक अष्टम तप ठावे । जो० ॥ ४ ॥ निज सदन शीघ्र आकर बैठे । एकांत स्थान यतना करके । नव पदका ध्यान धर हरके । निश्चल चितसे प्रभु गुन गावे । जो० ॥ ५ ॥ या अमरसेन देखी रचना । धन्य मात तात शुभ काम कर । पतनी मुझ परमख धर्मधीरे । जिनराज काम सब सुधरावे । जो० ॥ ६ ॥ अष्टम तप मुझकोभी करना, दीवाली दिनतक सुखकारी । मुनि मोतीलाल मघसिंधु सिरि । तप करनी दुष्कर करवावे । जो० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

अमरसेन शिघ्रपग आयो, ज्यांरहे मुनि गिराज ।
हाथ जोड़ वंदन कर बोले, सारो मुझमन काज ॥ १ ॥
तप बेला मुझको पचखावो, उपकारी अणगार ।
करता देख मुनि पचखावे, तीन दिवस चोवीहार ॥ २ ॥

॥ ढाल १० मी ॥

॥ देशी हिडाकी छे ॥

अमरसेन आयो घर सीधो । बेठो पितापे जाईरे । पूर्व विधि मन दृढकर नवपद ध्यान लगाईरे ॥ १ ॥ तप परभावेरे ए मनुष देव हाजिर हो जावेरे । त० ए टेर । निश्चलमन वच काय करी । शुद्ध पंच प्रमेष्टी ध्यावेरे । भावे भावना च्यारु मनमें, जिन गुन गावेरे । तप० ॥ २ ॥ दिन तेरसको वीतो दूजो दिन चवदशको आयोरे । हले चले नहीं स्थिर मन प्रभु से प्रेम लगायोरे । तप० ॥ ३ ॥ कार्तिक वदी अमावस दिवसे । दीप मालिका आईरे । सब नर नारी मंगल गावे । घर२ मांईरे तप० ॥४॥ केइ धोले केई नीपे गुंपे । तसवीरां लटकावेरे । श्वेत नील राता पीला केइ, रंग लगावेरे । तप० ॥५॥ सेठ सदन घर एकही रचना, धवल मंगल कछु नांहीरे । बैठे समताधार वस्यो मन अरिहंत मांहीरे । तप० ॥ ६ ॥ धर्म तना फल मीठा जानो । मोतीलाल मुनि गावेरे । आतमका उद्धार होवे । जगसुयश बढ़ावेरे । तप० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

नागर जन दीपक कीयारे, द्वात कलम धर प्यार ।
पूजी लक्ष्मी देवी, गोर्यां गावे मंगलाचार ॥ १ ॥

हेमवत गिरी पर्वत वासी, लछमी देवी नाम ।
रूप कीयो कन्या तणोरे, आई नगरमें ताम ॥ २ ॥

॥ ढाल ११ मी ॥

॥ चेतो चोढोंमी मातानी पोली कांवरी ॥

थरि आवे चांद चातरु अपाररे चोढारे चमके गूघरा ए देशी । आतो देवी आई दीवालीरी रातमें । आतो सजकर सोले सिनगाररे । देवीरे पगतल गूघरा । आतो रतन जड़ित पग मोचड़ी । आतो नेंवरीयांको चाले रणकाररे । देवी० ॥ १ ॥ देवी पेरया साड़ु चद चोरखा । ओतो कड़ीयें कणदोरो सोवन साररे । दे० ओतो हार हीयाबीच फाबतो । ओतो रतन चुड़ीरो रणकाररे । दे० ॥ २ ॥ ओतो कानां झुटना झिग मिग करे । नकवेसर नाक भमाररे । दे० ओतो सीस फूल रवी जेवसो । सोमे अर्धचन्द्र चव मालरे । दे० ॥ ३ ॥ आतो रखड़ी है रतन जड़ावरी । आतो सीस सींदी भड़ीकाररे । दे० ओतो नील वरण पेरयो कांचुवो । ओतो मड़ीया हीरा मोती लालरे । दे० ॥ ४ ॥ आतो ओढ्या सिरपर चूंदड़ी । दीसे सरव सो मलकाररे । देवीरी चमके चूंदड़ी । देवी विविध प्रकारे वस्त्राभूषणे सोमे पंच वरण फूलमालरे ।

दे० ॥ ५ ॥ महा लच्मी मनोहर पुरमांही । आतो फिर रही घर २ द्वाररे । दे० देवी आई देव्यांरा परी वारसुं । वाजा वाज रया भणकाररे । देवी० ॥ ६ ॥ अतो पूरब पुन्य पूरन कीया । आतो जिन घर देवी जासी दोररे । देवी० कहे मोतीलाल मुनि इनपरे । गावे जोड़ी गढ़ जालोररे । देवीरी चमके चूंदड़ी ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

लच्मी देवी फिरे घरोघर, बास गली बाजार ।
दीपग जिगमिग करता दीठा, नृत्यगीत अनपार ॥ १ ॥
दीपक उघाड़ा जंलरे, जीव पड़े केइ आय ।
विन उपियोगे बरततारे, जीवकी यतना न्हांय ॥ २ ॥

॥ ढाल १२ मी ॥

॥ सीवपुर नगर सुहामणो ॥ ए देशी ॥

देवीरे फिर २ जोरही, जीवहिंसाको दोष । सुग्यानी देवीरे घट करुणा वसी, समदृष्टी गुण पोष । सु० दे० ॥ १ ॥ एसोरे कोइ देख्यो नहीं, जीवदया प्रतिपाल । सु० सेठ सुदत्त घर देखनें । देवी थई खुसियाल । सु०

दे० ॥ २ ॥ इस घर दीपक किमनहीं, इसी ज्ञान लगाय। सु० यह ध्यान पुन्यवंत जीवहै। धर्म ध्यान शुध ध्याय। सु० दे० ॥ ३ ॥ द्वार उघाड देवी आइ। सठ सदनमें घाल। सु० हरखाई देखन सेठजी। देवी कह उजमाल। सु० दे० ॥ ४ ॥ ध्यान धर्यो किन कारणे क्यु धरि मनमांय। सु० भूख प्यास दुःख किम सहो। कारन हो बतलाय सु० दे० ॥ ५ ॥ महा लक्ष्मी मुझ नाम है। वांछित पूरन हार। सु० जोमन चाहसो मांगलो। संका दूर निवार सु० दे० ॥ ६ ॥ देवी वचन सुण सेठजी, हरखाइ दिल धार। सु० पुत्र बिन बोल नहीं। जबलग मौन विचार। सु० ॥ ७ ॥ काम पड्यां कायम रहे जिण घर मंगल माल। सु० ॥८॥ मोतीलाल मुनि इमकहै, ए भई चारमी ढाल। सु० दे० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

रत्नावती करे कल्पनार, रखे सुसर डिगजाय।
सासन रक्षक देव मुझे अब, करजो धर्म सहाय ॥ १ ॥
हरखाई मुख दमकीरे, देखी देवी ओर।
मन २ कहती वा भाई, अमरसेनकी ओर ॥ २ ॥

॥ ढाल १३ मी ॥

॥ ईडर आंवा आंबलीरे ॥ ए देशी ॥

कंवर भणी देवी कहेरे । क्याइन धर्म मनार । क्यों विरथा भूखे मेरेरे । बोल २ इणवार ॥ १ ॥ सुगणनर जैन धर्म जगसार ॥ ए टेर ॥ पिता साहब बोले नहीरे । जबलग मुजको नेंम । मौन धरी मनमें रयोरे, पूरन धर्मसे प्रेम । सु० ॥ २ ॥ देवी दिल हरषित थईरे आवे सेठाणी पास, करी परीक्षा दृढरहीरे । थइ मन देवी हुल्लास । सु० ॥ ३ ॥ रतना वती सतीको कहेरे । पाखंड धर्म निवार । ओर धरम दिल धारलेरे । सफल होवे अवतार । सु० ॥ ४ ॥ मिथ्या हटको छोड़देरे । जो तुज जीवन चाय, बहुत कहा सती दृढरहीरे । देवी परसन थाय । सु० ॥ ५ । अवधी ज्ञानसे देखलीरे । हैंसती निश्चल मन्न । धर्मरुच्यो इणने खरोरे । मात पिता कुल धन्न । सु० ॥ ६ ॥ महालक्ष्मी सती पग पडीरे । रिमाझिम करती आय । मोतीलाल मुनिइम कहेरे । धर्मीनर सुख पाय । सु० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

दिव्यरूप धारन करीरे, वस्त्राभर्ण सुहाय ।
सेचन्नण घरमें थयोरे, त्रिदशी बचन सुनाय ॥ १ ॥

धर्म प्रसादे सती सुमारे, फली मनोरथ माल ।
मन मनरिप सुख संपदारे, चिन्ता दो सब टार ॥ २ ॥

॥ ढाल १४ मी ॥

॥ पीरा हुँवो कुँवो होय भाईओ । ए देशी ॥

देखो भाई बिगर दुखाई । देखो रतनावती दखाणजी दे० ए टेर ॥ दुवो रतन उजासो भारी । बिन दीपक सुचन मझारीजी । दे० ॥ १ ॥ केइ श्याम नील कर राता, पीला अरुश्वेत दिखातांजी । दे० ॥ २ ॥ केइ योजन तक यो जाय रतनाको प्रकाश दिखावेजी । दे० ॥ ३ ॥ देखो भाग्य दशा अब जागी । प्यारु जैन धर्म अनुरागीजी । दे० ॥ ४ ॥ केइ आता जाता देखे, नरनारी अचिरज पेखेजी । दे० ॥ ५ ॥ देखो इन घर रचना काई । क्या सुपन आवे मुज तांईजी दे० ॥ ६ ॥ नहीं सुपन बात सही साची । अरुपम दीखे नहीं काचीजी । दे० ॥७॥ मुनि मोतीलाल इमगावे । भोगा सुख धर्म बढ़ावेजी । देखो० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

हार बड़या किन कारणे, क्याइव रचना भाय ।
देखो अंदर जायके, भ्रांती सब मिट जाय ॥ १ ॥

पाडोसी घरमें गये, सेठ घरां तत्काल ।
द्वार खोल देखे तदा, तेज रवी सम भाल ॥ २ ॥

॥ ढाल १५ मी ॥

॥ देशी चाल गुघर वालेकी ॥

इन घरकी रचना भारीरे । क्या होगई रात मजारी
क्या होगइ रात मजारी नहीं देखे उमर धारी । इन ए टेर ॥
क्यारूं मौन व्रत कर बैठे । जिन शिवरनमें रहे सेंठे ।
क्या लच्मी घरमें पेठेरे । प्रभुताका मेहन पारी । इन०
॥ १ ॥ दीवाल दिखे सोनेंकी, मणी माणिक मोती
विशेखी, हिरे पन्ने रत्न अपारारे । निशा चमकत नभ
ग्रहचारी इन० ॥ २ ॥ रखे चोरी चोर कर जावे । अपनें
सिर कलंकन आवे । चल महिपतको सुनवावेरे । इम
मिसलत करत अपारी । इन० ॥ ३ ॥ जा कोटवाल के
तांई । दी सारी बात सुनाई । सुन नगर गुप्त कमधज-
कोरे । कहि बात सकल विस्तारी । इन० ॥ ४ ॥ महिलां
चढ़ महिपत जोवे । किम बात असंभव होवे । देख्यांसे
मनड़ो मोवेरे । नहीं मनुष्यांकी इतवारी, इन० ॥ ५ ॥
मुनि मोतीलाल इम गावे । धरमी नर आनन्द पावे ।
अन धन लच्मी घर आवेरे, देवे सब आपद टारी ।
इन० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

नृपती नजर पसारके, देखे रत्न उद्योत ।
रानीसा आयो इत दखो, क्या दीपक की जोत ॥ १ ॥

॥ ढाल १६ मी ॥

॥ श्री महावीर पोहता निरवाणी ए देशी ॥

आज दीवाली है उजवाली, क्या रंगत दखो इनवारी। आ० ए टेर ॥ रात अमावस की कही कारी । पूर्णिमा रात्री सम तुम भारी । वीर प्रभु गया मोक्ष मुजारी । गौतम केवल ज्ञान लपारी आ० ॥ १ ॥ इन कारनसे उत्तम वानो । रात दीवालीको रातनखासो । शील पालो भूला मदप गालो । जीवदया रख जीव भचालो ॥ आज ॥ २ ॥ मनुष्य जनमका सार यही है । काम पड्यासे कायम रहीय । मद्दिपत ऐसी भावना भावे । शुभमन पंच प्रमेष्टी ध्यावे । आ० ॥ ३ ॥ इनहिज नगरे धरमी नर कोइ । पूरब पुन्य उजासो होइ । जन्म कृतारथ होसी म्हारो । दर्शन दीठे आनन्द कारो । आ० ॥ ४ ॥ सीख गही आये हरख विशेख । रतन झिगामिग जोती पेखे । म्हो इन घरमें लिछमीको वासो । घमकरे पूरे देवत आसो । आ० ॥ ५ ॥ कहे नृपती सुनो सेठजी तुमघर । हो गया

आनंद रंग हरषधर । मौनज खोलो मुखड़े बोलो । साचो धरम धारयो रतन अमोलो । आ० ॥ ६ ॥ करी प्रतिज्ञा सेठजी भारी । निश्चल जाप जपे जयकारी । मोतीलाल मुनि इन पर गावे । धरमीनर सुख सम्पती पावे । आज० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

देख दृढासन मठको, नृप मन करत विचार ।
यह क्यारु बोल नहीं, बैठे व्रत मजार ॥ १ ॥
धनरुख वारन कारणेरे, पेहरा लगावे भूप ।
कोटवाल उमराव महिपत, वात करे धर चूंप ॥ २ ॥

॥ ढाल १७ मी ॥

॥ हांरे आवे नगर मजार । ए देशी ॥

हांरे सेठ पुन्य अतिजोर । दोर महिपत आवे । हांरे बैठे ढोल्यो द्वार । प्यार धर बतलावे ॥ १ ॥ हांरे देखो धर्म पसाय । सेठ घर रंग रलियां । हांरे देवी प्रगटी आज । काजसबही फलियां ॥ २ ॥ इम बीती सारी रात । प्रात भय जन आवे । हांरे सुनकर नवली बात । सतीका गुन गावे ॥ ३ ॥ हांरे सेठ बधु पुन्यवान । धर्म

कर हुलसावे । हरि अष्टमतप परताप । कलक सती मिट जावे ॥ ४ ॥ सती पारे पोषधजाम । सासु दिल हरषावे । हरि प्रगट गुने नमुकार । ससीनें जतलावे ॥ ५ ॥ सती फली मनोरथ माल । थई निरदोष सही । हरि पूर्व कथित विधिसेठ । पुत्रदिल हरष भई ॥ ६ ॥ च्यारुं उठे पोषध पार । त्यार सब दिलसावे । मुनि मोतीलाल घर प्यार धर्मकर धन पावे ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

सती रतनावती धनसुख उभी, महासधमी कर ओर ।
बोले नहीं कोइ दीसे जगमें, करे हुमारी होर ॥ १ ॥
धन्यसती सुवे जैन धर्मको, जीव दया प्रतिपाल ।
अष्टम तप परभावथीरे । वरस्या जय १ कार ॥ २ ॥

॥ ढाल १८ मी ॥

॥ माथी थारो भाउजो लुटांमें सांपोको मईरि ॥ ए देशी ॥

सेठ सेठानी निश्चय आंणीयोरे । श्रीजिन धर्मतने परतापरे । सपमी दवी आई घर आंगणोरे । जपतां सुभ पंच प्रमेटी जापरे ॥ १ ॥ सुनिजो मवी भाव धरी जिन धर्मसेरे । राखोथे पूरन दिलमें प्रेमरे । सु० ॥ ए टेर ॥

अथवा मुज पुत्र वधूके पुन्यथीरे । सरुतरु फलिया परतच्च आयरे । अवतो नहीं कमी रहीं कोइ बातरीरे । सुदत्त हर्षा हिये न समायरे । सु० ॥ २ ॥ विनय करी रतनावती वीनवेरे । जावो सुसराजी नरपत पासरे । सुनकर लेइ अमोलक भेटणोरे । आयो घर बाहिर सेठ हुलासरे । सु० ॥ ३ ॥ मुजरोकर सनमुख मेल्यो भेटणोरे । बोले अहो भाग्य पधारया राजरे । मम मनोरथ पूरन साहिबारे फरमावो किरपाकर कोइ काजरे । सु० ॥ ४ ॥ बोले वसुधा पती सेठजी आपकोरे । अहो २ पुन्य प्रबल दिख लायरे । लक्ष्मी देवी दीवाली रातमेरे । रिमझिम करती घरमे आयरे । सु० ॥ ५ ॥ सुदत्त सेठ कहे नर राजवीरे । यो तुज पुत्र वधु परतापरे । नृपती सुन रतनावती बुल वायकेरे । चीर ओढायो बेनड स्थापरे । सु० ॥ ६ ॥ हुई परसंसा सारा सहरमेरे । बोले धन २ पुन्य वंती नाररे । संकट पड़ियां धर्मन छोड़ीयोरे । ए थई अष्टा दशमी ढालरे । सु० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

नगर सेठकी पदवी महिपत, सुदत्त सेठको देह ।
राजभुवन विच आय विराजे, नृपती हरष धरेह ॥ १ ॥

मांड करी महा राणीजीको, धीतक पिछली बात ।
महाराणी कहे हरप घरीन, मनसधी मातरु तात ॥ २ ॥

॥ ढाल १६ मी ॥

। मानम्ह रग बरसायो मेंठो देव समा हुलसाया । ए देशी ।

महाराणीजी हरप अपारो, आवे सुदरा सदन मझारो ए टेर ॥ नृप आग्यासे गुन खांणी, महाडोल चढे महा राणी । सखा भर्य सवी सिनगारो । महा० ॥ १ ॥ आगल मयगल मलपत चाल । हय हिंसारव कर हाले । पग झांझरको ठमकारो । म० ॥ २ ॥ रणकार करत रथ सावे, बाजा वाजत मंगल गावे । साथे दास दासी परिवारो । म० ॥ ३ ॥ नागर जन देखन दोड । महा राणीजी आवे कोड । पूछे आपसमें नरनारो । म० ॥४॥ मिलवा रत्नावती सवी तांई । आवे सुदरा घर हुलसाई । देखो धर्म धीरो सविचारो । म० ॥ ५ ॥ पाई पुन्य मन्ती पाई । महा लछमी रातको आई । मरिपा अन मनसें भेंडारो । ॥ ६ ॥ नप वेढाके परतापो । सुदराणीजी ओप आपो । गावे मोतीलाल अणगारो । म० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

महा राणीजी आता सुनकर, सेठ सुदत्त हरपाय ।
करी विज्ञायत रंग भवनमें, स्वागत बहुत कराय ॥ १ ॥
सेठानी ओर पुत्र वधु मिल, आदर दीध अपार ।
असन पान खाद्यम ओर साद्यम, जीमाया धर प्यार ॥ २ ॥

॥ ढाल २० मी ॥

॥ हांक मतकर गर्व दीवाना । ए देशी ॥

हाँ सती गुन गावो भाई। मानूवत प्रगटी कुल मांई। धन्य सती अवतार बोले महाराणी आईरे। स० ॥ १ ॥ ए टेर ॥ निश्चल चित तप तेला कीना जिनसें मन वाँछित फल लीना, कलंक मिटा सती धर्म प्रतापे आनन्द थाईरे। स० ॥ २ ॥ महाराणी मिल मेहलां जावे। सती रतनावती शुभचित भावे। जप जिनेश्वर जाप साफ दिल हरप भराईरे। स० ॥ ३ ॥ कर सामायिक नेम प्रेमें धर। रखे आसता जिन वँचना पर। करे आंबिल उपवास सती दृढ़ आसन ठाईरे। स० ॥ ४ ॥ सेठ सेठानी शुभचित भावे। वीर प्रभुके नित गुन गावे। ध्यावे देव अर्हंत सेव सद्गुरु चित ल्याईरे। स० ॥५॥ मरता बचावे अनाथजो आवे। खान पानदे वस्त्र पेनावे। खरचे धन अनपार ज्ञान पुस्तकके मांईरे। स० ॥ ६ ॥ दिनें दीवाली तेलो करतां

वीर प्रभुको ध्यान जो धरतो । कहे मुनि सुखानन्द फन्द कर्मोके हर्टाइर । स० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

पती महा रत्नावती, विलसत सुख संसार ।
शुभ सुपने एक पुत्रका, जन्म भया शुभवार ॥ १ ॥
जन्मोत्सव कर विविध प्रकार, नाम दीये पुन्य पाल ।
मध चन्द्र वत भाल विराजे, देव कुँवर उनिहार ॥ २ ॥
पुरुष कला परवीण कुँवरजी, योवन वय हुंसियार ।
शुभ लगन पुन्यवंती बाला, परणावे धर प्यार ॥ ३ ॥

॥ ढाल २१ मी ॥

॥ म्हारा सहरमें थारें जोगीसर भाया । ए देशी ॥

तिण अवसर मुनिराज पधारे । गुण सुन्दर गुण दरीयारेलो । मति श्रुत विमल ज्ञान दिवाकर । मिथ्या अधार मिटावरेलो ॥ १ ॥ धन्य सुगुरु सत्य परउपकारी । पंच महाव्रत धारीरेलो । धन्य० ए टेर ॥ महिपति मुनि आगमन सुणीनें । हर्षितहो मनधारीरेलो । सैन्य सजाई राजा रानी । आये बाग मझारीरेलो । धन्य० ॥ २ ॥ सेठ सेठानी पुत्र बहु फिर । नागर जन मन धारारेलो । विधि पूर्वक मुनिवन्दन करके । बैठे सनमुख सारारेलो । धन्य० ॥ ३ ॥ अधिर जगत सुपना सम माखे । मातपिता

परिवारोरेलो। सब संग छोड़ी परभव जासी। पुन्य पाप बेहु लारोरेलो। धन्य०॥ ४॥ नरतन पायो पुन्य सवायो। करणी धरमकी कीजोरेलो। परोपकार भलाई करके, लाह्वो धर्मको लीजेरेलो। धन्य ॥ ५॥ सुणि उपदेश राजा राणी। सुदत्त सेठ सेठाणीरेलो। अमरसेन सती रत्नावती दृढ़। वैराग दिलमें आंखीरेलो। धन्य० ॥ ६॥ पुत्र भणी घर सुपरत करनें। मुनि संग महाव्रत लीनारेलो। खटकायां प्रति पार मुनीजी, जन्म मरनसें चीनारेलो। धन्य०॥ ७॥ करणी उत्तम कर संयम पाली। स्वर्ग गती सुख पायारेलो, जन्माँतर मोक्ष सिधासी, आवा गमनको मिटायारेलो। धन्य०॥ ८॥ दिन दीवाली महातम तेलो, मन चंचल स्थिर करसीरेलो। वीर प्रभु का ध्यान जो धरसी। तेशिवपुर सुख वरसीरेलो। धन्य० ॥ ९॥ संप्रदाय पूज्य रघुपति केरी। वसुधामें भई ज्हारी-रेलो। संतोप चन्द्र मुनि शिष्य परंपर। धैर्यमाल सुख कारीरेलो। धन्य०॥ १०॥ मोतीलाल मुनि जोड़ सुनावे। इकवीस ढाल बनाईरेलो, मुनि नारायण चन्द्र कथनसें। गढ जालोर के मांईरेलो। धन्य०॥ ११॥ नुन्याधिक हो दच्च सुधारी। वांचो गुरुगम धारीरेलो। उन्नीस साल नीवे नव ठांणे। माघ शुकल शुभवारीरेलो। धन्य ॥ १२॥

॥ कलश लिख्यते ॥

शुद्ध चरित्र पाली दोष टाली मोक्ष धाम सिधावसी ।
अष्टम तप परभाव देखो, शाश्वता सुख पावसी ॥ १ ॥

सती साहस धारी भवभारी, एकासन व्रत आदरी ।
भावना शुभ भवराखी देवता सानिध करी ॥ २ ॥

एह कथा सुन रसिक श्रोता, भावधर दिलमें धरो ।
पाप टारो धर्म धारो, तपकरनी उज्वल करो ॥ ३ ॥

है आत्मका उधार तपथप । भावना साची करो ।
मुनि मोतीलाल आनन्द दिलधर, वेग भव सिन्धु तिरो ॥४॥

॥ इत्योम् ॥ शान्ति ॥ शान्ति ॥ शान्ति ॥

पुस्तक मिलने का पता—

श्री जैन श्वे० स्था० जैनमुनि सतोष भडार,

मु० सादडी (मारवाड)

रचयिता—

प्रसिद्ध वक्ता पंडित मुनि श्री
चौथमलजी महाराज

सीता वनवास दिग्दर्शन

प्रकाशक—

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति
रतलाम.

चतुर्थावृत्ति
२०००

मूल्य)।।।

वीराब्द २४५९
संवत् १९९०

॥ ॐ ॥

सीता वनवास-दिग्दर्शन.

—×—
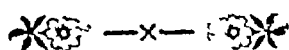
तर्ज.—गजरल इमरजी कहतो हंसकर बोलना ए ।

सीता है सतवती नार, सदा गुण गावना रे । तस्य शील तणे परताप, फली मन भावना रे ॥ टेर ॥ लंका जीतीने रघुनाथ । लेकर सीताजीको साथ । हनुमत, सुग्रीव, लच्मण भ्रात । आये अयोध्या के माय; हुवा रंग वधावनारे ॥ १ ॥ एक दिन सीता सेज मुझार । रैन में सुपना लिया उदार । युग अष्टापद अति सुखकार । जागत प्रेम मगन हो, गजपति पिउपै आवना रे ॥ २ ॥ विनय सहित जोडे दोऊ पाणी । सुपना दर्शाया मृदुवाणी । कहे श्रीरामचंद्र हित आणी । पुत्र दो होसी सुंदर थारे, वंशवधावना रे ॥ ३ ॥ आई मनहर ऋतू वसंत । वन में तरुवर रम्य फलंत । कोकिल मोर सुशब्द करत । खेलन फाग बागमें नवरंग, होज भरावनारे ॥४॥ काली घटा चढी अति भारी । फुआरा छुटरया सुखकारी, हिल मिल खेलत है नरनारी । तिण अवसर सीताका दाहिन, नयन चलावना रे ॥ ५ ॥ सियाकी कंपन लागी काया । हा ! फिर कैसा संकट आया । छाती भरी नयन जल छाया । पहले क्या थोडा दुख सहन, किया वनवासनारे ॥ ६ ॥

रघुपति जीतक्य धैर्य बधाय । हे प्रिय प्यारी मत मुरझावे । निमम धरम से दुख बिरलावे । होगा वैसा होवनहार, करम फल पावनारे ॥ ७ ॥ रज निष्कलन श्रीरघुराय । सीताका अति मान बढ़ाया । घर घर यश कीर्तन फैलाया । जनककुमारी सति पति भक्ति रूप मनावनारे ॥ ८ ॥ महिमा सीताजी की वस । सोकों भारमा अधिको दस । जाहिर होगई सीता एक । ऐसी करके कोई तमशीज, मान उतारनारे ॥ ९ ॥ सांपन सूसी शस्तर घाव । तीक्ष्ण दावानल को ताव । तासे अधिको सोक स्वभाव । प्रीति जोड़ फजीती करके फिर टन जावनारे ॥ १० ॥ कैसा पत्थर का पांव । सीता लिख दिया सरल स्वभाव । लागो सोकांको अब दाव । हास्यो भंश नगरमें घर घर, बात उडावनारे ॥ ११ ॥ रघुवरजी को चरणा दिखाया । सीता का यह कर्म बताया । प्रति दिन पूरे कलंक लगाया । पगगाह भांति रामक चित सः प्रेम हटावनारे ॥ १२ ॥ पुरमें बसे सात अधिकारी । प्रभु पै चल आय तियवारी । मुख नहिं निकसे बात लगारी । घर घर घूमन लागा रामजभी, बतलावनारे ॥१३॥ कहो किस कारण आये भाइ । कैसा हाल नगर क माही । निमय हाके दा दरयाई । क्या तुमें दरद लागा दुखदाई क्यों कपावनार ॥ १४ ॥ कहें तो क्या समझेंगे आप । नहिं कहें स्वामी द्रोहका पाप । दुई मह जैसे छछुंदरि सांप । सीता माताका अपवाद सुणो चित लावनारे ॥ १५ ॥ दो कर जोड़ अधोमुख हाकर । भाखी बात चली सो घर घर ।

क्यों नहीं खाव मिले फल सुन्दर । मधुकर विन लीधे किम रहत, फूल की वासना रे ॥ १६ ॥ पखणी देख पखी पडे जैसे ! लपट नरने नारी ऐसे । जो मिले भोगे विन रहे कैसे । सीता रावण के घर रहकर; किम वच आवनारे ॥ १७ ॥ रावण मोह्यो सीता जोई । लेगयो तिणवेला नहीं कोई । मारग में थे पिण वे दोई । जाणे कौन हुई क्या वात, लोक सभावनारे ॥ १८ ॥ सीता अपयश भाजन पूर । तो पिण रखली राम हुजूर । राग रत्तामें अवगुण दूर । मोटा वासण जो अवढाय, छोत नहीं जानना रे ॥ १९ ॥ निंदा कररहेलोक अनेक । सुणता पडे श्रवण में छेक। सीता हुई के ना हुई एक । हिरदे सोच विवेक विचार, कुयश मिटावनारे ॥ २० ॥ सनातन सूर्यवंश वडेभाग । आज तक लगा न कोई दाग । कीरती फैल रही अथाग । क्यों हुवे इण कुल में यह कर्म, प्रभु पत राखनारे ॥ २१ ॥ ऐसी सुण पुरजन की वाण । लागा रोम रोम में वाण । अव किम करुं होय घर हाण । जो रहे ढग उधरका विगडे, लौकिक लाजनारे ॥ २२ ॥ रामजी निशी शहर में जावे । सीता अपयश अति सुण पावे । अयोध्या सारी शोर मचावे । पूरण परचा रजक मुख, सुणकर आवनारे ॥ २३ ॥ कोपातुर होय राम कहे खास । दूंगा सीताको वनवास । सुण के लक्ष्मण करे अरदास । नहीं भावज में दोष लिगार, प्रभु विचारनारे ॥ २४ ॥ मेरु चले, नीर तरे पत्थर । अगनी शीतल, पश्चिम दिनकर । शशि अगार झरे, अमि अहिवर ।

हो पया सीख शियल न खाहे, निश्चय आननारे ॥ २५ ॥ निर्दंधी जीव सप्ता निस्तारा । भया पुरुष लेख सग सारा, सागर पार तभे फेरा पारा । सीख शील कभू नहीं भोम, कोप निवारना रे ॥ २६ ॥ जग में ऐसी नार न दूजी । निश्चल शीलवती जिम पुजी । प्रभुजी यह तुमने क्या सूझी । सीता है निर्दोषी नाहक मती सतावनारे ॥ २७ ॥ उस दिन राजभोग तज छिन में । प्रभु सग सती सिधाई वनमें । क्या थी कसर पतिव्रत पन में । वैसा सकट तुम सग सहन किया सो चितारनारे ॥ २८ ॥ वडकवन में पड़ा वियोग । मरगये मानुष जैसा सोग । सो दिन उठरगये उपयोग । सुनके सोक वचन को सीता, भाव निकालनारे ॥ २९ ॥ घरघर मवन सोक कहावे । इनकी कथनी चित न लावे । नयनां आंसू भरभर आवे । मेरी तनिक अरज हिय धार, धैर्य धरावनारे ॥ ३० ॥ सीता गर्भवती सुखमाल । पूरण अष्टमास का काल । कैसे या इसे बाहर निकाल । वनमें किम आवेगी समधर, जैसी मातनारे ॥ ३१ ॥ प्रभुजी कहे भनुज से वान । भव तू फिर मत बोल वयान । लक्ष्मण हुआ अधिक हैरान । मोटा भाई बाप समान; करें किम सामनारे ॥ ३२ ॥ सुग्रीव कहे जोड़ी दोउ हाथ । निर्मल कचन सीता मात । क्या कही रामजटी ने बात । आकर कहती भाती या न ध्यान रघुनाथनारे ॥ ३३ ॥ वीर कहे वचन सुणो अनुचर के । । जिस दिन रावण लेगयो हर के । सीता नियम लसन रघुवर के । राम कुशल की खबर

मिले तब अन्न जल खावनारे ॥ ३४ ॥ जब मै देखी लंक उद्यान रोती, होती अधिक हेरान । मुद्री देख सुणी मुख बात, हर्षित होगई दिन इकवीस, तणा किया पारनारे ॥ ३५ ॥ विभीषण कहेयू होके दीन । मै भरुं साक्षी करे यकीन । रावण घररही धर्माधीन, उलटे मुख हो करती बात, देदे धुतकारनारे॥ ३६ ॥ रावण भेजी मंदोदरि ताई । जिनको दूति कही दवाई । दशानन साथे करी लडाई । फिट फिट फिट फिटकार लगा इन मुख दिल लावनारे ॥ ३७ ॥ चोर निशाचर और अन्याई, बनसे लायो मुझे चुराई । क्षत्रीपन के मसी लगाई । धिक् इस प्रार्थना से श्रेष्ठ, तुझे मरजावनारे ॥ ३८ ॥ मूर्ख गिरी से सिर टकराया । सर्प टिपारे हाथ चलाया । शस्त्र उलट पकड सुख चहाया । काल नजर तुझे देखू क्यों मुझ, जीव जलावनारे ॥ ३९ ॥ आवे इद्र स्वर्ग से चाल । उनकी भी नहीं चले मजाल । तो तू किस गिनती मे स्याल । जो तू सुख चाहे तो प्रभु पै, वेग पठावनारे ॥ ४० ॥ केशरीसिंह मूछ का बाल । अहिवर सिर की मणी रसाल । वीर शरणागत कृपण माल । सती पयोधर इतना जीवित, हाथ न आवनारे ॥ ४१ ॥ जो तू लाता स्वयम्वर जीत । यह थी राजन कुल की रीत । इस दुष्कृत से होगा फजीत । गई तेरी पुण्यवानी वीत, प्राण हैं पाहुनारे ॥ ४२ ॥ तुझ घर सहस्र अठारा राणी । तो फिर मुझे उठाकर आणी । पीलण तेज पुज तिल घाणी । सपद तरुवर छेदन काज, कुल्हाडी लावनारे ॥ ४३ ॥ दशसिर काटन कैंची जान । लंक जलावन

भाग समान। पनौती पग आइ पहचान। जानकी, ज्ञान की लेखा हार तू क्यों मनभावनारे ॥ १४ ॥ कह बड़े बड़े के महत्व; लगिया पर रमयौंके पथ, जगोमें निन्दित हुआ अत्यंत, कामन द्वीप सिसापे क्षमीपवंग लुभावनारे ॥ १५ ॥ जितने पग परिचम हित ठावे, उतने प्रसपात कनपावे, ऐसी पुराण में दरसावे, कोटिश कल्प नरक में जनम क्यों हारनारे ॥ १६ ॥ मैं हूं सती जगामत हाथ। हटजा दूरदुष बदजात। सेना लेकर धीर पुनाथ। वेग पधारे इस राक्षस से, मुझे छुड़ावनारे ॥ १७ ॥ सीता रक्षी धरम की कार। प्रभुजी सत्य करो इकरार। तो भी राम न मानी लिगार। सारथी रथ में बिठाई बन में, छोड़ी आवनारे ॥ १८ ॥ अटवी अति भयंकर त्रास। जहां नहीं कोई मिलन की आस। कहींमे राम दिया बनवास। भरसी भोग विकट बन वास, न पंथी लावनारे ॥ १९ ॥ रोने लगा सकल परिवार। महल में होगया हाहाकार। कैसी आन बनी करतार। सत्य शिक्षा देवन हार; हुआ अलसावनार ॥ ५० ॥ सिया से कभी न बदले राम। धोबकी तत्पथ सुन कुनाम। ये हैं सब विन मतलबके काम। जैसे अभयी भाम रुक्मानी कर्म कुनामनारे ॥ ५१ ॥ सारथी रथ सजकर जब लावे। बिठाई सीता को लेजावे। आ बन में सब हाल सुनावे। सुन मुरछाई सीता सारथी हुआ विलसावनारे ॥ ५२ ॥ शीतल पवन सचेतन थाय। रोती बोले सीता माय। कहीये मायनाथने जाय। बिन तकसीर अकेली बन में; क्यों विटकावनारे ॥ ५३ ॥ मात्रा शुभ

हो सवगुण संपन्न । दोपित कर काढी रघुनन्दन । मै तो नौकर जाति विलं छिन्न । खोटे किंकर पन का काम; हुकुम उठावनारे ॥ ५४ ॥ प्रभुजी पलमें प्रीति तोड । भेजी सीता को इस ठोड । देखी काई सियामें खोड । कुचतो कहनाथ। यह कारण; किस अपराधनारे ॥ ५५ ॥ जो कुछ थी क्यों नहीं वहदी पेली । जलवल होती राख की ढेली । इस वन में कुण म्हारे बेली । सग नहीं सहेली वनमें अकेली, वन विहामनारे ॥ ५६ ॥ घरमे बेठी नहीं झगडती । फौजा ले नहीं पिउ से लडती । विष नहीं खाती न कुवे पडती । सीतादेती नही शराप, न करती सामनारे ॥ ५७ ॥ लपट नर की सुन कोई वात । प्रीतम पल-ट्यो आज विधाता । एक दम दीनी केम असाता । राक्षस राक्ष-सणी से पूछ के, निर्णय करावनारे ॥ ५८ ॥ आशा मेरे मन थी ताजा । जनमसी पुत्र वाजसी वाजा । सो सब होगये काज अ-काजा । प्रभु नहीं पूछी मन की वात, बढा पछतावनारे ॥ ५९ ॥ प्रभुजी मैं तो अवगुण गारी । तुमतो सागर सम गिरधारी मुझपे करणा नाथ विचारी । मुझ दासी ने रखलेता यह, वन डरावनारे ॥६०॥ मैंतो पूर्व पाप जो कीधा । वोली झूट. आल पर दीधा । हणीया जीव अछाण्या जल पीधा । कीनी निंदा, नियम व्रत खड्या तलाव सुपावनारे ॥ ६१ ॥ सेव्या आश्रव पाप अठार । कीनी अधम पथ से प्यार, पोषी इन्द्रिय विषय विकार । साधू श्रावक का व्रत लेकर करी विराधनारे ॥ ६२ ॥ के मै जल सू आग बुझाई । दव दीधी आग लगाई । भाडा, चूना, ईंट, पचाई ।

साया कन्द मूल फल करके, रुचिकर सराहनारे ॥ ६३ ॥ के मैं अनरथ कर्म कमाया । फल भर फूल बीज बिंधाया । बैंगन भरता करकर खाया । केरी निंबू में भर खार, अचार नखावनारे ॥ ६४ ॥ के मैं तरवर छाल मरोडी । पाती, कलियां, कोंपल तोडी । छपि कम किये म् मोडी, सुखिया नाश धूप में भरियां, और पियावनारे ॥ ६५ ॥ दीपक बलता उघाडा धरिया । जिन में पड पड जन्तु मरिया, धीवर कर्म कसाई करिया, क मैं खाया मदिरा मांस, या मोजन रावनारे ॥ ६६ ॥ के मैं शोक भये दुख दीना । जननी बाल बिछोहा कीना ॥ मारग लूट द्रव्य हरलीना । मन्त्र उचाटन मूठ चलाव ॥ किसे ही त्रासनारे ॥ ६७ ॥ के मैं किसी का गर्भ गलाया । खापी शील कुशील कमाया । सती के सिरपे कलंक चढाया ॥ पंछी और पती के आप समें वैर बसावनार ॥ ६८ ॥ क मैं सासू बहू लडाई । मत्री मंत्री प्रीति घटाई । सच्च भगाडी झूठ में सराई । श्रीजिन वाणी चित्त नहीं धारणी, करी उथापनारे ॥ ६९ ॥ क मैं धरम करेसा लागी । नाटक नाच देख हुई राजी । छिनकर भेली भातिय भाजी । मोटा आरम करमादान करी हर्षावनारे ॥ ७० ॥ क मैं तपसी साधु सताया । कैसा मबका यह उदय आया । सो तुम जानत हो जिनराया । छूटे नहीं निकाचित मम अवश्य भुगतावनारे ॥७१॥ मेरे कर्मों की है मार । प्रभु में नहीं है दोष लगार ऐसी समता दिल में धार । बाली बारबी दुख मम बास; पिऊको सुनावनारे ॥ ७२ ॥ राम राज्य के राज्य मुझार । सुखिया बसे सकल

नरनार। मै दु ख भोगूँ विपिन निरधार। प्रभुजी मेरा ही दुर्भाग्य, अंक विधि मातनारे ॥ ७३ ॥ जवास्यो सूखे घनवर्षण में। उल्लू देख सके नहीं दिन में। केर फले न वसत ऋतू में । जलधर रवि, ऋतु दोषन कोय, दोष कर्मा तनारे ॥ ७४ ॥ सीता रघुवर बिन दु खी वनमें । तुम भी मुझ बिन प्रभुजी मनमें । तज दी आके लोक वचन में । तिम कोई दुष्ट वचन से धर्म मती छिटकावनारे ॥ ७५ ॥ मैं तो हुइ के न हुइ स्वामी। मुझ बिन क्या तुम घरमें खामी । अर्जी सुनियो अँतर्यामी। निज काया और कुटुम्ब तणी। करजो प्रति पालनारे ॥ ७६ ॥ आखिर सीता की यह वाणी। प्रभु तुम सूरज वशी भाण । दिन दिन होजो कुशल कल्याण। फलजो सुर तरु जू जगमें सु यश वर्तावनारे ॥ ७७ ॥ सारथी कहिजे मुझ आशीश। चिरजी रहो अयोध्या ईश। लक्ष्मण सेवा करो निश दिन ॥ सारथी सीता वनमें छोड़के । रथ पलटावनारे ॥ ७८ ॥ सीता पग पग पे मुरछावे। ग्रीष्म ताप सही नहीं जावे, दर्भांकुरसे चरन विंधावे। सती का दु ख से दुःखी हो सहस्र, किरण अस्तावनारे ॥ ७९ ॥ बैठी तरुवर के तल रानी। रोवत भर २ नयना पानी। बनचर देख अति कंपानी । धरियो परमेष्ठीको ध्यान दुःख मिटावनारे ॥ ८० ॥ वन में नार अकेली जोय देखी लोक अचभे होय। यह तो वन देवी है कोय । आया वज्र जंग तहा भूप, श्रावक जिन राजनारे॥ ८१ ॥ भयाकुल होय सती उसवार। अग तणा सब अलकार । भूपति आगे धऱ्या

उतार। है भगिनी मत दइराय लाय, धीर नहीं जाननारे ॥८२॥ बहिनी कौन! कहां से आई!। इस वनमें क्यों रोती भाई। खिन्न हुई हो खिन ये घरराई मैं हूं भावक भ्रातका धारी, शक मत लाय नारे ॥ ८३ ॥ बीती बात सुनाई ताम। सुन के भूप किया अ-याम। चलिये बहिन हमारे धाम। मैं तुम भाई धम को भामण्डल सम जाननारे ॥ ८४ ॥ सती को शिबिका बीच बिठाई। लाया निज महलों के मांई। करे सती धर्म ध्यान हुलसाई। टलियां दुःख मिलिया सुख, पुण्य भगटावनारे ॥ ८५ ॥ सारथी आया है जब चाल। सुनाया सती के दुखका हाल। सुनकर रामचन्द्र तत्काल। मुरछा खाके पड़ गये लक्ष्मण, आय उठावनार ॥ ८६ ॥ सुध बुध बिसरगया रघुवरे। कहां मुझ सीता सती सुवरे। सूना भवन लगे मम घरे। सीता बिन जीना धिक्कार, पीछी मिलावनारे ॥ ८७ ॥ कैसा होगया जान अजान। सीता प्यारी भाया समान। मैं सो लोक कहन में आन। पीछे बिहुयी सती को दुःख हुवा पश्चतावनारे ॥ ८८ ॥ बोले लक्ष्मण सुनो रघुनाथ। सोचे बिगड़ी मानुष बात। रोवा अब क्या आवे हाथ। पुन शोधन करले आवा, क्यों घबराव भारे ॥ ८९ ॥ आये बैठी तुरत बिमान। शोधि धणी अ मिल्या निधान। पंछे बस आये निज स्थान। लोकों होगई राजी पूरण हुई मनकामनारे ॥ ९० ॥ सिया करे गर्भ तणी प्रतिपाल। जनमें युगल पगे दो बाल। लव, कुश दीना नाम रसाल। भणिया गीतार्थ से सिया, पाम्य सुदावनारे ॥ ९१ ॥

एक दिन माता मुख सुनी बात । तत्क्षण कोपे दोनों भ्रात । लेकर दल अक्षौहिणी साथ । आये राघव से लढवा निज, बल दिखावनारे ॥ ६२ ॥ भेजा दूत राम पे आया । बीडा भाल नोक भेलाया । बलिया दो जगजननी जाया । आये आण मनावन काज, हुक्म सिर धारनारे ॥ ६३ ॥ सुनकर राम लखन कोपाये । फौजे लेकर सन्मुख आये । मुख से बोलत लव कुश धाये । गीदड़ रावण को मारा अब, क्षत्री पन दिखलावनारे ॥ ६४ ॥ अडी जब दोनों फौजें आन । बजे रण बाजा उड़े निशान । नूर नूरानी सुभट बलवान । खडा रणक्षेत्र में सुलतान, वीर रस छावनारे ॥ ६५ ॥ बख्तर, तोप, तेग अति चलके । शस्तर विविध प्रकारे भलके । शक्ति तेज चढी दोई दलके । निज निज स्वामी की जय कारण, मरण मुख धावनारे ॥ ६६ ॥ नीर सम तीर चले सर सर्र । छूट रही तोपें भी धर धर्र । देख कायर कंपे थर थर्र । धूज गई धरणी रजसे रविका, तेज छिपावनारे ॥ ६७ ॥ लव जब भिडा राम से आन । कुश लखन पै ताना बान । हृदे में लगा हुए बेभान, मूर्छित होय पडे रथ माय, सुभट रथ वारनारे ॥ ६८ ॥ लक्ष्मण सावचेत में आया । स्यदन पीछा रण में लाया । फिर भी परास्त हुवे हरि राया । तबतो हो कुपित त्रिखडी, चक्र चलावनारे ॥ ६९ ॥ चलाया राम लखन कई शस्तर, फिर २ आवे पीछा चक्कर । मनमें सोचे हरि और हलधर । है कोई विद्याधर बलवंत, राज्य अब जावनारे ॥ १०० ॥ आयुध सेवे देव हजार

चक्कर दशमुख मारन हार । सो सब बदल गये इसबार । हाथी वसि से इनकी जीत, जीविये क्या फरमनारे ॥ १०१ मगिली मिल भामण्डल वीर । सुन के उत्सव लव कुश वीर । मामा आय ले शमशीर । मीडियो राघव बल से लेचर, दिल शकासनारे ॥ १०२ ॥ सुग्रीव पूछ भामण्डल साई । ये कौन आये शूर चलाई । तुम क्यों मिले इन्हों में जाई । ये सुत मायेशा सीता का, आया आननारे ॥ १०३ ॥ खेचर मिल सब मसलत ठाई अपन किस पै करें चढाई । पिता और पुत्र तणी यह लडाई । शस्त्र छोड अलग आ बैठे सैनिक रामनारे ॥ १०४ ॥ सोचे उब लक्ष्मण रघुराज । रण तब मागे सुभट समाज । निश्चय पलट गये दिन आज । चक्री लेने को हरि हलधर, बूआ भगटापनोर ॥ १०५ ॥ इतने नारद ऋषि चल आया । राघवजी का भरम मिटाया । ये कोई है सीताके जाया, मिलबा आया आपा विसार्या, युद्ध म ठावनार ॥ १०६ ॥ गोत्रीपर नहीं चाले शस्त्र । सो किम मारे ये निज पूतर । प्रथम जिनेश्वर श्री आदेश्वर । जिनका पुत्र बडा भरतेश, चक्री पद पावनोर १०७ चलाया चक्र बाहुबल साथ । आया पलट करी नहीं घात । सुनिया हाल श्री रघुनाथ, देख्या जोरावर भगआत, गात फूलावनारे ॥ १०८ ॥ मिलबा राम चल्या तत्काल तब पग लागे दोनों बाल । देखी सब जन हुआ खुशाल । आये पुत्र पिता के भवन, रंग उछावनारे ॥ १०९ ॥ पितासे पुत्तर करत बखान क्या कहे सुख दुःख सागर आप दीन्हा बिन सोचे संताप, अवगुण होमी सो क्या जगत फजीत करावनारे ॥ ११० ॥

लक्ष्मण, सुग्रीव अंगद हनुमान । विभीषण और मित्री राजान । बोले राघव से हित आन । शील शिरोमणि सीता नार, उसे अब लावनारे ॥ १११ ॥ तब कहे रामचंद्र आल्हाद । मिटे किम लोकोंका अपवाद ॥ करे वह धीज मिटे अपराध, हनुमत सीता लेवन पुंडरीक, नगर सिधावनारे ॥ ११२ ॥ सिया से हनुमत भाखे बात ; समति कर राम लखन सब साथ । भेजा मुझको यहा रघुनाथ । चालो पुष्पक बैठा विमान, न देर लगावनारे ॥ ११३ ॥ बिठाई सीताको विमान । आये महेंद्र बाग दरम्यान । लक्ष्मण पावा लागे आन । माता भवन पधारो करके, माफ अशातनारे ॥ ११४ ॥ सिया कहे करू धीज खचीत । जिससे हो सब को परतीत । मिटे सब लोकों की बदनीत । रचायो अग्नीको तहा कुंड, झूंड, नरनारनारे ॥ ११५ ॥ तीन सौ हाथ गोलाई जान । उंडा धनुष दोय परमान । चन्दन भरके धरी कृषान । धग धग करता लाल अगार ज्यू, केशु फुलावनारे ॥ ११६ ॥ हजारों पुरवासी मिल आवे । दीनता कर करके समझावे । प्रभु अग्नि में मत छिटकावे । सीता है बिलकुल निर्दोष, अर्ज स्वीकारनारे ॥ ११७ ॥ राघव कहे सुनो लोक गवार । तुम तो भेड़ जात ससार । क्या तुम जिव्हा का इतबार । कछुए सम ज्ञण बाहर ज्ञण, भीतर हो जावनारे ॥ ११८ ॥ लोक सब हाहाकार मचाय । निर्दोषण सीता के ताय । डारे आज अगन के माय । हे जगदीश दयानिधि करके, दया बचावनारे ॥ ११९ ॥ जानकी आई अनल के तीर । नयन से टपक रहा है नीर ।

पड़ी थे कैसी अनुभी भीर । पूर्वकृत कर्मों की तकसीर, कर्म दुःख
बनारे ॥ १२० ॥ धर्म, साधु, सिद्ध, जिन भगवान । शरण में
गहू करो कल्याण । मनसा, वाचा, कर्मणा जान । जो सत्याग्रही
रवि, शशि लोकपाल, दिशि धारनारे ॥ १२१ ॥ सीता कहे
सुनो बाल गोपाल । पेड़ो सपने पथ्य पवि टाल । धर तू ज्वाला
दीजे बाल । नहीं तो अभी मिट तत्काल, नीर हो जावनारे ॥ १२२ ॥
ऐसे कह के सती सवाल उठ रही घोर अगन की ज्वाला, उसीमें
कूद पड़ी ततकाल, बसत सब जन सररर नैनांबू टपकावनारे
॥ १२३ ॥ तत्क्षण विमल भये परताप । आये देवी देवता
आप । मेटा सीता का सताप । होगया अग्नि का जल कुंड,
फूल बरसावनारे ॥ १२४ ॥ पंकज पत्र विविध जल कंद । सुर
निर्मल फूल विकसंत । सारस हंस चकोर रमन्त । पायरी पंचरत्न
मय मणि, सोपान सुहावनारे ॥ १२५ ॥ माहात्म्य सत्य शील
का सार । देखत कोटिगण संसार । सती ने कीना जगत उद्धार ।
हर्षित होगये सज्जन दुर्जन, मन शरमावनारे ॥ १२६ ॥ सिया से
राम कहे पछिताय भेजी तुमको वनखंड माय, कीना दुश्मन प्रेम
प्रकाश मम अब क्षमय सकल अपराध माफ करवावनारे ॥ १२७ ॥
कैसी महिमा सियाँ की भारी । जय जय बोले सब नर नारी ।
अग्नि परीक्षा हुई जनक दुलारी । प्रगटा पतिव्रता का धर्म, सुयश
जग छावनारे ॥ १२८ ॥ रामकी चमू बड़ी भारी । हनुमत
यद्यपि शूर सिपाही । सब आग नाश कर आया । शक्ति पाय
बली लक्ष्मण के, प्राण न जावनारे ॥ १२९ ॥ रामकृत दुरकटक

कहवाया। जिनको प्रभुजी मार गिराया। लंका गढ़ में हुकुम चलाया। सती को बन में मिला सुसाज, भक्त जिनराजनारे ॥ १३० ॥ दो पुत्तर बलवता जाया। हरि हलधर का पाव डिगाया। अग्निकुड नीर छवि छाया। ये सब सीता शीयल प्रताप, बिघन बिरलावनारे ॥ १३१ ॥ सिया कहे सुनो सकल समाज। कब हो नीर अगन का आज। पर यह रही रघुकुल की लाज। सूरजवश दिवाकर पुराय, प्रभू का माननारे ॥ १३२ ॥ खाल का नीर पूजनीक थाय। लोह के घात कनक बनजाय। अधर्मी पुरुष धर्मी कहलाय। ये त्रिहु नसा, पारस, सद्गुरु महात्म जाननारे ॥ १३३ ॥ नयनाश्रुत कहत मुरारी। मुझ सग चलो भोग सुख प्यारी। सती कह झूठा जगत दु खकारी। प्रभुजी भोग भुजग समान, वचन वीतरागनारे ॥ १३४ ॥ जग में लगा अलीत पलीत। सुख में दुःख सताप ख-चीत। मूरख करे भोग से प्रीत। त्रिविध त्यागन करके नाथ, निजात्म तारनारे ॥ १३५ ॥ सियाने लीना संयम भार। सम दम उपशम गुण को धार। तेंतीस दिन का कर संथार। पहुची द्वादशवें सुरलोक, इद्रपद पावनारे ॥ १३६ ॥ गजमें ऐरावत एक जान। अश्व में कमलापति प्रधान। उदक में गंगोदक एक मान क्षीरवर सागर एक ही मत्र, एक नवकारनारे ॥ १३७ ॥ एक है सुदर्शन गिरिराज, भोग में शालिभद्र सिरताज। योग में स्थूलि-भद्र महाराज। दानी में कर्ण, दशार्णभद्र मानी एक जाननारे ॥ १३८ ॥ ऐसे लिया सर्व जग देख। सीता हुई जगत में एक

होगई तिरिया और अनेक । दुलभ सीता जैसी नार, फेर प्रगटा-वनारे ॥ १३९ ॥ ऐसा पतिव्रत धर्म सुखकारी । बहिनों धारी लीजो सारी । कीर्ति फैलेगी जग भारी । ऐसा शील रत्न को धार, यश उजवालनारे ॥ १४० ॥ गुरु हैं मेरे हीरालाल । कीन्हा चौथमल को निहाल । उन्नीसो चहोत्तर का साल । जोड़ा कोरी थल के माथ, जो देश मेवाड़नारे ॥ १४१ ॥

॥ ॐ ॥ शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

ॐ

रचयिता:—
पण्डित मेवाड़ी मुनिवर्य
श्री चौथमलजी
महाराज.

ऋषिदत्ता-चरित्र

प्रकाशकः—
सेठ बगतावरमलजी नारमलजी
मुकाम अंजड़.

प्रथम संस्करण	मूल्य	वीर स. २४५५
१०००	सदाचरण.	विक्रम सं. १९८५

प्रस्तावना

नूनं नाशयते कलङ्क निकरं, पापाङ्कुरं कृन्तति ।
सत्कृत्योत्सवमाचिनोतिनितरां, ख्यातिंतनोतिध्रुवम् ॥
हन्त्यापत्तिविषादविघ्नविततिं, दत्तेशुभां सम्पदं ।
मोक्षस्वर्ग पदं ददाति सुखदं, सद्ब्रह्मचर्यं धृतम् ॥

प्रिय पाठकवर्ग! गतकालमें क्रोडों कुलाङ्गनाएं होगई हैं। जिनकी ख्याति प्रत्येक मजहब के सद् शास्त्रों में पायीजाती है, जो आजकी कुलवतियों को नैतिक शिक्षा का पूर्णतया पाठ पढागई हैं। यह ठीक है कि सदाचारपन की कसोटी कराने को अनेक आपत्तियें आ उपस्थित होती हैं; किन्तु वह स्वल्प कालमें ही प्रायः लुप्तसी होजाती हैं। संसारमें कीर्त्तिरूपी बिजली चमक ऊठती है। गई हुई सम्पत्ति पीछी लौट आती है। बिछुड़े हुये सज्जनों का संयोग सौभाग्य शीघ्रही प्राप्त होता है। अखिल दुनियां में विश्वास पात्र ही नहीं किन्तु पूज्य भाव प्रकट होता है। किंबहुना उभयकुलों को उज्वल करती हुई सत्य धर्म की नौकामें बैठकर विश्वार्णव से उत्तीर्ण होजाती हैं।

आज इसी आशय पर यह "ऋषिदत्ता" चरित्र आप श्री के करकमलों में सादर समर्पण करताहूं। जो

श्रीमज्जैन शासन दिवाकर सकल सुगुणालंकृत बालब्रह्मचारी पूज्यवर श्री १००८ श्री एकलिंगदासजी महाराज के सुशिष्य कविरत्न सरस व्याख्यानी पंडित मुनि श्री "चौथमलजी" महाराज ने निर्माण किया है। प्रियवरों चरित्र क्या ? एक आत्मोन्नति की सीढी समझना; मैंने इसे मुनिश्रीजी के मुखसे २० रोज तक निसरपुर शहरमें श्रवण किया है तभी मैं मुग्ध होरहा हूं। मुनिश्री की इस मनुष्य पर कृपा हुई है सो इसे प्रकाशित कर अमूल्य अर्पण करवाई है।

विनीत—

नाहरमल ऊँकारमल

भजन (निमाड़)

॥ ॐ ॥

❀ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः ❀

सति शिरोमणि ऋषिदत्ता चरित्र

॥ दोहा ॥

शासनपति श्रीवीरके, नमन करी चरणार ।
सरस कथा कहूं शीलकी, ऋषिदत्ता अधिकार ॥१॥

तर्ज—ख्यालकी—सुनियो श्रोताजन पूर्ण प्रेमसे, यह चरित्र रसीला ॥ टेर ॥ जम्बू भरत रथमर्दनपुर में हेमरथ महिपाल । सुयशा रानी सुखदानी सुन्दर रूप रसाल ॥ शूरवीर सब कलावन्त सुत "कनक कुँवर" सुखमाल, अजी यह चरित्र ॥ १ ॥ कम्बेरीनगरी नृप कृत ब्रह्म लवणसुन्दरी नार । पुत्री नाम रुखमणी कहिये तन दामन अनुसार ॥ सकल कला परवाण देख नृप चिन्ते चित्त मझार, यह० ॥ २ ॥ मिले योग्य वर कोन ठिकाने मंत्री कहे विचार । रथमर्दनपुर राज कॅवर हे कामदेव अवतार ॥ सत्य कहूं महाराज मिले नहीं उन जैसा संसार, यह० ॥३॥

श्रीफल देकर भेज्यो मन्त्री विमगय के दरबार। सदा विजय हो शब्द बोलके श्रीफल धर्यो सिंवार ॥ सगपण मानो राजवी सरे मत करिजो इनकार ॥ यह ॥ ४ ॥ श्रीफल ले सतकार देइने विदा किया ततकाल । निज नगरी आ हाल सुनाया सुन हरप्यो भूपाल ॥ ब्याह तणी रचना रची सरे घर २ मंगल माल ॥ यह ॥ ५ ॥ स्वागत कारण भार्त सामने चल्या कँवरी ईश । उधर भावकी करी चढाई हेम रथ अवनीश ॥ कर धर राजा कनक कुँवर को बैठायो गज शीश ॥ यह ॥ ६ ॥ चतुरंगी सेना सजि संगमें बडा २ उमराव । रस्ते लम्बा भूप पर आया चली बात दरियाव ॥ विषम भयकर जंगल में आ दीना डेरा पड़ाव ॥यह०७॥ उदक ढूंढते अनुचर फिरते आया सरवर ठोर । सुभग बाग चौतरफ किनारे छायरहा घनघोर ॥ कुंवरी एक झूलरहि चढपि चांस अम्बके डोर ॥ यह ॥ ८ ॥ रुप-अचम्भित है वनदेवी विद्याधरणी कोय । इण सम दूजी कौन जगतमें रहे सुभटगण जोय ॥ कन्या डर भागी उस वनमें तत्क्षण अदृश्य होय ॥ यह ॥ ९ ॥ सुभट आय कुँवर के आगे दरसाई यह बात । सुनत स्नेह पूर्व को जगियो विकसित होगई गात ॥ उसी कानर्सा ठोर बतावो जल्दी मुझको भ्रात ॥ यह ॥१०॥ उसी जगह चल आया सब मन लखी सृष्टी म्होंही । देखत नैन दस नहीं होवे यह रूप कहांसि आई ॥ सना देख डरी कुंवरी फिर भागी इस वनमांही ॥ यह ॥ ११ ॥ गई दृष्टि से कुंवर विकल हो ढोलन लग्या

निश्वास । धस्यो बागमें तापस दीठो करतो योग अभ्यास ॥ जटाधार तन वृद्ध तापतो कुंवरी बैठी पास ॥ यह ॥१२॥ देख कुंवर खुश हो तापसके चरण नमायो शीश । चिरंजीव तुम रहो कुंवरजी दीनी शुभ आशीश ॥ क्योंकर चल यहां आविया सरे किस नगरी का ईश ॥ यह ॥ १३ ॥ रथ-मर्दनपुर राय हेमरथ का नन्दन महाराज । कम्बेरी नरवर की कन्या जाऊं परणवा काज ॥ दर्शन दीठो आपको सरे सफल हुओ दिन आज ॥ यह ॥१४॥ राजरेख तन ऊपर दीखे आप लिया कीम जोग । तापस कहे सुण राजकुंवर यह इस विध बणियो नोग । नगरी इक ताम्बावती सरे सुखी बसे सब लोग ॥ यह ॥ १५ ॥

सुण राजकुंवरजी, मैं निज वीती परकासूं वारता ॥ टेर ॥

तहां नृपत हरिषेण एकदा होय तुरंग सवार । उलटे बाग उडाय लेगयो विकट विपन मंझार ॥ तापस का आश्रम देखाया एक सरोवर पार ॥सुण०१६॥ तापस मत धारण कर औषधि विषहर ले के राय । निज नगरी आ कइयक जनका दीन्हा जहर हटाय ॥ महिमा फेली बहुत भूपकी देश दिशान्तर मांय ॥ सुण ॥ १७ ॥ कालान्तर एक पुरुष आयके करी विनय अरदास । मंगलावति नगरी प्रियदर्शन पृथ्वीपती का वास ॥ विद्युत्प्रभा राणी उर उपनी प्रतिमती गुण रास ॥ सुण० ॥ १८ ॥ फणि-धर दंश दिया महाराजा कीन्हा बहु उपचार । प्रभू पधारो जहर उतारो यो मोटो उपगार ॥ तुरत तिहां जा

रामसुता का दीन्हा गरल उतार ॥ सुण० ॥ १९ ॥ धन्य याद दे परणा दीनी लेआया निज शहेर । सुखसे नाटक हावता सरे प्रीतमती के लेर ॥ एक समय राजा इम चिन्त समी पुण्य की महेर ॥ सुण० ॥ २० ॥ साधन करूं पुनर्भव देके निज नन्दन का राज । राणी से कह सुख से रहिजे मैं मारूं निज काज ॥ प्रीतमती कहे तुम बिन क्षिणभर मैं न रहूं महाराज ॥ सुण ॥ २१ ॥ पछ लागी नाथ आपके कैसे जावो छाड । मैं पिण रहस्यूं संग तुम्हारे साधो जोग सजोड ॥ जोग मार्ग यह राग भयंकर तुम इम किम इक ठोड ॥ सुण० ॥ २२ ॥ जा सुख का तज आप गये हो करस्यूं आतम काज । समझाई समझी नहीं सरे आखिर लीन्ही साथ ॥ दोनोंने तापस व्रत लीन्हा विश्वभूति के हाथ ॥ सुण० ॥ २३ ॥ कुछ समयान्तर रानी के तन गर्भ चिन्ह दरसाय । पति पूछ यह अनर्थ कैसा अब किम लाज रहाय ॥ अपयश होसी जगत में सरे अंगुली लोग बताय ॥ सुण ॥ २४ ॥ भोगारम्भ का गर्भ नहीं यह गृहस्थाश्रम का जान । मोल धर्म में नहीं अघाई सुख रह्यो आधान ॥ धिक् दुष्टन सब बात बिगाडी यें मुझ संगमें आन ॥ सुण० ॥ २५ ॥ महिला मोह में अन्ध हुआ तब या उपज्या संताप । एक क्रोड अस्सी लख नरका कौपिक लीन्हा पाप ॥ रमणी मूर्च्छित खोर संडाधिप आप नर्क में आप ॥ सुण० ॥ ॥ २६ ॥ दे कपोल तल हाथ सोगया चिन्तातुर नृप होय ।

प्रात हुआ देखा तो तापस नजर न आया कोय । दोनों भटकत आगे आया जीर्ण झूंपी जोय ॥ सुण० ॥२७॥ जंघ क्षीण इक वृद्ध तपश्वी बैठा देख नरेश । हाथ जोड पूछा सब तापस चलेगये किस देश ॥ ते कहे तेरा दुराचार लख रमगये ले निज भेष ॥ सुण० ॥ २८ ॥ मैं अपंग बैठो इण मठमें, करू प्रभू को ध्यान । थें तिरिया संग योग रतको नष्ट किया राजान ॥ घरका रह्या न घाटका स तूं हुआ रजक का श्वान ॥ सुन० ॥ २९ ॥ नारि ठगारी महन्त पुरुष को करदे दास समान । ब्रह्मा विश्नू ईश शशि सुर इन्द्र हुवे हैरान ॥ पाराशर शृंगी कई बिगडे साक्षी देत पुरान ॥ सुन० ॥ ३० ॥ धरत खेद इण मठमें वसीया पुत्री जन्मी ताम । ऋषी पणे प्रस्त्री सो दीन्हा "ऋषिदत्ता" तसुनाम ॥ नव दिनकी हुई वालिका सरे माता गई परधाम ॥ सुण० ॥ ३१ ॥ पत्र पुष्प फल खिला २ के पिता करी प्रतिपाल । क्रमसर ते मोटी हुई सरे, तेरा वर्षकी बाल ॥ गांव नगर मानव नहीं जाणे कथा कंकर क्या लाल ॥सु० ॥ ३२ ॥ गज गमणी मृग नयनी वयनी कोकिल कंठ समान । शशि वदनी, अरु शीलवती, गुण किम करूं एक जवान । सुर अवछर मी देख इसे हो दिलोजान कुरवान ॥ सु० ॥ ३३ ॥ अम्ब सुवन में खेलत तुमको देख डरी भग आई । या मुज कुंवरी आद्य अन्त तुम सन्मुख कथा सुनाई ॥ कुँवरी कुंवर परस्पर दोनों हद से गये मोहाई ॥ सुण० ॥ ३४ ॥ वसुरि बिंधो मृगवत भेदी व्रनडा की

मत धात । सुभट कहे देरीसुं ये स मत चला उठावो माव ॥ प्रम पिछल परन, सुमरेगेफी कान धरी नहीं माव ॥ सुण० ॥ ॥ ३५ ॥ प्रीत जुडी दोनोंकी दखी पिता हप चित हाय । परणा दीन्ही संग कुंवर के पोस। नयन निचाय ॥ अति वल्लभ मुझ लाडलीथेरे दुःख न दखा कोय ॥सुण०॥३६॥ पिता कंठ विलगी अति रोई सिखासी कर प्यार । रूं कुल वधी कत हुक्म में रहिजे कुल आधार ॥ कहे कुंवर से या सुत धरण खिम खिण करखा सार ॥ सुण० ॥ ३७ ॥ श्रपि गया निज धनमें करवा आतम का उद्वार । दिल पलट्यो रुखमण से मिलगई बिचमें सुन्दर नार ॥ रखा छीन्हा निज नगरी का कोई सुभट सरदार ॥ सुण० ॥ ३८ ॥ पीछा कैसे पलट पधारा रखिये कुल की लाज । रुखमण के बिनपर्मे होगा अगत फजीती आज ॥ धकनवाला धका करा कुंवर नहीं सुन अवाज ॥ ये चरित्र रसीला, सुणियो० ॥ ३९ ॥ रथमर्दनपुर धाग आविया खबर सुनी भूपाल । वनसे पदमण परण पधान्या उत्सव किया विशाल ॥ चौथमल कहे ठाठ पाटसे आया महलां चाल ॥यह च ॥४०॥

दोहा—सासू स्वसुरादिक तणो कौन विनय व्यवहार ।
सो प्यारी जाने नहीं रीत भांत आचार ॥ १ ॥

तर्ज पूर्वोक्त—अनुपम रूप मधम तस तनका फिर सखिया मझार । रतन मंदिर का नख खिखवाई पहनाया ऊंकार ॥ देखनवाला कप नहीं धपता कवि किम पावें

पार ॥ यहच० ॥ ४१ ॥ देव दो गुंदक जैसे दोनों करता भोग विलास । कुलाचार प्रियतम बतलाया सास श्वसुर सहवास ॥षट्गुण नीति रीति सिखलाई धर्म कर्म अभ्यास ॥ यह० ॥ ४२ ॥ नूतन महल बनाविया सरे सोवन कलश चढाय । मुक्ताजाली पूतली सरे विविध चित्र चितराय । भामण के वश पड्यो भमरजी सेज छोड नही जाय ॥ यह० ॥ ४३ ॥ कम्बेरी नृप खबर सुनी मन उपनो बहु सन्ताप । हा ! हा ! कैसा अनर्थ वनमें परण पलटगये आप ॥ मूर्च्छित होगई रुखमणी सरे करके घोर विलाप ॥ यह० ॥ ४४ ॥ झूरन लगी नैन से धारा वरसत श्रावण मेह । तेल चढी तजि बालमा सरे धरिये वनचरी नेह ॥ पिउड़ो वशकर लेगई दुष्टन किमकर राखूं देह ॥ यह ॥ ॥४५॥ धन्य नार संसार में स पिउ साथ बसे सुख वास । धिक् २ मैं नहीं मरी बालपन डायन करी न ग्रास ॥ क्यों छोडी मा शीतलासरे भुक्तावन दुख त्राश ॥ यह ॥ ४६ ॥ किया पूर्व भव पाप अठारा किसी जीवको मारा । झूंठ उचारा कर्म ठगारा शील भंग कर डारा । जंगल जारा भ्रष्ट जमारा कर मानव भव हारा ॥ यह ॥ ४७ ॥ ज्ञानी विना कौन अब मेरा करें आज निस्तार । प्रीतम अब कैसे मिले सरे जीना जग धिक्कार ॥ सुलसा नामा योगिनी सरे चल आई तिणवार ॥ यह ॥ ४८ ॥ मंत्र तंत्र कामन उच्चाटन करती कर्म अनेक । छल कर के पूर्ण भरी सरे सुगुण मिले नहीं एक ॥ पीत वशन कर लिया कमंडल शिर सिंदूरीरेख

॥ यह ॥ ४९ ॥ दुख भरती कुंवरी का दखी पूछन लागी मात । कुंवरी पड़गई चरणमें सर भली पधारी मात ॥ अब तेरा आधार हमारा करसी कष्ट निपात ॥ यह ॥ ५० ॥ धर मस्तक पर हाथ जोगनी पूछे कौन हवाल । मुझ वर ब्याहन आवत परणी पद्मण विपिन विशाल ॥ बिन ब्याही मुझ छोडगयो इस दुख से आप निकाल ॥ यह ॥ ५१ ॥ धैर्य धार बाई मैं तेरा शीघ्र सुधारूं काम । अपिद्या से दिल पलटाई तो सुलसा मुझ नाम ॥ चल आई रथमर्दनपुर में करवा कर्म हराम ॥ यह ॥ ५२ ॥

आई हत्यारी सुलसा जोगिनी, दुष्कृत्य करनको ॥ टेर ॥

अन्धकार कर नगरी मांही मिरगी मार चलाई । एक मनुष्य को मार रुधिर ले अपिद्यापा जाई ॥ छतीके मुख लगा मांसकी पिण्ड पास धर आई ॥ दु० ॥ ५४ ॥ मच्यो हलाहल पुरमें अधिका कुंवर जाग परभात । देखा रमणी मुख सोणितमय मांस पिंड वसु हाथ ॥ हुवा घोर दुख दिलमें यह क्या ! बनी भयकर बात ॥ दु० ॥५४॥ भा सति ऐसी नहीं भखावे मुख धाके स्वच्छ कीन्हा । मांस पिंड एकान्त पटकदी सोगया पास नगीना ॥ मानव हुयें लगा रस रंगमें कुंवर भेद नहीं चीन्हा ॥दु०॥५५॥ फिर दूजी रजनी में इणविध देख हुवा भय भ्रांत । नीन्द मुक्तकर बोला है प्रिय ! तु दीसे गुणवन्त ॥ सुण मुख सून खराबिया पुर में मानुष रोज मरंत ॥ दु० ५६ ॥ इस

लच्छन तूं है राक्षसणी, मैं ऐसी नहीं जाणी। वचन सुनत प्रियतम का सुन्दर रोम २ कम्पाणी॥ नैना पानी ढलक पड्यो सुध वुध तज के मुर्छाणी॥ दु०॥५७॥ कंत सचेतन कर कहे प्यारी मत करिये दुख कोई। मैं निश्चय जाणूं पुन्यवन्ती सदा बोली अति रोई। हे प्राणेश्वर यह दुर्घटना अकस्मात किम होई॥ दु०५८॥ बालपणे माता मरी सरे मोटी कीनी बाप। वैर विरोध किसी संग मैंने किया नहीं कछु पाप॥ प्रबल पुण्य परताप हमारे बालेश्वर हुवे आप॥ दु० ॥५९॥ क्यों आया संकट मुझ ऊपर जाणों श्री भगवन्त। दी धीरज पति प्रेम पौषके प्यारी रहो न चिन्त॥ देवयोग पण तुझ मुझ मांहीं अंतर नहीं पडंत॥ दु०॥ ६०॥ दुराचारिणी सुलसां नितकी ये करतूत रचावे। कुवर सदैव धोय शुद्ध करदे रखे प्रगट होजावे॥ बिल बिलाट करते पुर वासी भूप समीपै आवे॥ दु० ६१॥ कुण कोप्यो यमदूत हमेशां मानुष्य मरे अकाल। उच्चाटन करदिया नगर में शुध लीजे महिपाल। भूपत मंत्री भेज तलासी करवाई ततकाल॥ दु० ॥६२॥ देव दोष नहीं वदे ज्योतिषी मंत्र तणा परभाव। खट दर्शन जोगी सन्यासी पड़िया बहुत पडाव॥ घर २ पै तोफान रचावे जिनका दुष्ट स्वभाव ॥ दु० ॥ ६३॥ जैनमती साधू निर्दोषी शिव मारग विहरत। कंचन कंकर सम गिणे सरे जगत उदासी संत॥ ले भिक्षा निर्दोष पक्षिवत् संग्रह नहीं करन्त ॥ दु० ॥ ६४॥ खट काया प्रतिपाल कभी दुख देवे नहीं

किम तारे । दूसा दुष्ट भेषधारी है न्यांकी प्रतीत नांहीं ॥ सुरत निकाला आगी अगम एक न रह पुर मांहीं ॥ दु० ॥ ६५ ॥ दे द् धका सब का काळ्या तुलसां मिली जलाल । रण्डी निकल नगरमें वैने फैलाया बजाल ॥ चटा भिखर हाथ तन नंगी थिफरी रंग कर लाल ॥ दु० ॥ ६६ ॥ राज सभा में आकर चाली नरपति न्याय विचार । सबल धकी नहीं जीते सो तुम लगे निबल के लार ॥ राजकुंवर के घर राक्षसणी कर रही अत्याचार ॥ दु० ॥ ६७ ॥ जो तुम देखन चहो बताऊं तुम घर लागी लाय । एक रात के लिये कुंवर को अलग करो महाराय ॥ नजर देख इन्साफ करो मत धिरया किसे सवाय ॥ दु० ॥ ६८ ॥ मध्यस्थता बस राय मानली नीच रांड की बात । सध्या समय बुलाय कुंवर को पास बैठायो तात ॥ है बस्स तूं कुल दीपक मेर एकाएक अग जात ॥ दु० ॥ ६९ ॥ रात दिवस रहे महलां मांही रंग रस में गलतान । कोटवाल उमराव मुसद्दी हाकिम और दिवान ॥ तू नहीं बैठ राज्य सभा में किम होगा पहिचान ॥ दु० ॥ ७ ॥ मालगुजारी भंडारां की तुझे खबर नहीं कोय । फौज रिसाला सलतन दफतर तू नयना नहीं जोय ॥ आज हमार पास बैठके लिखो फैसला दाय ॥ दु० ॥७१॥ प्यारी में दिल टलमले सर एकल रही पर्यंक । अब किम जाऊं उठने सरे पड़ी पिता की शंक ॥ रस आजकी रात प्रिया के शिर पे आय कलंक ॥दु०७२॥ घोर दरद दिल कुंवर के सर जाण एक जिनस । भूतारी

योगन किया वैसा जैसा करत हमेश॥ प्रात सभामें आकर बोली देखो चिन्ह नरेश ॥ दु० ॥ ७३ ॥

रानि कनक कुवर की, मान्या मानुष्य इण दुष्टण डायिनी ॥टेर॥

राजा और दीवान प्रोहित हाकिम भट दासी-दास । देख रुधिर आमिप सब बोले या डायिन बद-मास ॥ कनक कुंवर मूर्च्छित पड्यो सरे पिता लियो विश्वास ॥ रानि ॥ ७४ ॥ रे मूरख क्यों मुरझ रह्या तूं छाने कर्म छिपाय। भली हुई तूं कुशल रह्या को दिनजानी गटकाय॥ चिरंजीव सुलसां रहो सरे काढी दूर बलाय ॥ रानि॥७५॥ नरपत हुकम लगाया पकडो करदो टुकडा दोय । मुश्की बान्ध पीटते जावो मद्य बजारां होय । आले कांटे लगा फूकदो शोर सुणो मत कोय ॥ रानि ॥७६॥ दास्यां मिल दागीना हरिया काढी महलां बहार । कोई चपेटा मुष्टी मारत कोइक चरण प्रहार। कोई घसीटे भूमी तलपर मुखसे बोलत गार ॥ रानि ॥ ७७ ॥ कृष्णानन करखर बैठाई गल बिच मींगणमाल । शिर धर छोगा निम्बका सरे धूल उछालत बाल । इस भांतीकर मद्य चौहटे लेआया चंडाल ॥ रानि ॥ ७८ ॥ कोई केह मुझ पती विनास्यो कोई कहे सतान । भुआ भतीजी प्रेम वधूका लिया प्रेतनी प्रान ॥ सतिका दुख नहीं वरनन होता, जानत श्री भगवान ॥ रानि ॥ ७९ ॥ पुरजन डरकर पीछे पलटे मैतर मसान लाया। खेंच म्यानसे खड्ग सतीको मारण काज उठाया॥ देख चमक बेसुध हो पडगई, ज्यूं मुरदेकी काया ॥ रानि॥

॥ ८० ॥ भिनमारी भरगई सोच थू म्यान धरी तलवार, आल काटि झोंक आग घर सिलगाई उसवार ॥ मल छूटी हुई खोरसे सरे आंधी चली अपार ॥ रानि ॥ ८१ ॥ भगी भगगये काटि उडगये दिया पुण्यने आर । होय सपवन देखन लागी पास नहीं काई और ॥ निराधार फिरती फिर सर फरती शोरमकोर ॥ रानि ॥ ८२ ॥ लगी पिदर धन पथ सतीकी अरण्य भतो भयकारा । कंटक आपिसे चरण भिदाया, पडत रक्तकी धारा ॥ सिंह करे गरजाव खाल नदि बहता छाड किनारा ॥ रानि ॥ ८३ ॥ पुण्य प्रभाव कष्ट सब टलिया पहुंची उस बनमोय । देखी निर्जन झोंपडी सरे पिता नजर नहीं आय ॥ छाती फटनलगी रुदनकर पडी धरणि मसगाय ॥ रानि ॥ ८४ ॥

कहां गये पिताजी, भाई दुखियारी पुत्री आपकी ॥ टेर ॥ सेभा उत्सर देख चायमें ठेले करे पुकार । कहां हमारा पिता बतादे मुझपर दया विचार ॥ बाप गया पर लोक रासहग देख मच्या हंकार ॥ कहां ॥८५॥ कौन पाप पूर्वभव कीन्हा हिंसा चोरी मूठ । अनाचारकर शुसाकिया निन्दा कीनी परपूठ ॥ प्रेम हेम कर किसे तपाया, काईपे मारी मूठ ॥ कहां ॥ ८६ ॥ मदिरा मांस ग्रास कर मान्या कुमार्ग कल्यान । सतियों का सत पतित कराया दीन्हा अभ्यास्यान ॥ किस भवका जाग्रत हुआ सरे किमजाणूं, भिनमान ॥ कहां ॥ ८७ ॥ श्री आदेश्वर वीर जिनादिक अनन्त भली अरिहन्त । हरिचक्री मण्डल पति अरु गम

खन्दक परमुख सन्त ॥ कृत कर्म्मों के फल सब भोगे साक्षी देत सिद्धंत ॥ कहां ॥ ८८ ॥ सिया द्रौपदी अंजना सरे मयणारेहा जग जहारी । कलावती पदमावति तारा चन्दना हुई दुख्यारी ॥ हा ! जगमें कर्मोंने किनसे राखी रिस्तेदारी ॥ कहां ॥ ८९ ॥ दिव्य रूप यौवन वय मेरी शील रखन के काज । परमेश्वर की शरण लेयके धरूं नियम ये आज ॥ अञ्जन मञ्जन उवटनासरे स्नान करण एतराज ॥ कहां ॥ ॥९०॥ शिख वेणी बान्धू नहीं सरे नविन वशन परिहार। मुख नहीं देखूं आरसी सरे भूमी शयन त्रिकार ॥ नित्य करूं नवकारसी सरे रइणी में चोविहार ॥ कहां ॥ ९१ ॥ पान सुपारी सरस साग तज सुणू नहीं रंगराग । कर पग धोऊं नहीं हमेशां रखूं मैल का दाग ॥ मुझ प्राणेश्वर मिले नही जब तक है इतना त्याग ॥ कहां ॥ ९२ ॥ फला-धार से रहत बाग में करती शील जतन्न । अवधिज्ञान कर पिता जाणियो कुंवरी कष्ट कठन्न ॥ मूल बाप के रूप आय के तुरत दिया दर्शन्न ॥ कहां ॥ ९३ ॥ हे वत्स यहां पीछी किम आई क्या हुआ हाल तुम्हारा । देख पिता को गले लिपट गई रोवत झारमजारा ॥ सुख सनमुख तुम करो मुझे पण फूटा भाग्य हमारा ॥ कहां ॥ ९४ ॥ सासू श्वसुरा दुखदिया क्या ? कन्त कष्ट में डाली । भल मानस मिले सास श्वसुर मै,घणी कंत को वाल्ही ॥ कर्मोदय सब दुश्मण होके डायिन करी निकाली ॥ कहां ॥ ९५ ॥ दिव्य रूप से दर्शन दिया बाई भय मत कर कोय । मैं करणी कर गया

स्वर्ग में आया तुझको जोय ॥ रूप पलट निज रूप बनावन मे ले लिया दोय ॥ कहां ॥ ९६ ॥ विजय रहेगा सदैव तेरा पती यहां चल आसी । प्रेम सहित पटराणी करसी सौक पाय पछतासी ॥ सासरिया में सबे तरह से बांई शाता पासी ॥ कहां ॥ ९७ ॥ देव स्वर्गमें गया सती बैठी उस बाग मुझार । नयना जल निवारती सरे बेगो मिल भरतार ॥ सुख दुख है तैसा तुम दिलमें होगा नाथ विचार ॥ कहां ॥ ९८ ॥ आप तणा कोई दोष नहीं है मेरे कर्म का जोश । बचा कलंक से लज्जा राखी कमी किया नहीं रोष ॥ तनका यत्न सदा करजो प्रभु करज्या दिल संतोष ॥ ९९ ॥ सास ससुरा सौक ननद का समझ नहीं विरोध । रूप सज्जन सुम नभर दख सुख बैठावेगे गोद ॥ पुष्प सेज पे प्राण पियुसंग किस दिन करूं विनोद ॥ कहां ॥ १०० ॥ लिया योग रूप योगी का सती किया तत्काल । आप जप नमकार का सरे और फिकर सब टाल ॥ प्रेम लगा भवता अब सुनिये कनक कुंवर का हाल ॥ कहां ॥ १०१ ॥

सुन्दर शशि वदनी, तुम बिन मुझ माण थाईना होरसा ॥टेर॥

रात दिवस झूरे घणो सर मनिता विरह अपार । खान पान निन्द्रा तजी घर विष २ करत विचार ॥ ह प्यारी किस दिश गई स सू कर सूनो ससार ॥ सुन्दर० ॥ १०२ ॥ मात पिता समझावे बहु विध क्यों ? पड़ियो जंजाल । इच्छा हा जितनी परणा दू सुन्दर रूप रसाल ॥ वचन हिया में लग कुंवर क तीक्ष्ण शरकी भाल ॥ सुन्दर०

॥ १०३ ॥ कर कारज सुलसां चली सरे पहुंची रुखमण पास । हो नाचिन्त्य कर दीया मूल से तुझ सोकड़ का नाश ॥ सुण कुंवरी सुख मानियो सरे सफल हुई मुझ आश ॥ सुन्दर ॥ १०४ ॥

ज्ञानी फरमावे, दुष्कर वश करणी जगमें मोहिनी ॥ टेर ॥

हर्ष बधाई करी नगर में भेजा दूत महीप । रथ-मर्दनपुर राज्य सभा में पहुंच्यो भूप समीप ॥ विनय करी मेली मुख आगे कम्बेरी नृप टीप ॥ ज्ञानी ॥ १०५ ॥ ऐ राजन् ! मम पुत्री के संग तुमने सगपण धाम । व्याहन हित आये नहीं बैठे क्यों ? लेकर विसराम । अगर परण गये और आपका होगा जग बदनाम ॥ ज्ञानी ॥ १०६ ॥ खुदही आप विचक्षण है प्रभु हम क्या कहें विशेष। तुरत भेजिये व्रात कुंवर को सज परणेतू वेप । चोथमल कहे पड़े फिकर में सुनकर हाल नरेश ॥ ज्ञानी ॥ १०७ ॥ राजा मंत्री कुंवर पास आ समझावे कर प्रीत । सासरिया का दूत आविया बड़ा घरां की रीत ॥ व्यावन काज पधारिये सरे बनी रहें परतीत ॥ ज्ञानी ॥ १०८ ॥ कुंवर उतर देवे नहीं पीछा;'ऋषिदत्ता' से ध्यान । रे मोह अन्धा कुलकी लज्जा क्यों खोवे नादान ॥ वो नारी क्या तेरा हक्क में करती भव कल्यान ॥ ज्ञानी ॥ १०९ ॥ दूत फेर बोला हे राजन् हा ! ना ! उत्तर दीजे । मोटा कुल की मांग छोंड के जग में सुयश लीजे ॥ किसी समय राजों की सभा में फिर उंचो मुंह कीजे ॥ ज्ञानी ॥ ११० ॥ लगा वचन का तीर

नृपके बोला होकर चंड । बेटा अघसा मान मुझे क्यों कर जगत में भंड ॥ जो नहीं आवे दास परण के दीजे दूरी छंड ॥ ज्ञानी ॥ १११ ॥ ज्यों त्यों करके कुंवर मनायो सन्यो भीन्द को बंश । दे सतकार दूतको भेज्यो ते पहुंच्या निज देश ॥ चल्यो परणवा कनक कुंवर अब, पिता तणे आदेश ॥ ज्ञानी ॥ ११२ ॥

रानी रुखमण को; ब्याहन अब चलिया कनक कुमार जी ॥ टेर ॥ बडे २ उमराव साथ में, सेना चार प्रकार । मंगल गाती युवतियां स बहु वाजित्र झणकार ॥ ऋषि दशा के बाग पास आ डेरा दीन्हा डार ॥ रानी ॥ ११३॥ देख बगीचा आनन्द उपनो होय तुरग असवार । कुछ सामंत संग ले अन्दर गयो कुमर सिणगार । दिव्य रूप जोगी का देखी नमन कियो बरम्बार ॥ रानी ॥ ११४ ॥ देख सखी गेमांचित होगई धन्य दिवस है आज । शुभा गमन हुआ प्राणनाथ का सभी सुधर गये काज ॥ प्रेम झरण उलटी हिरद में मिटी सकल दुख दाज ॥ रानी ॥- ११५ ॥ आया राजन् कहां बसो तुम चले कौन से देश । सामंत भाखी सकल बात ब्याहन को चले नरेश ॥ चिप में पद पंकज तुम भेट्या कटी पाप की रेश ॥रानी॥ ११६॥ जोगी कहे तुम रहो चिरंजी; मंगल करो भगवान । सदा सन्यासी सेवसो सरे जब होगा कल्यान॥सकल लोक जोगी तणा सरे करन लग बखान ॥ रानी ॥ ११७॥ पड्यो प्रेम में कुंवर उठे नहीं; सब बोल सुलतान । महाराजा दरी

हुवे सरे जलदी करो पयान ॥ हुई रसवती त्यार जीम लो कुंवर सुणे नहीं कान ॥ रानी ॥ ११८ ॥ सब जन दिल घबरावियां सरे वोहीज दुशमन वन्न । क्यों आया इस रस्ते हो के सोच रह्या सब मन्न ॥ कुंवर कहे तुम यहीं ले आओ मुझ कारण भोजन्न ॥रानी॥ ११९ ॥ थाल मंगाय दुभाग कुंवर कर जोगी को जीमाय । आप जीम निवृत हो बैठा अबतो चलिये राय । पण जोगी की प्रीत कुंवर से क्षिण छोड़ी नहीं जाय ॥ रानी ॥१२०॥ हम जोगी से प्रीत बांध तुम क्यों निज लग्न चुकावो । मैं जब जाऊं परणवा सरे तुम मेरे संग आवो ॥ नहींतर मेरे नियम व्याव का यो मुझ सच्चो दावो ॥ १२१ ॥ हम योगी तुम भोगी कैसे बने परस्पर प्यारा । आखिर हुज्जत कुंवर तजी नहीं जोगी होगये लारा ॥ चली बरात अब कुंवर की सरे ज्यूं गंगा की धारा ॥ रानी ॥ १२२ ॥ बिचमें एक सरोवर देखी जोगी करण सिनान । जा छिपियो जल बीच कुंवर के लगा विरह का बान ॥ फिरे ढुंढतो किधर गये मम जोगी जीवन प्रान ॥ रानी ॥ १२३ ॥ पहर बाद निकला तब बनडे नमन किया हर्षाय । क्यों छिप बैठे आप बिना क्षिण अंतर नहीं खमाय । चल्या नगर कंबेरी बागमें डेरा दिया लगाय ॥ रानी ॥ १२४ ॥ खबर होत लाखों पुर-वासी राज वर्ग के लोग । आय बाग में बीन्द देख कहे भलो मिल्यो संजोग ॥ धन्य भाग हे रुखमण तेरा फलिया सब मन्योग ॥ रानी ॥ १२५ ॥ जोगी कहे कुंवरसे हमतो

रहें भाग के मांय ॥ आतम ध्यान करेंगे प्यारा तू ध्याइन हित जाय । कुंवर कहे तुम साथ चलो; नहीं तो मैं परणूं नाय ॥ रानी ॥ १२६ ॥ क्यों हट पकड़ विघन करता मुझ भजन भाव के मांहि । मैं ब्रह्मचारी तू संसारी हटा प्रीत मुझ तांहि ॥ ज्यों ज्यादा करी तीनपांच तो छोड़ चलूंगा य्हांहि ॥ रानी ॥ १२७ ॥ कुंवर होय दिलगीर नयन से छोडी आंसू धार । सब सामंत सठ से बोले आप करा उपकार ॥ संग में चल परणादो स्वामी बड़पन बिरद विचार ॥ रानी ॥ १२८ ॥ जब मैं चालू संग हमारी कहन उलघे नाय । जैसी कहो वैसी करूं सरे लोपूं नहीं महाराय ॥ चले साथ सब सज्जन मिलके जोगी का गुण गाय ॥ रानी ॥ १२९ ॥ तोरण बांध लिया चंवरी में साधू कर सतकार । बीन्द बीन्दनी हाथ मिलाया ब्राह्मण मंत्र उचार ॥ विधि से ब्याव मनायिया सर खरच्यो द्रव्य अपार ॥ रानी ॥ १३० ॥ परम सेज पधरायिया सरे इन्द्र भवन दिलदार । सरस खाट सुवर्ण जड्यो सरे नवरंग लगी नवार ॥ काम नहीं जोगी का अन्दर कीन्हा आसण बहार ॥ रानी ॥ १३१ ॥ रोम २ हर्षित हो रुक्मण सज उत्तम शृंगार । आ बैठी पियु पलंग पै सर वाली अमृतधार ॥ प्राणेश्वरजी भले पधान्या प्रबल भाग्य अनुसार ॥ रानी ॥ १३२ ॥ ऋषि दया परणी गये पीछा मुझ छोड़ निरधार । राक्षसणी तुमको वश करके कैसो पटक्यो खार ॥ उन दिन से मैं झुरत रही हूं जानत भी किरतार ॥ रानी ॥ १३३ ॥

ऐसा उनसे आप लुभाया कैसा था तस रूप । कुंवर कहे वरणू किम उनका गुण अनमोल अनूप ॥ उन आगे तो तूं दीसत है जैसे दादुर कूप ॥ रानी ॥ १३४ ॥ लाल आंख कर बोली रुखमण विरथा करो वखाण । थी निर-बुद्धि वनचरी सरे परत्यक्ष पशू समान ॥ कला कुशल मुझ सम को जगमें लखो नाथ धर ध्यान ॥रानी॥१३५॥ सुलसां योगन वशकर भेजी तुम नगरी के मांय । रुधिर लगा पदमनि के मुख डायिन का दोष चढ़ाय ॥ सौक साल निर्मूल किया मैं ऐसी कला चलाय॥रानी॥१३६॥

जो सब सुख चाहो, पालो शुद्ध मनसे बुधजन शीलको ॥टेर॥

नाथ आप बहु जतन किया पण चला नहीं कछु-जोर । आखिर आया मुझ परणवा बान्ध शीशपर मौर । कौन कलाकी सागर जगमें मेरे जैसी और॥जो०॥१३७॥ सुनत कुंवर के जगी हियेमें घोर कोपकी ज्वाल। रे हत्यारी किया अकारज देकर झूंठा आल ॥ खेंच खडग उठ्यो रंडी तुझ करदूं आज हलाल ॥ जो सब ॥ १३८ ॥ कुंवरी हल्लो कियो सुनत योगी बोला ततकाल । क्या अकाज करता मुझ आगे तेरा वचन संभाल ॥ हे क्या जुल्म दोडकर आया कम्बरी भूपाल ॥ जो सब ॥ १३९ ॥ तुम पुत्री निरभागिनी सरे किया घोर अन्याय । चिन्तामणि सम मुझ रानीको इण दीन्ही मरवाय ॥ अभी कटारी खायमरूं मैं हिरगिज जीऊं नांय ॥ जो० ॥ १४० ॥ निज पुत्रीको

माय बाप धिक्कारन लग्या अपार ॥ हाय जोड कहे कुंवर से सरे आप बडे सरदार ॥ बीती बात विसारिये सरे हम पर क्षमा विचार ॥ जो० ॥ १४१ ॥ योगी बोला तिरिया कारण, क्यों ? मरता महाराय । तू दिलखाय मरगई नारी पण जीवित दखाय ॥ मुझ मानस मालूम होता तुम मिलेगा आय ॥ जो० ॥ १४२ ॥ कौन स्थान सुन्दर बसे सरे बतलाओ योगीश । अब चतन धीरप नहीं धरता वचन करो बखशीश ॥ योगी कहे इकठोर रहे वा भजन करे निशिदीश ॥ जा० ॥ १४३ ॥ शीलवती निर्मल वणीसरे महिमा बधी अपार । जो मुझको तूं मिलाकरे तो दिखलाई इनवार ॥ तुमको जुदा किम करूं स मुझ उपजे कष्ट फगार ॥ जो० ॥ १४४ ॥ हमको अलग किये बिन तुमको मिले नहीं वो नार । कुंवर मौन कर रहा भयी सब सघमुच प्रेम निहार ॥ जा एकान्त सुमर विद्या बनगई स्त्री आकार ॥ जा० ॥ १४५ ॥ तनपर भूषण विविध अलकृत रमझम करती आई । प्रियतम के पग लगी सुन्दरी, कुंवर दख विषदाई ॥ प्रेमानन्द से हियो उमगियो चिन्ता सब मिटाई ॥ जो०॥१४६॥ मनकी सब इच्छा फलीसर बरस्या जय जयकार । थे मुझको नवजीवन दीन्हा, धन पुन्यवती नार ॥ योगीका पण भूलगया इसमन से एटो प्यार । जा० ॥१४७॥ कुम्वरी रूप देख हुओ हिरद में अधिक उमंग । धन्य सती सबकी पत राखी मांची शील सुचंग ॥ सुर फूलोंकी वृष्टी कीन्ही महिमा बास उमग ॥ जा० ॥

॥ १४८ ॥ शीलथकी सुरवर नमे सरे सागर देवे थाग । शीले सर्प पुष्प की माला शीले शीतल आग । शीले अरि करि केसरी सरे भय जावे सब भाग ॥ जो० ॥१४९॥ सुलसां पे कोपित हो राजा पकड़ाई ततकाल । कान नाक छेदनकर काढ़ी पुरसे बुरे हवाल ॥ सतियां के शिर दोष दिया तो ऐसा मिलसी माल ॥ जो० ॥१५० ॥ ऋषिदत्ता के संग कुंवरजी करता लील विलास । प्राणनाथ हिरदे मे धरिये दासीकी अरदास ॥ मुझसे अधिक समझ रुखमण को करिये नहीं निराश ॥ जो सब सुख चाहो० ॥१५१॥ कंत कहे या दुशमण तेरी सब अनरथ की मूल । दिल टूटो कैसे मिले स तूं सोच न्याय के रूल ॥ अवही से नव प्रेम मिलाओ गई बात सब भूल ॥ जो० ॥ १५२ ॥ ऋषिदत्ता की कहन मान रुखमण से कीन्हो प्यार । माय बाप कहे पुत्री तेरा सुधरगया सब कार ॥ इन दोनों की दास होयके रहिजे कुल व्यवहार ॥ जो० ॥१५३॥ विदा होनकी सीख श्वसुर से मांगी कनक कुंमार । भूपति खंच करी घणीसरे मानी नहीं मनुहार ॥ गज घोडा चेटक चेटी दिया धन कंचन भंडार ॥ जो० ॥ १५४ ॥ सीमा तक पहुंचाय पिता पुत्री को गोध विठाय । दी इम सीख सास नणदी के सदा लागजे पांय ॥ लज्जा क्षमा नम्रता निर्मद मिष्ट वचन सुखदाय ॥ जो० ॥१५५॥ कष्ट पडे कुलरीत तजे मत देव-धार अरहन्त । धर्म केवली प्ररूपीत कीजे गुरु निर्लोभी संत ॥ करजे पठन सिद्धान्त तणा यूं दोनों भव सुधरन्त ॥ जो० ॥

॥१५६॥ कहे कुंवरस आप विचक्षण, या बालक कहवाय। पछे पटकी नाथ आपके लीजो राज निभाय॥ भूप गया पीछा कम्मेरी दो आंसू छटकाय ॥ जो० ॥१५७॥ चली चकाई च्यापीबाग के पास किया अस्थान। निरख हरख हो सुखस आया निज नगरी उद्यान ॥ सुण राजेश्वर सनमुख आया घर मोट महान ॥ जो० ॥१५८॥ सिनगारी नगरी मद्दु मांती घर २ तोरण ताण। किया शहरपर मेव सखी गुण गाती राग रसाण॥ दो नारी का वख्स दखी मुख२ करे वखाण ॥ जो० ॥१५९॥ आय महलमें वाचन बनकी पूरण करी जगीश। सुलसां का करतूव भूषणकर प्रभुको देख महीश॥ हाथजोड कर तूं कुलवन्ती कर कसूर बखसीश ॥ जो० ॥ १६० ॥ मैं हूं पुत्री तुल्य आपहो मेरे पिता समान। किया भवान्तर कर्म जीवने सो भुगत्या यो आन॥ पीछी जगमें उन्मल करदी यो मोटो अहसान ॥ जो० ॥ ॥ १६१ ॥ सवही कीचन करनेलागा धन्यसती गुणवन्त। अवगुण तज गुण ग्रहण किया सुख सेम्भ्यां पाप महन्त ॥ परम प्रीत से रहे दम्पती नाटक सदा पढत ॥ जो० ॥ ॥ १६२ ॥ धर्मघोषसूरीश्वर आया संग संत सत पंच। तीनकाल के ज्ञात तप संयम के गुणकर टंच ॥ भूपत हर्षित होकर भेट्या पंच अभिगम संच ॥ जो० ॥ १६३ ॥ दिया धर्म उपदेश मुनिश्वर यह संसार असार। मात पिता भगिनी सुत नाता किया अनंतीवार ॥ जिन भाषित सत धर्म बिना रुलिया चौगति मंझार ॥ जो० ॥१६४॥ सुन

उपदेश हेमरथ राजा राज कनक को दीन्हा। ले योगारम्भ दुष्कर तपकर कर्म पडल क्षय कीना॥ अनुत्तर केवल लच्छी लेकर शिवपुर का सुख लीन्हा ॥ जो० ॥ १६५ ॥ कनक नरेश प्रजाको पाले न्यायवन्त सुखकार। ऋषिदत्ता के पुत्र हुआ इक सिंहरथ तेज दिदार ॥ एक समय रवि अस्त देख वैराग्य जग्यो उसवार ॥ जो० ॥ १६६ ॥ धर्म-विजय मुनि आये बागमें कर वन्दन सुन बानी। पूर्व भवकी पूछन लागी तब ऋषिदत्ता रानी ॥ राक्षसणी का दोष चढ़ा मुझ ज्ञानी के क्या छानी ॥ जो० ॥ १६७ ॥ इसी भरत में नगर गंगपुर गंगदेव नरपाल। गंगारानी की एक पुत्री गंगसेना सुखमाल॥ भरयौवन में शीलव्रत ले तजा भोग जंजाल ॥ जो० ॥ १६८ ॥ संगम नामा एक साधवी नीवी करत हमेश। मुख २ महिमा फैली जिनकी थें सुण कीन्हा द्वेष॥ राते मांस खाय राक्षसणी धरी दोषकी रेश॥ जो सबसुख चाहो ॥ १६९ ॥ लोक सुणी राक्षसणी थापी निन्दाहुई अपार। खुश हो कर्म निकाश्रित बान्ध्यो रंज न कियो लगार॥ भव रुलती नृप हरीषेण घर आय लियो अवतार ॥ जो० ॥१७०॥ सुवावड़में माता मरी सरे पिता पालना कीन्ही। वन फल खा मोटीहुई स फिर कनक कुंवर को दीन्ही॥ शीलधर्म धारण से यहांपर सुख सामग्री लीन्ही ॥ जो० ॥ १७१ ॥ राक्षसणी का छन्द चढ़ाया सो फल लीन्हा आप। क्रोडयत्न छुटे नही स बिन भुगतायें कृतपाप ॥ सुण हुआ जाती ज्ञान सतीको सत्य किया

इन्साफ ॥ जो० ॥१७२॥ देई पुत्रको राज्य दम्पती लिया योग परखंत। केवल ले मुक्ती गयासेरे पाया सुख अनंत॥ शीतलनाथ प्रभू शासनमें यह वरत्यो विरतंत ॥ जो० ॥ ॥ १७३ ॥ किया चरित निर्मित शालकवत् लई ग्रन्थ आधार ॥ कम ज्यादा का मिथ्या दुकृत यह छद्मस्त विचार॥ पूज्य शिरोमणि धर्मदास तम नाश करण दिनकार ॥ जो० ॥ १७४ ॥ पूज्य एकलिंगदास गुरुकी है मेवाड़ में धाम । "चौथमल" के बसे हियेमें सदा आपका नाम ॥ ब्यांसी के फागुण में भाये सदर शहर रतलाम ॥ अजी जा सब सुख चाहो,पालो शुभमनसे शुध मन शीलका ॥ १७५ ॥ इति मद्रम्-स्थम् ॥

इति श्री कपिदत्ता चरित्र सम्पूर्णम् ।

अथ श्रीमति 'पद्मनी' का आदर्श

तर्ज—ना छेडो गाली दूगोर, भरने दो मुझे नीर।

वोही सत्यवन्ती नारीरे; सत्य राखे तजे प्राण॥ टेर॥ चितौडगढ का राना; श्रीरत्नसिंह कहलाना। सूरजवंशी प्रगटानारे; सत्य राखे० ॥ १ ॥ जिनके घर पद्मिनी रानी; अति शीलरूप गुण खानी। जगमें महिमा फैलानीरे; सत्य० ॥ २ ॥ अल्लाउद्दीन अति तीखा; था बादशाह दिल्ली का। तिन सुना रूप पद्मिनीकारे॥ सत्य ॥३॥ वो ले निज लशकर चढिया; रानाजी से आ भिडिया। कर कपट जाल पकडियारे ॥ सत्य ॥ ४ ॥ दिल्ली में केद कराया; यह भेद पद्मिनी पाया। तब शूरापन चढ आयारे ॥ सत्य- ॥ ५ ॥ लेइ साढा तीनसो नारी; सब वेष पुरुषका धारी। रानाको लाई निकारीरे ॥ सत्य ॥ ६ ॥ जब आया चाल दुबारा; रानाको दगा कर मारा। लिया जान भेद सति सारारे ॥ सत्य ॥ ७ ॥ सति पति का शीश मंगाया; अगनी का कुण्ड रचाया। खडी होके वाक्य सुनायारे सत्य० ॥ ८ ॥ ऐ अग्नी देव सुन बानी; हम हिन्दू कन्या कहानी। इन दुष्ट अनीती ठानीरे ॥ सत्य० ॥ ९ ॥ नहीं तोड़ॉ शील की वरती। दुष्कृत्य नहीं आचरती। यह तन अरपन तुझ करतीरे ॥ सत्य ॥ १० ॥ अतिघोर धकंती ज्वाला; सति कूदपडी ततकाला। संग साढातीन सो बालारे ॥ सत्य ॥ ११ ॥ यों सतियां शील बचाया; तुम

सुनिसो मामो वासो । मानुष्य भव दुर्लभ पासारे ॥ सत्य ॥ १२ ॥ पूज्य एकलिंगदास गुरु खासा; फली चौथ मल की आशा । किया मांडलगढ चौमासारे ॥ सत्य ॥ ॥ १३ ॥ इति मङ्गम् ॥

अथ श्री 'घेवरिया' मुनिराज का वर्णन

तर्ज—ख्याल की:—

मुनिवर घेवरिया, आतम तराकर शिवलोक सिधाविया ॥टेर॥

राजगृही नगरी में वसता; श्रावक श्रीपति नाम । 'सुखदत्त' क्षत्रिय तिण घर रसिया हलधर खेडन काम हो मुनि० ॥ १ ॥ भाग्य योग तपवन्त मुनीश्वर गोचरी करण पधारे । रोम २ श्रावक हुलसायो सुलगये भाग्य हमारे हो मुनि ॥ २ ॥ घेवर एक लग्यो बहरावन अर्ध हम मुनि केवे । खेडुत देख विचार करत यो दूधे ये नहीं लेवे हो मुनि ॥ ३ ॥ रात दिवस में तन तोई पण मुझको देवे नांय । ये क्या लागे इन शाहजी के अपरन स बहराय ॥ मुनि ॥ ४ ॥ पूरण डालदियो पातर में मुनिवर स्थानक आवे । पीछे खेडुत आय मुनिंद का विनय करी बतलावे ॥ मुनि० ॥ ५ ॥ भावे जितना आप लीजिए पछे सो हमको दीजे । साधू विन हुक्म मिले नहीं लेना तो योग

ले लीजे ॥ मुनि ॥ ६ ॥ खेडुत के मन घेवर वसियो आज्ञा सेठ की लीन्ही । धर उमेद गुरुपास आविया मुनिवर दीक्षा दीन्ही ॥ मुनि ॥ ७ ॥ घेवर दीन्हा गुरुदेव नित उत्तम आहार खिलावे । सूत्र भणावे रहस्य बतावे घटमें ज्ञान जचावे ॥ मुनि ॥ ८ ॥ रसाशक्त को मुक्त मिले नहीं सीखत चढ्यो वैराग । गुरुमुख से लिया याव जीव तक सर्व विगय का त्याग ॥ मुनि ॥ ९ ॥ जम्बुक जिम योगारंभ लीना पाल्या सिंह समान । कर्म खपाय गया शिवपुर में हुआ सिद्ध भगवान ॥ मुनि ॥ १० ॥ पुज्य एकलिंगदास गुरूजी दिया हुकम परकाश । चौथमल किया साल गुण-यासी लाखोला चौमास ॥ मुनिवर ॥ ११ ॥ शम् ॥

उपदेशी—फटको ।

तर्ज—सीता हे सतवन्ती नार सदा गुण गावनारे—

बलिहारीहो श्रावकजी थांका गामकी हो । साधू आया पण
फुरसत नहिं शुभे और स्यामकी हो ॥ टेर ॥

थेंतो घर धन्धा में लागा; दर्शन करने की नहीं मागा । वखान सुनना तो रह्या आघा; फसिया जगत जालमें नहीं अधघडी विसरामकी हो ॥ बलि० ॥ १ ॥ होत प्रभात सजाया घोडा । देवे गामडियां में दोडा । फिर कहे साधु श्रावक का जोडा; वाह वा भली [illegible]

नामकी हो ॥ चलि० ॥ २ ॥ मोटा गांव देख मुनि आयां सपर सुनसी भायां चायां। करसी पौशा दया समायां; पिण यहां दीख नहीं कुछ रीत भीव परिणामकी हो॥ चलि० ॥ ३ ॥ नोंता पांच कोस का आवे; झटपट पोशा ऊठ सजावे छोटा मोटा सब मिल आवे; प्रा यहां धर्म काम में क्यों ? हुई नीत हरामकी हो ॥ चलि० ॥ ४ ॥ दर्शन करण दिखावर आवे; यहां पडु भक्ती भ्रम बनावे। जो मुनि कभी चाल यहां आवे; तो मुख भी न दिखावे या भक्ती किस कामकी हो ॥ चलि ॥ ५ ॥ कोईक आवत पेगा मोडा; किसीने किया कोल भी तोडा। हुआ पर्यूषण रुपा नक छोडा; साधू फेरो ठकर माला रामश्यामकी हो॥चलि ॥ ६ ॥ पूवो श्रावक बाजे माजी; मागे कर २ बहानाबाजी। ऐसे संत हुवे किम राजी; मैंतो देखी पुगला मक्ती भाव तमाम की हो ॥ चलि ॥ ७ ॥ जुगला चाली कर पोमावे; चक्कर सो सो मण गलवाव। पिरथा धनमें आग लगावे; जीवदया के कारण कोड्या नहीं छदामको हो ॥ चलि० ॥ ८ ॥ बीत्या जनम इसीमें सारो; अबतो आतम काज सुधारो। जासे सुख स स्वर्ग पधारो; चौथमल समय देख या चौटी लेन मदामकी हो ॥ चलि ॥ ९ ॥ इति ॥

पाक्षिक पर्व-जिन कीर्तन.

तर्ज-ख्यालकी

इण पख्खीपर्वका, करिये शुद्ध मनसे क्षमत क्षमावणा ॥ टेर ॥

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन जयवन्ता जिनराज । सुमति पद्म सुपार्श्व चन्द्रप्रभ जगजल तारण जहाज हो, इण० ॥ १ ॥ सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपुज्य वासव-पूज्य जिनेश । विमल अनन्त धर्म शान्तिजी शान्ति करण हमेश; ॥ इण ॥२॥ कुंथु अर मल्लि मुनि सुव्रतजी भानसमान महान । नमि नेमि पार्श्व शासनपति भगवंत श्री वर्द्धमान हो; इण० ॥ ३ ॥ अतीत काल अरिहन्त अनन्ता पाया अविचलराज । विहरमान महाविदेह क्षेत्रमें बीस विचरता आज हो; ॥ इण ॥ ४ ॥ सबका जाप साफ दिल करके पाप मेल झटकाओ । मैत्री भाव सब जीव साथ कर वैर विरोध मिटाओ ॥ इण ॥५॥ महापुण्य से मिला जैन कुल; रखो सुभाव प्रमोद । साल चौरासी चौथमलजी किया चौमासा कोटहो; ॥ इण पख्खी पर्वका, ॥६॥ इतिभद्रम् ॥

सूचना.
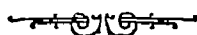
इस पुस्तक का उघाड मुंह स रोशनी क आगे तथा पाजिन्तरों की सान पर पढने की सख्त मनाई है।

इस पुस्तक की आवश्यकता हो तो सिफ दो पैस का टिकट भजकर निम्न पते स मंगवालें।

बगतावरमल नारमल पो० अजड़ (बडवानी)
Po. Anjar Barwani C I

इन्हीं मुनि श्रीजी कृत "हंस वत्स चरित्र" इसी तर्जमें एक रुपये की ७ प्रति नीचेके पतेपर मिलती है।

सेठ गुलाबचन्दजी दीपचन्दजी राठोड मु०रायपुर स्टेशन पंचपहाड (होलकर राज्य) Raipur

ओसवाल मुहारमल मिश्रीलाल पालरेचा
क
जैनबन्धु प्रिंटिंग प्रेस पीपलीबाजार इन्दौर में छपा

श्री श्री १००८ श्री

अमोलकऋषिजी

का

जीवन-चरित्र

(पद्यमय)

लेखक और प्रकाशकः-

धर्मपाल मेहता

मिलने का पताः-
धर्मपाल मेहता
श्री जैन गुरुकुल ब्यावर.

प्रथमावृत्ति १०००

मूल्य पांच पैसे

वीर सं २४६४
वि स. १९९४

अमोलकऋषिजी

का

जीवन चरित्र.

——:o:——

तर्ज़-राधेश्याम रामायण.

प्रशस्त शुभ्र मरु-भूमि मेडता, नगर सुरमणिक अरु राजित।
धर्म-दीप 'कस्तूर' सेठ यश, परिमल से थे अति भ्राजित ॥१॥
श्रीमन्त आर्यकुल भूषण थे, श्वेताम्बर मूरत पूजक थे।
शुभ्र मालवा प्रांत 'आसटे', में निवास को उत्सुक थे ॥२॥
सरल, शुद्ध, शम, सम्यक्त्वी, श्री स्वर्ग सिधार हुए नामी।
ज्येष्ठ पुत्र, मध्यम सुत पत्नी, बने आपके अनुगामी ॥३॥
विकराल काल गति देख मोह तज, दीक्षित हो जवराबाई।
धर्म सहचरी पूर्णतया व्रत पाल, अमर सद्गति पाई ॥४॥
प्रतिमा पूजन, प्रतिक्रमण रत, परपरा गत व्रत प्रतिपाल।
केवल 'केवल' व्यथा व्यथित हो, किया प्रयाण ततः भोपाल ॥५॥
परिवर्तित जीवन में श्री के, हुए अनेकों परिवर्तन।
आधि व्याधि से मुक्त बनू मैं, प्रतिक्षण रखते यही रटन ॥६॥
हुआ आगमन तत्क्षण शुभ ऋषि, 'कुँवर' एकांतर धारक का।
करते शतशः अमियपान जन, मृदुल, स्वल्प संभापक का ॥७॥

वक्तृत्व श्रवण न करते 'केवल' मत मूर्ति अनुयायी थे।
हठ पूर्वक लगाये 'पूज्य' श्री सत् धर्मी औ त्यागी थे ॥८॥
शुद्धस्कन्ध आगम को सुनकर हृदय ज्ञान से पूर्ण हुआ।
उत्कंठा से श्रावक व्रत कर दूर विषयों से पूर्ण हुआ ॥९॥
प्रतिक्रमण, पच्चीस बोल फिर, किये कण्ठस्थ श्री ने आरम्भ।
प्रबल लालसा मुनि बनने की अतः राह पर रहे तटस्थ ॥१०॥
किन्तु कर्म वश हुआ लग्न गृह, आई सुदु दुखदाई।
अकस्मात् क्षणभंगुर तन तज, स्वर्ग गई वा सुत माई ॥११॥
तब पुन पर कन्या वर ने, किया प्रयाण स्वकीय मरु देश।
मध्यमाग रतलाम ठहर कर किया श्रवण श्री 'धर्मोपदेश' ॥१२॥
बहुश्रुत 'कस्तूर' सपत्नी, ब्रह्मचर्य व्रत पालक थे।
विष की प्याली सहज गिरी थी अब 'केवल' के तारक थे ॥१३॥
पूज्य उदय ने भी फरमाया क्यों श्री को ललचाते हो।
पी विराग की मधु प्याली क्यों पुनः अन्न को गाते हो ॥१४॥
चित्त में असर हुआ अधिकाधिक शीघ्र लौट आये गृह को।
आजीवन व्रत ब्रह्मचर्य कर किया नष्ट सब आग्रह को ॥१५॥
एक वर्ष पर्यन्त किया श्री ने भिक्षाटन मधुकर सम।
आग्रह था श्री का मुनि बनना आया वह अवसर उत्तम ॥१६॥
दीक्षा ले शुभ वेला में श्री!, व्यस्त हुये ज्ञानार्जन में।
शिष्य पूज्य 'सुखा' के स्वामिन्! ततः लगे तप अर्जन में ॥१७॥
एकाधार तपस्या तपते चतुर्मास अन्यान्य शहर।
फिर पूज्य ने शांति सुधाकर से, मदिरा मांस छुड़ा भीषण ॥१८॥
'अमी' अमोलक अल्प आयु के, सद्गुण मनोहर श्री! युत थे।
पुखराज परम सुत धर्मशील वैराग्य भावना से युत थे ॥१९॥
कविवरेन्द्र श्री तिलोक ऋषि के, शिष्य रत्न गये इच्छाधर।
दर्शन इच्छुक केवल मुनि के आतुर थे दोनों सुखकर ॥२०॥

पित्र साधु अवस्था लख कर, पूर्ण विराग हुआ तत्काल।
श्री 'अमोल' दस वर्ष आयु मे, बने साधु षटकाय कृपाल ॥२१॥
'केना' ऋषि के बने सुशिष्य अरु, समझा जैनागम का तत्व।
स्वल्प काल मे 'पूज्य' तथा 'गुरु', वर्य किन्तु पाया पचत्व ॥२२॥
यावत श्री 'केवल' ने एकल, विचरण 'श्री' से नहीं किया।
तावत् पूज्य पिता आज्ञारत, ज्ञानाराधन ध्यान दिया ॥२३॥
तत्पश्चात् रहे श्रीजी ऋषि, 'भेरु' स्वामी के आश्रय मे।
प्रथम शिष्य बने श्री 'पन्ना', अष्टादश की लघुवय मे ॥२४॥
मार्ग शीर्ष में 'रत्न' स्वामि के, हुए विवेकी सहचारी।
शास्त्राभ्यास कराया श्री को, योग्य पात्र लख सदचारी ॥२५॥
ततः विवेकी, सुखप्रद 'मोती' बने, आपके शिष्य महान्।
किन्तु दैव वश बबई मे ही हुआ आप का तन अवसान ॥२६॥
'घोड' नदी के चातुर्मास में, हुआ ज्ञान का दिव्य प्रकाश।
पूर्ण तथा प्रारभ किया था, तब ही श्री ने 'तत्व प्रकाश' ॥२७॥
वृद्धावस्था अवलख पिता की, सेवा मे सलग्न हुये।
हनुमान गली बबई में श्री सह, पितृ सन्त प्रविष्ट हुये ॥२८॥
ततः 'रत्नचिन्तामणि' मण्डल, किया तत्र श्री स्थापित।
'जैना मूल्य सुधा' पुस्तक भी, पद्य बद्ध की परकाशित ॥२९॥
कार्य अर्थ सुश्रावक 'पन्ना', मिले सफल माना जीवन।
आवागमन अभाव सन्त का, हृदय विदारक है क्षणक्षण ॥३०॥
अतः हैदराबाद नगर में, चतुर्मास अत्यावश्यक।
श्रवण करेगी सदुपदेश को, परिषद् जैनागम विषयक ॥३१॥
चतुर्मास के पूर्व दिवस प्रस्थान, किया हैदर आबाद।
'इगित प्रति ए 'धर्मतत्व' वित, रण कर गये औरगाबाद ॥३२॥
मध्य राह में शीत-उष्ण श्री, सहे धीर बन कर परिषह।
चैत्र शुक्ल प्रतिपदा 'हैदरा', पहुच गए श्री सन्तोसह ॥३३॥

तीन वर्ष—पर्यन्त एक टक, किया अमोलक ने आहार।
सद्व्यय कर 'ज्वाला' ने छपवा, नाम रखा 'आगम भण्डार' ॥४७॥
इसी मध्य मे 'मोहन' ऋषि को, दीक्षा दी लख कर शुभ पात्र।
न्याय काव्य, व्याकरण कोष, कण्ठाग्र किये थे श्री ने शास्त्र ॥४८॥
किन्तु तपस्वी 'देव ऋषी' अरु, 'मोहन' स्वर्ग गए जग तात।
लाला 'सुख' भी स्वर्गारोहन, कर गए हुआ वज्र आघात ॥४९॥
शास्त्र कार्य को पूर्ण किया श्री, शुभ बल पा शुभ हस्त कमल।
विनय विनम्र करी सुश्रावक, ज्ञाता सब विधि श्रेष्ठ 'नवल' ॥५०॥
कर स्वीकार विनय जलदी, प्रस्थान किया श्री 'यादगिरी'।
कर्नाटक मे विचरण करते, जन मन की सब भ्रांति हरी ॥५१॥
कीर्ति चन्द्रिका तुल्य प्रसारित, थी जगतीतल मे चहुँ ओर।
इस प्रकार श्री विचरण करते, शुभागमन किया बंगलोर ॥५२॥
मध्य राह मे नाना परिषह, सहते पहुँचे दे उपदेश।
पौषध शाला, विद्याशाला पुस्तक आलय कर निदेश ॥५३॥
'गौश्त' 'इरन' म्लेच्छों से श्री ने, नियम कराया हिंसा का।
धर्मोन्नति का झंडा श्री का, लहरा सत्य, अहिंसा का ॥५४॥
'अमी' ऋषी के राजकोट से, आए तत्र नवीन विचार।
सम्प्रदाय को उन्नत करके, तदनन्तर तुम करो विहार ॥ ५५॥
'रत्न' ऋषीजी ने भी श्री को, सद् उपदेश दिया मन का।
अतः ज्येष्ठ मुनिवृन्द उल्लंघन, नहीं किया श्री आज्ञा का ॥ ५६ ॥
सघ विनय स्वीकृत कर श्री, महाराष्ट्र मे किया प्रयाण।
'सूरज' 'धोका' 'ज्वाला' आए, जीवित जिनसमाज के प्राण ॥५७॥
वीर जयति मना सोलापुर, त्वरित पधारे करमाले।
स्वागतार्थ पताकाएँ जन, लगा हर्ष जय ध्वनि बोले ॥५८॥
मधुर भाष, शान्तयादि गुणों से, हुऐ विनोदित सब ही जन।
चतुर्मास की स्वीकृति हित भी, हुऐ विनीत सभी के मन ॥ ५९ ॥

रोग असाध्य समझ सथारा, श्री ने उनको दिला दिया।
अमर आत्मा किन्तु देह तज, सीधा स्वर्ग सुमार्ग गया ॥७२॥
तत्पश्चात पधारे श्री जी, "रंभा जी" भी मनमाडे।
चतुर्मास भी यहीं हुआ अरु, शतश. जीव गए तारे ॥७३॥
चतुर्मास पश्चात धूलिया, श्री ने शीघ्र विहार किया।
हुए राज ऋषि चक्षु विहीना, अतः अत्र चौमास हुआ ॥७४॥
फागुन कृष्णा एकादश को, राज ऋषी जी स्वर्ग गए।
निर्वाणोत्सव किया 'हेम' ने, वेही तो कृतकृत्य हुए ॥७५॥
तदनन्तर श्री गए 'कांगरो', किन्तु रहे श्री जी एकल।
वैमनस्य के कारण सबही, सन्त अत्यधिक थे बेकल ॥७६॥
धुलिया नगर निवासी गण ने, सुना हाल जब यह सारा।
अत्याग्रह है करो सुपावन, धुलिया सघ अति दुखियारा॥७७॥
ततः पूज्य ने बन पर्वत में, तपाचरण अभिलाषा की।
सानुरोध था श्रावक गण का, अत तपस्या आशा की ॥७८॥
घोर तपस्या के कारण श्री, नेत्र रोग से ग्रसित हुए।
श्रावक सङ्घ विनय से स्वामी, औषध में संलग्न हुए ॥७९॥
चतुर्मास भी हुआ धूलिया, ज्ञान लता थी विकसाई।
माघ मास 'सायर' सन्मुख जी, दीक्षा पद्मकँवर बाई ॥ ८० ॥
तीन साधु जो वियुक्त हुए थे, सन्मति पाकर हुए कृतार्थ।
अति आग्रह से किया सम्मिलित, समझाया इसका सत्यार्थ ॥८१॥
तृतीय हुआ चौमास अत्रही, उपदेशामृत पान किया।
जगवय भ्राता सेठ 'अमी' ने, शाला मे अतिदान दिया ॥८२॥
हैदराबाद निवासी 'जमना', 'राम' कीमती भी आए।
व्रतस्कन्ध ले ब्रह्मचर्य का, रामलाल जी हर्षाये ॥८३॥
'जैन तत्व प्रकाश' थोकडे, छपा अमूल्य वितरण करदी।
वस्त्रादान दिया, दुखियों की, सारी पीर तुरत हरदी ॥८४॥

अति त्वरित इन्दौर पधारे, 'मोहन''देव''विनय' आनंद।
महा सती श्री रत्नकँवर जी, तथा आए श्री ताराचन्द ॥९८।
सन्त साध्वी गणना त्रेसठ, ठाणे की थी उत्सव में।
सभी सम्प्रदा के साधू थे, पदवी पूज्य महोत्सव मे ॥९९॥
मालव, दक्षिण, कच्छ, काठिया, वाड वीर मरुस्थल के।
खान देश, गुजरात तथा, पजाब भूमि भुसावल के ॥१००
आगन्तुक थे इक सहस्र, अन्यान्य नगर वासी उसवक्त।
तैयारी थी सब कुछ, चद्दर, देने की देरी थी फक्त ॥१०१
जेठ सुदी बारस बुध शुभ दिन, धर्म 'हुकम' सुखशाला में।
पदवी पूज्य स्वदेशी चद्दर, प्रदान की शुभ वेला में ॥१०२
सम्प्रदाय ऋषि पूज्य अमोलक, का होना था अति सुखकार।
हर्ष गगन भेदी कर माना, बोल पूज्य की जय जय कार ॥१०३
ग्रामान्तर जनता का भोजन, किया प्रबन्ध श्री 'जमना' ने।
आदि अन्त तक बने सहायक, किया परिश्रम 'ज्वाला' ने ॥१०४
'ऋषि श्रावक समिती' भी की, मध्याह्न काल मे स्थापित।
जैन गुरुकुल की अपील, स्वीकृति पर थे सब ही बाधित ॥१०५
जैन समाज भूषण लालाजी, दानी पूगलिया सरदार।
बडी रकम गुरुकुल में देने, दोनों के थे भाव उदार ॥१०६॥
पूज्य महोत्सव पूर्ण हुआ थी, पूज्य विहार किया तत्काल।
चतुर्मास स्थान बताकर, पहुच गये श्रीवर भोपाल ॥१०७॥
जैन अजैन सभी ने मिलकर, श्रद्धापूर्ण किया स्वागत।
मोडों के थानक में ठहरे, आई परिषद दर्शन हित ॥१०८॥
कई अजैनी बने सुजैनी, आते सुनने नित उपदेश।
दान तपस्या हुई खुब थी, वीर सुनाते थे सन्देश ॥१०९॥
वृहत-साधु सम्मेलन सम्मति, हित आया डेप्यूटेशन।
सेठ 'अमी' ने किया प्रबन्ध, शिक्षक को भी दी सब वेतन ॥११०

पच नियुक्त किए थे दोनों, दल वैमनस्य मिटाने को।
श्री 'अमोल' 'मणि' नाम 'रत्न', 'काशी' थे सुख उपजाने को ॥१२४
पारस्परिक विरोध मिटा, द्वादश सम्भोग कराए थे।
चैत्र सुदी दशमी बुध को, अजमेर पूज्य श्री आये थे ॥१२५॥
श्रावक वृन्द वदन श्री लख ने, सन्त वृन्द सह आए थे।
समझए क सुविशाल भवन मे, लेजा अति हर्षाए थे ॥१२६॥
विराट सभा में हुआ मगलाचरण, साधुओं का भाषण ।
पूज्य अमोल ने सम्मेलन, 'साफल्य' विषय पर दिया भाषण॥१२७॥
इसी भवन में पृथक पृथक, भागों मे मुनिगण रहे सभी।
वट तरु परिमण्डल आकारी, नीचे भाषण हुए तभी ॥१२८॥
प्रातः, साय, ज्ञानी, ध्यानी, मुनिगण देते थे भाषण।
जैन अजैन श्रोताओं से परि, पूर्ण हुआ था तब प्राङ्गण ॥१२६
वैशाख शुक्ल दुतिया को सोनी, हरिश्चन्द्र को दीक्षा दी।
संस्कारित हरि नाम ऋषी था, पूर्ण रूप से शिक्षा दी ॥१३०॥
दीक्षा उत्सव व्यय 'ज्वाला ने, किया नाम था अमर किया।
दीक्षा स्थल पर अगणित जनता, ने भाषण रस पान किया ॥१३१
साधु साध्वी ने भी श्री के, अनुपम गुण का गान किया।
आनन्दित मन से सब ने ही, श्री का जय जयकार किया ॥१३२
कोमल हृदयी रत्न ऋषी, आनन्द विनययुत किया विनय।
चतुर्मास हो नगर सादडी, कष्ट मिटाने है अनुनय ॥१३३॥
बडी हरी ऋषी को दीक्षा, देकर तुरत विहार किया।
ब्यावर, बगडी, सोजत, पाली, और सादडी गमन किया ॥१३४॥
रत्न कँवरजी ने ठाणे नौ से, चौमासा किया यहीं ।
दर्शनार्थ मेवाड, मालवा, दक्षिण से आए सबही ॥१३५॥
सम्मेलन नियमों का पालन, करवाने दुर्लभ श्री हेम ।
मंगलाचरण स्वरूप पधारे, बढा अत्याधिक था तब प्रेम ॥१३६॥

जिन समाज सुपथ ध्यासा भी, दर्शनार्थ श्री के आये।
महेन्द्रगढ़ विनती स्वीकृति सुन मन में थे अति हर्षाए ॥१३७
सोहेराम पधारे जब श्री, 'कुसुम' श्री का पत्र मिला।
संशोधन हित शास्त्र पधारे, जयपुर आमन्त्रण का मिला ॥१३८
पूज्य पधार पाली, 'मोहन', मंत्री 'आत्मा' सम्मेलन।
हुआ परस्पर विचार विमर्श, करने शास्त्र सुसंशोधन ॥१३९
पूज्य पधारे शहर कोटपुर, 'राम' पधारे स्वागत को।
तथा मेड़ते कर्म-भूमि श्री, गए त्वरित ही निरखन को ॥१४०
तदनन्तर पुष्कर में श्री का, हुआ आगमन सुखकारी।
यथा मन्दिर 'ऋषभ' जिनमुख, पतिभुव था सुखकारी ॥१४१
होते हुए किशनगढ़ श्रीवर जयपुर शीघ्र पधार गए।
'रत्न' आत्मा' 'काशी सन्तों' सह के द्वारा आप गए ॥१४२
प्रातः आठ बजे से दस मध्याह्न एक से चार बजे।
शास्त्रविरोध संशयास्पद विवेचनों के साथ सजे ॥१४३
'राम बाग-चिड़िया घर' देखा, दर्शनार्थ 'आत्मा' आए।
मध्याह्न श्री 'चम्पू' 'अमर' सम्मेलन से भी हर्षाए ॥१४४
नारनौल हो पूज्य अमोलक महेन्द्रगढ़ भी पहुँच गए।
पूज्य श्री 'श्याम, सज्जन काशा परिवार पधारे दर्श किए ॥१४५
स्थानक में पूज्य अमोलक, 'मोती' एक पाठ बैठे।
मंगलाचरण सुना, भीखाशा, अतिथि भवन में श्री पैठे ॥१४६
पूज्य विराजे नो महीने तक हुए अनेकों ही व्याख्यान।
सपरिवार पधारे लाला जैन अर्जुन किया रस पान ॥१४७
तदनन्तर श्री सब्जी मण्डी में कुछ दिवस बिताए थे।
भोसागमन पे जिन प्रभा श्री भीषण रस को लेते थे ॥१४८
तब पूज्य ने सानुरोध से यू पी तरफ विहार किया।
यमुना भावों के पुल से कर पार पंजाब विहार किया ॥१४९

इस प्रकार वरसत, अम्बाला, पटियाला से नाभा को।
आए 'रामस्वरूप' 'अमर' कवि, निरखनश्री की आभाको ॥१५०
ततः पधारे मलर कोटला, स्वागतार्थ आए श्री सन्त।
'रत्नचन्द्रजी' 'काशी' आए, प्रसन्नता का था नहिं अन्त॥१५१
ततः पूज्य ने इच्छा की गुरु, कुल पॅचकूला जाने की।
किन्तु पूज्य श्री सोहन की, इच्छा दर्शन थी पाने की ॥१५२
'पूज्य' पूज्य श्री सोहन गुरुतम, आज्ञा को टाला नहीं ज़रा।
अमृतसर विहार की स्वीकृति, दे सब का मन किया हरा॥१५३
जालधर में महासती विदुषी, श्री 'पार्वती' जी पास।
करी पूज्य ने शास्त्र सुचर्चा, दिव्य ज्ञान का हुआ प्रकाश॥१५४
ततः पधारे केजडियाले, पत्री-परम्परा झगडा था।
वैमनस्य नशा आपस का, श्री ने प्रेम पसारा था ॥१५५
तदुपरांत अमृतसर श्री जी, ठहरे गेंदामल उपवन।
जन समूह खबर पा उमडा, आए सन्त पूज्य सोहन ॥१५६
पूज्य पधारे निज सन्तों सह, 'श्री सोहन स्थानक में।
प्रेमालाप परस्पर का था, दर्शनीय स्थानक में ॥१५७
तदनन्तर जालन्धर बॅगिया, नयाशहर राहो रोपड।
उपाध्याय श्री आत्मरामजी, आए सब सन्तों सह बढ ॥१५८
पचकूल हित किया त्वरित, प्रस्थान पूज्य ने मगल प्रद।
'ज्वाला' 'जमना', गुरुकुलवासी, सादर स्वागत किया सुखप्रद॥१५९
पूज्य विराजे सामायिक के, भव्य भवन सुखकारी में।
प्रशान्त वातावरण मनो, मोहक था गुरुकुल वासी में॥१६०
निर्झर झर झर कल कल स्वर कर, अविरल गति से बहते हैं।
पक्षीगण के मधुर सुगायॅन, मन आनन्दित करते हैं ॥१६१
शारीरिक, आध्यात्मिक, मानसिक, उन्नति में बढकर गुरुकुल
[illegible] से मंगल होने का, कारण है केवल गुरुकुल ॥१६२

लालाजी श्री यहां पधारे, भाषण लाभ उठाने को।
शुभ दान दिया कइयों को, दुख से मुक्त कराने को ॥१७६
संवत्सरी के दिन अगणित, श्रोतागण ने रस पान किया।
अगणित गुण से भूषित श्री का, सब ने ही सत्कार किया ॥१७७
श्री 'गिरधारी' ने तब ही, प्रस्ताव रखा यह श्री सम्मुख।
'जैन दिवाकर' पदवी दी, प्रतिदिन हो उन्नति के उन्मुख ॥१७८
तत्पश्चात पूज्य फरमाया, गुरुतर भार क्यों देते हो।
एक पूज्य पदवी श्रेयस्कर, व्यर्थ वहन क्यों रखते हो ॥१७९
श्री गिरधारी आग्रह से, श्री पूज्य पधारे हाई स्कूल।
'सर्व मान्य धरम' पर भाषण, दिया सभी के था अनुकूल ॥१८०
पूज्य अमोलक के दर्शन हित, आये दूर दिशावर्ती।
व्याख्यानों में प्रतिदिन मिश्री, की डलियां भी थी घुलतीं ॥१८१
आश्विन कृष्णा नवमी को, आये थे पंच अमृतसर से।
आवश्यकता है इसकी श्री, अब वीर सन्देश जगत सरसे ॥१८२
पूज्य अमोलक ने फरमाया, स्पर्शना जैसी होगी।
सम्प्रदाय सम्मेलन दक्षिण, में जल्दी करनी होगी ॥१८३
कार्तिक कृष्णा दुतिया को, श्री हेमचन्द्र प्रमुख आए।
समाज के संगठन विषय पर, चर्चा कर मन हर्षाए ॥१८४
जैन समाज भूषण लालाजी, भी आए दर्शन को थे।
वकील, राज कर्मचारी भी, भाषण सुनने आये थे ॥१८५
दीपमालिका दिवस पूज्य ने, वीर प्रभो के जीवन पर।
दिया रहस्य मयी भाषण था, श्री ने परिषद् को सुख कर ॥१८६
गंगादेवी ने निज आधा, भवन धर्म हित दान दिया।
कार्य रूप में परिणित हो, व्याख्यान पूज्य ने प्रथम दिया ॥१८७
लौंका जयन्ति मनाने को, श्री ने जन को उपदेश दिया।
मिगसर पूर्णिमा को श्री ने लौं, का जीवन था सुना दिया ॥१८८

चिम्मनसिंह लोढ़ा के प्रबन्ध से श्री महावीर प्रिंटिंग प्रेस
ब्यावर में मुद्रित। १०००—९ ३७

गंग तरंग (१)

ॐ

जिन-भक्ति

प्रकाशक.—
मुहता सिम्भूमल गंगाराम

जिन-भक्ति

लेखकः—सूर्यभानु डाँगी

प्रकाशकः—

मुहता सिम्भूमल गंगाराम, बलूंदा

(मुहता छगनमल)
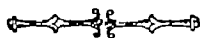
प्रथमावृत्ति २०००	मूल्य सदुपयोग	वीर स २४६२ वि स १९९२

ॐ

भूमिका

इस संसार में संगीत का माहात्म्य कितना अधिक है, यह अधिक कहने की आवश्यकता नहीं 'सगीतम्पचमो वेद:' इससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं के परम पुनीत-वेदों के समान सगीत का भी स्थान है। सगीत आध्यात्मिक रसास्वादन करानेवाली, शोक पूर्ण हृदयों को प्रफुल्लित करनेवाली कायरों की कायरता को दूर करके घोर सग्राम करानेवाली और जड में चेतन्य का दर्शन करानेवाली एक विलक्षण सजीवन बूटी है। दीपक-मल्हार आदि इस के लिये प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सगीत प्रकृति के नियमों को भी उलघन करने वाला एक अनुपम जादू है। सगीत शास्त्र विषयक आधुनिक, वैज्ञानिक प्रयोगों से वे गान नृत्य आदि के लिये एकत्रित होने वाले जन समुदाय की अभिरुचि से यह भी स्पष्ट है कि सगीत का प्रभाव लोकपर कितना अधिक पड़ता है। 'संगीत भक्ति रस का एक अनुपम साधन है' इससे आकर्षित होकर श्री 'भास्कर जी' ने आधुनिक ढग पर यह जिनेन्द्र देव की भक्ति रची है। उस वीतरागी जिनदेव के अनुपम गुणों का वर्णन बडे २ योगी राज भी नहीं कर पाते तथापि रचियता महोदय ने जिनभक्तों के लिये भक्ति रस प्रकटाने का एक अच्छा साधन उपस्थित किया है।

विनीत-

'माधव' जैन न्यायतीर्थ

प्रधान-अध्यापक

श्री मूथा जैन विद्यालय, बलूदा

॥ ॐ ॥

मेरे शब्द

बड़े आदमी कहते हैं कि पहिले कल्पवृक्ष होते थे, और वे प्राणियों के कष्ट नष्ट करते थे। अब भी कल्पवृक्ष हैं और वे हमारे सब दुःखों को दूर करते है। उनका नाम है सत्य शील और सतोष आदि। इन वृक्षों को सिंचन करने वाली है "जिन-भक्ति" 'जिन' का अर्थ होता है राग द्वेष को जीतने वाला। और जो राग द्वेष को छोड कर निष्पक्षता से सब धर्मों का समन्वय करता हुआ किसी एक धर्म पर मोह नहीं कर के अर्चा करने योग्य अर्हंत अर्थात् पूजा करने योग्य पूज्य पुरुष की आराधना करता है वही सच्चा जैन है, जिन भक्त है। उसी को सत्य शील और शाति के दर्शन हो सकते है प्रत्युत जिसके हृदय में पक्षपात, हठाग्रह और राग द्वेषादि जिन-विद्रोही दुर्गुण हैं, उसको कभी चिर शांति प्राप्त नहीं हो सकती—मोक्ष लाभ नहीं हो सकता।

जिनेन्द्र भगवान का यह उपदेश है कि सम्प्रदायो के विना धर्म नहीं टिक सकता विभिन्न सम्प्रदाय और मत मतान्तर धर्म के साधन हैं। इसीलिये उन्होंने अनेकांत का आविष्कार किया। स्याद्वाद दृष्टि मय विशाल विचारों का प्रचार किया। और सब सम्प्रदायों मे एकता ढूढने का मार्ग बताया। देश काल, भाव के अनुसार सम्प्रदाय वनता है जिस तरह जल को कोई नहीं वनाता उसी तरह धर्म को भी कोई नहीं वनाता। वनाये जाते है तीर्थ, कुए, तालाव, वावडी। उसी तरह से वनाये जाते है—सम्प्रदाय, मत-मतांतर। सम्प्रदाय पथ आदि स्वय धर्म

मों है। ये धर्म के आधार हैं। इन्हें आवश्यकतानुसार हम बनाते हैं। यह अमूल्य उपदेश देकर भगवान ने सम्प्रदायों के झगड़े नष्ट किये और सब सम्प्रदायों से प्राचीन-सनातन-जैन धर्म को स्थापित किया। राग द्वेष से रहित सम्प्रदाय बनाई। अब हमारा परम कर्तव्य है कि उस परमात्मा के भक्त बनें। और यथा शक्ति उनके गुण वर्णन करें। हमारी वाणी में वह शक्ति नहीं कि हम उनकी महिमा गा सकें। परन्तु महात्माओं के वचनों के आधार पर जो कुछ कहते हैं उसी में हमें परमानन्द प्राप्त होता है।

परमात्मा को समझाने के लिये सब से पहिले हमें अपनी दृष्टि अन्तर्मुखी करनी चाहिये। चर्म चक्षुओं को बन्द कर के अन्दर देखना चाहिये, और उस अचिन्त्य शक्ति का चिंतन करना चाहिये। वह शक्ति अरूपी है। दृश्य मात्र पदार्थों से भिन्न है। जो दिखता है वह आत्मा नहीं, जो देखता है वह आत्मा है। जो सुना जाता है वह आत्मा नहीं, जो सुनता है वह आत्मा है। जो सूंघा जाता है वह आत्मा नहीं जो सूंघता है वह आत्मा है यहां सूंघने वाले सुनने वाले और देखने वाले नाक, कान और आंख आदि इन्द्रियों से मतलब नहीं है। क्योंकि उल्लिखित कार्य आत्मा के हैं। नाक को काट कर हाथ पर रख दिया जाय तो वह सूंघ नहीं सकता। कान को काट कर सड़क पर फेंक दिया जाय तो वह वहां पड़ा २ नहीं सुन सकता। आंख को निकाल कर अलग रख दी जाय तो वह देख नहीं सकती। इन समस्त व्यापार करने वाला स्वामी आत्मा है जिसने उस शक्ति को पहिचान लिया, पूर्ण रूप से पा लिया वही पुरुषोत्तम कहलाता है, और संसार उसको तत्त्वदर्शी कहता है। उसी शक्ति को प्राप्ति करने के लिए हम सामायिक का अभ्यास करते हैं।

जिसने आत्मा का मूल्य नहीं समझा उसी को सामायिक करने में, एक घडी भर के लिये भी आत्म चिंतन करने मे आलस्य आता है आत्मा की कीमत समझाने के लिये मैं एक छोटीसी बात आप लोगों के सामने रखता हूं। हम सब से अधिक कीमती चीज हीरे को समझते हैं। परन्तु एक बात का विचार करें कि यदि हमारे पास नेत्र नहीं हैं तो वह हीरा हमारी नजरों मे तीन कोडी का पत्थर है। इससे यह बात तो सिद्ध हुई कि उस हीरे से भी अधिक हमारी आंखों की कीमत है। अच्छा अब हम और सूक्ष्म विचार करें कि यदि वह आत्मा नहीं तो हमारे वह दोनों नेत्र भी किस काम के ? इससे यह सिद्ध हुआ कि दुनियां भर के तमाम पदार्थों से वह आत्मा अधिकतम मूल्यवान है। सौ सवा सौ साल तक साथ रहने वाले इस नाशवान शरीर के लिये हम साठ घडी प्रयत्न करते है। और अनन्त काल तक साथ रहने वाले उस आत्मा के लिये हम एक घडी भी प्रयत्न नहीं करें तो यह हमारी बेसमझ है।

यहां पर एक प्रश्न उपस्थित होता है कि उस आत्मा के लिये प्रयत्न करना तो ठीक है परन्तु प्रयत्न करें तो कैसे ? कोई कहता है नमाज पढो, कोई कहता है रोजा रक्खो, कोई कहता है प्रतिक्रमण करो, सन्ध्या करो, प्रार्थना करो, कोई कहता है तीर्थयात्रा करो और कोई कहता है मंदिरों मे जाकर घण्टे हिलाओ। अपने अपने धर्म की सभी बडाई करते हैं अपनी २ ढपली और अपनी राग अलापते हैं। अब कहो हम कौनसा धर्म पालन करें ? किस का कहना मानें ? और किस के आगे नाक रगडें।

यह प्रश्न स्वाभाविक है, और इसका समाधान भी सरल है। धन कमाने वाले अलग २ धंन्धा करते हैं। कोई नौकरी करते

है, कोई व्यापार। व्यापार में भी कोई सट्टा फाटका करते हैं। कोई दलाली, सर्राफी आदि। नौकरी में भी हाकिमी करते हैं, कोई मास्टरी करते हैं तो कोई गुमास्तगिरी मुनीमी वगैरा। इसी तरह शांति प्राप्त करने के लिए तथा आत्म चिंतन करने के लिये भी, विभिन्न सम्प्रदाय होते हैं। और उनमें भी नाना प्रकार की टुकड़ियें होती हैं। जिस तरह से एक कूप में सारी दुनियाँ पानी नहीं पी सकती, एक धन्धे से सारी दुनियाँ गुजरान नहीं कर सकती। उसी तरह से एक मार्ग से एक धर्म से एक सम्प्रदाय से और एक प्रकार से आत्मा की सेवा नहीं हो सकती। आत्म सेवा करने के लिये हमको अपनी रुचि के अनुसार किसी एक सम्प्रदाय का अवलम्बन लेना चाहिये या अपनी परम्परा वाली सम्प्रदाय का आश्रय लेना चाहिये "महाजनो येन गतास्स पन्था" का अनुकरण करना चाहिये। जिस तरह से हम सब से पहिले आजीविका चलाने के लिये हमारे बाप दादों का धन्धा पकड़ते हैं। उसी तरह सब से पहिले हमारे पूर्वजों का पंथ अंगीकार करना चाहिये। फिर यदि उसमें सफलता न मिले तो समयानुसार सुविधानुसार सम्प्रदाय परिवर्तन करना चाहिये। जिस तरह नौकरी में सेवा की और व्यापार में व्यापारिकता की आवश्यकता होती है उसी तरह से सम्प्रदाय में साम्प्रदायिकता की आवश्यकता अवश्य है परन्तु दूसरी सम्प्रदाय का अनुदारता पूर्वक विरोध नहीं करना चाहिये। जिस तरह एक व्यापारी नौकरी करनेवाले को गुलाम कह कर तिरस्कार नहीं करता और एक नौकरी पेशा वाला व्यापारी को कम ॰ करने वाला कहकर बुरा नहीं बतलाता है उसी तरह हमें दूसरी सम्प्रदाय वालों को काफिर, मिथ्यात्वी, अज्ञानी आदि कहकर अपमानित नहीं करना चाहिये। मिथ्यात्वी वह है जो सत्य अहिंसा

आदि को नहीं मानता, काफ़िर वह है जो धर्म को दुःख देने वाला बतलाता है परन्तु अपनी सम्प्रदाय से भिन्न होने से ही वह अज्ञानी नहीं होजाता, इसीलिये शास्त्रों ने १५ प्रकार के सिद्ध बतलाये है। नौकरी करने वाला आलसी नहीं और व्यापार करने वाला भी आलसी नहीं आलसी है बैठा रहने वाला उसी तरह से हिन्दू काफर नहीं और मुसलमान मिथ्यात्वी नहीं। मिथ्यात्वी है सत्य के फल मे विश्वास नहीं करने वाला। इस लम्बे व्याख्यान से यही मतलब निकलता है कि हमको विशाल दृष्टि बनानी चाहिये और निष्पक्ष भाव से राग द्वेष को जीतने वाले पाखण्डों के समूह रूप जैन धर्म के स्थापन करने वाले जिनेन्द्र भगवान की भक्ति करनी चाहिये।

बस इसीलिये मैंने यह छोटासा ग्रन्थ बनाया है। मैं नहीं कहता हूँ कि मेरा कहना अन्तिम सत्य है। परतु इतना विश्वास दिलाता हूँ कि इसको पढने वाले ब्रह्म की तरफ रुचि अवश्य करने लगेंगे।

उपकार

मैं प्रूफ संशोधक व पुस्तक संशोधक प शोभाचन्दजी भारिल्ल को अनेक धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने कृपा करके यह कष्ट उठाया। साथ ही मैं दानवीर सेठ सा. श्री छगनमलजी सा. (फर्म सेठ सिम्भूमलजी गंगारामजी सा) का आभार माने बिना नहीं रह सक्ता जिन्होंने मेरे प्रयास को अपनाकर पुस्तक को प्रकाशित करने की परम उदारता दिखाई है।

आशा है अन्य श्रेष्ठिवर्य भी इसी प्रकार उक्त सेठ सा० की भांति अपने पैसे का सदुपयोग कर समाज के सामने आदर्श रक्खेंगे।

जिन २ महापुरुषों की प्रेरणा व सदुपदेशों से मुझे यह उत्साह मिला है उन महान् विभूतियों का मैं पूर्ण कृतज्ञ हूँ।

भवदीय:—

बड़ी तीज
२४६१

डॉ सूर्य-भानु जैन "भास्कर"
बड़ी सादड़ी (मेवाड़)

समर्पण

१

मरुधर के जो आदर्श सेठ, सीधे सच्चे व्यवसायी थे,
जो सब के सुखदाई थे असहायो के एक सहायी थे।
गंगा समान जो निर्मल थे अरु 'गंगाराम' कहाते थे।
जो दानवीर गम्भीर धर्म में धीर सदा दिखलाते थे॥

२

अब वर्तमान श्रीमान 'छगन' जिनके सुपुत्र कहलाते हैं,
सब तरह उन्ही के गुण वाले ही हमें दृष्टि में आते हैं।
जो हैं जिनेन्द्र के भक्त इसी से यह जिन भक्ति छपाते हैं।
लो 'सूर्य्यभानु' स्वर्गीय सेठ के सुन्दर भेंट चढ़ाते हैं॥

भवदीयः—

मूथा जैन विद्यालय
रक्षा बन्धन
२४६१

डांगी 'सूर्य्यभानु' जैन भास्कर
बडी सादडी (मेवाड)

॥ मंगल ॥

॥ दोहा ॥

करम दलन अर्हंत प्रभु, जयति सिद्ध भगवान।
छत्तिस गुण-धर धीर-वर, जय आचार्य महान ॥१॥
उपाध्याय स्वाध्याय रत, साधु करें कल्याण।
पांचों पद मंगल करें, सुमिरत 'सूरजभान' ॥२॥

उपकार

(तर्ज—कमली वाले ने)

सुख शान्ति का क्या त्रिभुवन में, बतलादिया गुरु निर्ग्रथोंने, ध्रुव
चंचल लक्ष्मी चंचल आयुष, चंचल जीवन चंचल यौवन;
इक धरम अचल जगती तल में, फरमा, दिया गुरु निर्ग्रथोंने॥१
जग बीच कमल दल जल सम बस, रहना सीखो भय भविप्राणी;
अनुभव अमृत रस भर हमको, पिलवा दिया गुरु निर्ग्रथों ने॥२
इन बाह्य वस्तुओं पर प्यारो, अपनी ममता सब दूर करो;
हम कौन ? हमारा यहां कौन ? सिखला दिया गुरु निर्ग्रथोंने ॥३
ये रूपी रूपी हैं सारे कोई न हमारे हैं साथी;
इनसे हम भिन्न अरूपी हैं, बतला दिया गुरु निर्ग्रथों ने ॥४
स्वाभाविक निर्मल सुखमय पद, निजरूप कर्म ने दबा लिया;
इस अनादि बंधन को क्षण में, तुड़वादिया गुरु निर्ग्रथों ने ॥५
उनकी सुदया से 'सूर्यभानु', कुछ आत्म तत्व का भान हुआ;
भटके ममका कस्तूरी को, समझा दिया गुरु निर्ग्रथोंने ॥६
सुख शांति का क्या त्रिभुवन में बतला दिया गुरु निर्ग्रथोंने॥मिलत

श्री जिन-भक्ति

प्रथम खंड

डाँगी चौवीसी

॥ नमस्कार ॥

ऋषभ प्रमुख महावीर प्रभु, तीर्थंकर चौवीस ।
यथाशक्ति भक्ती करूँ, जग जीवन जगदीश ॥१॥

प्रणमूँ प्रथम प्रभामयी, पृथ्वी पुत्र गणेश ।
पावन पुण्य प्रभाव से, प्रकटे प्रेम विशेष ॥२॥

विघ्न हरें मंगल करें, गुरु गौतम भगवान ।
शासनपति प्रभु वीर के, गणधर शिष्य महान ॥३॥
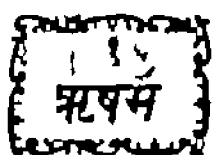
वृषभ-चिह्न] **अर्पण** [स्वर्ण-वर्ण

तर्ज—मानकोप-पपैया काहे मचायेय शोर

मुग्ध-मन-मानस ! मेरी मान,
तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव का करते रहना ध्यान। मुग्ध।
मां 'मरुदेवी' पिता 'नाभि' के प्रगट हुए सन्तान;
परमेश्वर बन प्रथम जिन्होंने, दिया सृष्टि को ज्ञान ॥१॥
गणपति नरपति सुरपति खगपति, जिनपति परम प्रधान;
सुरपति सहित चराचर सुमिरत, सकल कला गुण खान॥२॥
अजर अमर अकलेश निरंजन, दीनबन्धु भगवान;
जग जीवन प्राणों से प्रियतम, पूरण प्रेम-निधान ॥३॥
धन्य 'अष्टमी' धन्य 'अयोध्या', 'चैत्र' हुआ महान;
'चैत्र मास की कृष्ण रात्रि' में, प्रगटे त्रिभुवन भान ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ निरंतर, करता था उत्थान;
यही भावना भावे रहना, है प्रभु का गुण गान ॥५॥
गुरु नियमों ने पथलामी, सुख देय परिणाम;
सब से पहले 'सूर्य भानु' करना उनका सन्मान ॥६॥
(मिलत) मुग्ध-मन-मानस मेरी मान।

स्वर्ण] ## २ अजित [गजराज

तर्ज--सिन्धभैरवी, कालिंगडा पीलू, कानडा, चौपाई आदि

अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी, जगत जीत, निर्भयजयपामी ॥ध्रुव
'विजया' माता के प्रभु जाये; 'जितशत्रू' नृप गोद खिलाये।
जय जय तीन लोक के स्वामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥१॥
भव भव में कर्मों से हारा; कोई मिला न नाथ सहारा।
अब तू काम बना निष्कामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥२॥
कुटिल, कठोर, कदाग्रह-कामी; क्रूर, कपट-कर्तार, हरामी।
पर तू पतित उधारन नामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥३॥
कब तक यह भव रोग हरोगे; जन्म-मरण-दुख दूर करोगे ?
तुमको पाया शिवसुखधामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ सुनावे; प्रभु चरणों में चित्त रमावे।
महरकरो अनन्त विश्रामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥५॥
गुरु निर्ग्रंथों ने है समझाया; तेरा नाम मंत्र बतलाया।
'सूर्य भानु' अविचल पथगामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥६॥

मरकट] ४ **अभिनन्दन** [स्वर्ण

(तर्जः—रङ्गत मारवाडी ख्याल)

अभिनन्दन ध्याऊँ पाऊँ शिव सम्पत्ति धर्म प्रताप से ॥ध्रुव॥
काम क्रोध मद लोभ छोड कर, मै प्रभु के गुण गाऊँ;
तन मन धन सब अर्पण करके, उनके सम बन जाऊँ ॥१॥
निर्मल दर्पण सम उनमें निज, आत्म स्वरूप लखाऊँ;
ब्रह्मानन्द मग्न होकर के, अविनाशी कहलाऊँ ॥२॥
इन्द्रिय सुख को स्वप्न समझ कर, तनिक न मै ललचाऊँ;
ममता तज वैराग्य बढाऊँ, मनको अचल बनाऊँ ॥३॥
हृद् तंत्री की तान सुनाऊँ, अन्तर नाद बजाऊँ;
आत्म समान सृष्टि को लखकर, शुद्ध भावना भाऊँ ॥४॥
'संवर' पिता मात सिद्धार्था नन्दन पर बलि जाऊँ;
पूर्ण नमूना परमातम का, समझ सामने लाऊँ ॥५॥
गुरु निर्ग्रंथ ज्ञान बतलाया, उनको शीष नमाऊँ;
तीर्थंकर की सुखद भक्ति का, सबको पाठ पढाऊँ ॥६॥
सकल संघ को अनुभव के, अमृत का स्वाद चखाऊँ;
'सूर्य भानु' स्वामी ! नयनों से स्नेह अश्रु बरसाऊँ ॥७॥

सम्भव

तर्ज—दुनिया में किसी का कोई नहीं

सम्भव तीर्थंकर सुमिर सयाने, साथी तेरा कोई नहीं। ध्रुव।
सब स्वजन स्नेही स्वारथ से, सम्बन्ध स्नेह कहलाते हैं;
सहसा संकट का समय हुआ, वे समझ सहारा कोई नहीं॥ १
ना मात पिता का तू साथी, ना मात पिता तेरे साथी;
ना तू उनका रखवारा है, तेरा रखवारा कोई नहीं॥ २
परिणाम आत्म पद को प्यार, प्रभु से तू प्रेम लगा पूरा;
उस परम पुरुष परमात्मा, परभव में प्यारा कोई नहीं। ३
धन पिता 'जितारथ' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;
श्री नगर 'अयोध्या' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;
श्री संघ चतुर्विध के स्वामी, है समय समय स्थापित करते;
हम सब दीनों के दीनबन्धु बिन तारनहारा कोई नहीं॥ ४
गुरु निग्रंथों ने दया लाय, जगती तल को यह समझाया।
ए 'सूर्यभानु' उन जिनवर सम, देव दूसरा कोई नहीं॥ ५

६

पद्म

तर्ज—वनजारा

प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा, जग जीवन प्राण हमारा। ध्रुव ;
तुम तीन लोक के स्वामी, तो हम सेवा के कामी।
'श्रीधर' सुत देव दुलारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥१॥
तुम निर्मल ज्ञानी पूरे, तो हम भी नाथ अधूरे;
यह चेतन अंश तुम्हारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥२॥
यदि तुम अम्बर हम धागा, तुम सोना हम सौहागा;
तुम किस विध हम से न्यारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥३॥
यदि तुम हो सूरज स्वामी, हम किरन नयन अभिरामी;
यह भेदन हुआ लिगारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥४॥
माता 'कुसुमा' के जाये, निर्गंथ गुरु बतलाये;
हम सब के एक सहारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥ ५ ॥
तुम दीन बन्धु अविकारी, हम दीन मलीन भिखारी:
धन निगम निरूपण सारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥६॥
सम्पूर्ण संघ यों गावे, चरणो में चित्त लगावे,
जय 'सूरजभानु' अपारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥ ७ ॥

श्रेय] ५ सुमति [सर्व्य

सुनो हे सुमति नाथ भगवान, दीजिये मुझे सुमति का दान ।ध्रुव।
तुम समान कोई है न दूसरा, दीन दयाल कृपाल,
मैं सेवक तू स्वामी मेरा, लीजे नाथ सँभाल;
आप हैं सर्व गुणों की खान ॥१॥
मैं तो दीन मलीन भिखारी, नीच पतित मति हीन,
तू जिनदेव सुमति का सागर, अचल ध्यान में लीन;
करो रक्षा पापी पहिचान ॥२॥
भव समुद्र में नैया डोले कौन लगावन हार,
घड़ घड़ घड़ कर क्रोध मेघ, झर झर बरसावत धार;
बीजली माया लेती जान ॥३॥
लोभ मोह के भँवर कपट के, सर्प करत फुंकार,
डूबी जाती मेरी नैया लीजे नाथ उबार;
'मंगला' मातानी के प्राण ॥४॥
श्री निग्रंथ हमारे गुरुवर, तारन तरन जहाज,
'भव' पुत्र का शरण बताया, धन्य गरीबनिवाज;
उन्हीं का है उपकार महान ॥५॥
सकल चतुर्विध संघ तुम्हारे, शरण कमल का दास,
'सस मानु' सब आशा पूरो, कर कर्मों का नाश;
यही लो बिनती मेरी मान ॥६॥

चद्र] ८ चन्द्रप्रभ [श्वेत

(तर्ज-मगल ताल ३-शिवभोला भडारी लोगों)

चन्दा प्रभु जिन ध्यावो साधो, चन्दा प्रभु जिन ध्यावोरे।ध्रु०
सोहं ब्रह्म नित्य अविनाशी, अलख स्वरूप लखावोरे;
अजपा जाप जपो मेरे चेतन, निजगुण मांहि समावोरे ॥१॥
पूल मति का रूप एक है, भाजन विविध बनावोरे;
त्यो सर्वत्र ईश की झांकी, दुविधा भाव मिटावोरे ॥२॥
वह निर्गुण सूक्षम से सूक्षम, दृढ़तर ध्यान जमावोरे,
ब्रह्मानंद रूप सागर मे, एक भेक हो जाओरे ॥३॥
ऐसा ज्ञान करो मेरे चेतन, सिद्ध जिनंद कहावोरे;
लोकातीत पहुंच करके, अक्षय अनंत सुख पावोरे ॥४॥
कर्मन काया मोहन माया, भूख तृषा विसरावोरे;
कोई न छोटा कोई न मोटा, ज्योति में ज्योति मिलावोरे ॥५॥
'महासेन' नृप 'लिखमा मां के, सुत से प्रेम लगावोरे;
'सूर्य भानु' अष्टम जिनवर के, हित चित से गुण गावोरे॥६॥

स्वस्तिक 7 सुपार्श्व (१ सखी

तर्ज -प्रभाती, ताल—दादरा

भगवि जय सुपार्श्वनाथ प्राण से पियारे। प्र०
नृप 'प्रतिष्ठ' तात, मात 'पृथ्वि' देवी भगजात;
सुधि सुवर्ण वर्ण गात, दीन के दुलारे ॥१॥
विमलाचित दयानिधान, विशत धनु शरीर मान;
धन्य भद्रक भयस ज्ञान, शुक्ल ध्यान धारे ॥२॥
मदनमोह से विछोह, क्रोध लोभ से विद्रोह;
सुखद सुपद समारोह, सरस सोहना रे ॥३॥
नम मलोकमोद मेह, सत्य शांति का सनेह;
तीन लोक मम्रगेह, देह को निवारे ॥४॥
मक्त सब करत गान, दीजिये सुज्ञान दान;
मीनती पै राखो ध्यान, तान मान वारे ॥५॥
श्री निग्रन्थ गुरु मुनीश, देव क्ष्यापा जिनेश;
चरण शीप नमत 'सूप भानु' को निहारे ॥६॥

चंद्र] ८ चन्द्रप्रभ [श्वेत

(तर्ज-मंगल ताल ३-शिवभोला भंडारी लोगों)

चन्दा प्रभु जिन ध्यावो साधो, चन्दा प्रभु जिन ध्यावोरे।ध्रु०
सोहं ब्रह्म नित्य अविनाशी, अलख स्वरूप लखावोरे;
अजपा जाप जपो मेरे चेतन, निजगुण मांहि समावोरे ॥१॥
पूल मति का रूप एक है, भाजन विविध बनावोरे;
त्यों सर्वत्र ईश की झांकी, दुविधा भाव मिटावोरे ॥२॥
वह निर्गुण सूक्षम से सूक्षम, दृढ़तर ध्यान जमावोरे,
ब्रह्मानंद रूप सागर में, एक भेक हो जाओरे ॥३॥
ऐसा ज्ञान करो मेरे चेतन, सिद्ध जिनंद कहावोरे;
लोकातीत पहुंच करके, अक्षय अनंत सुख पावोरे ॥४॥
कर्मन काया मोहन माया, भूख तृषा विसरावोरे;
कोई न छोटा कोई न मोटा, ज्योति में ज्योति मिलावोरे ॥५॥
'महासेन' नृप 'लिखमा मां के, सुत से प्रेम लगावोरे;
'सूर्य भानु' अष्टम जिनवर के, हित चित से गुण गावोरे॥६॥

मत्स्य] ६ सुविधि [श्वेत

(तर्ज—रसिया शंकर रम रह्यो रे पहाड़न में भोला पारवती के संग)

प्रणमूँ 'पुष्पदन्त' भगवन्त, महन्त-सन्त, जयवन्त अनन्त ॥प्र०
शिवगति गमन, सुविधि कर कथन, सुविधि जिनपति मिलसन्त;
मदन मथन भय हरन, करम दल दलन नवम अरहन्त ॥१॥
सकल अमर गण हिलमिल, मंगल मय दुदुभि उच्चरन्त;
ऋषि मुनि बनगण जिनगुण, सुमिरत अनहद मोद भरन्त ॥२॥
नेति नेति कर निगम पुकारें, शासन पावें अन्त;
निज निज मति सम करत कल्पना, मनसाकृत मतिमन्त ॥३॥
नृप 'सुग्रीव' पिता, माता 'रामा देवी' के नन्द,
गुरु निर्ग्रन्थों ने बतलाया, ऐसा आनन्द कन्द ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ निरंतर, सुविधिनाथ सुमिरन्त;
दर्शन का प्यासा निशि-वासर, निश्चय मेंह बिचरन्त ॥५॥
'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थों के, चरणाम्बुज प्रणमन्त;
दीपक का ध्यान धरत भव जलधि पार उतरन्त ॥६॥

मोट—यह भजन अनुप्रास अलंकार वाला है अतः इसकी टेर (ध्रुव) को शुद्धता से पढ़नी चाहिये तब सुरेगी।

श्रीवत्स] १० शीतल [स्वर्ण

शीतल

(तर्ज—प्रभाती

नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भवि जन भव जन्य मैल धोवें।
क्षण भर में संसार सिन्धु की, वड़वानल शीतल होवे ॥१॥
धन वे जन जो मनमोती को, उनके धागे में पोवें;
सदा उन्हीं का नाम रटत, संकट में धीरज ना खोवें ॥२॥
विषय कषाय बाह्य सुख समझे, तनिक न उन पर जो मोहे;
जल में कमल-पत्र से रह कर, मोहनींद में ना सोवें ॥३॥
आत्म स्वरूप भूल करके नर, जो भव भव में ना रोवें;
मनुज जन्म को पायनिरन्तर, पावन पुण्य बीज बोवें ॥४॥
'दृढ़रथ' तात, मात 'नंदा' सुत, का निर्मल स्वरूप जोवे;
शीतल जिन के शीतल जलमें, 'सूर्य भानु' निर्मल होवे ॥५॥
नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भविजन भवजन्य मैल धोवे;
क्षण भर मेंसंसार सिन्धु की, बड़वानल शीतल होवे॥६॥-ध्रुव।

गेय] **११ श्रेयांस** [स्वर

(तर्ज ढँगाली भावनी, तरज प्रभाती में भी)

नर-पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी, नंदन घन 'श्रेयांस कुमार,
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ।।ध्रु
जगतीतल में, दश दिशि लौं, मंजु मोर किया यश का विस्तार;
उस यश के निर्मल प्रकाश से, हुआ अनेकों का निस्तार ।।१।।
अष्ट करम के दल में गाजा, मोह शत्रु का कर संहार;
इस भव-अंध भव जल निधि, से भगवंत करो मम उद्धार ।।२।।
आवागमन मिटाओ स्वामी, तुम बिन किन से करूँ पुकार;
और कुदेव हम नया धारें, उन पर भी कर्मों की मार ।।३।।
कोई क्रोधी कोई मानी, कोई विषयों का सरदार;
तू ही नाथ कलंक रहित, अति-विशुद्ध और सदा अविकार ।।४
आगम वेद पुराण शास्त्र, सुरगुरु कहवे जगदीश अपार;
भव तारक सुन नाम जिनेश्वर, आया हूँ तेरे दरबार ।।५।।
जोगी 'वृषभानु' गुण गावे, गुरु निग्रन्थों का आधार;
सकल चतुर्विध संघ प्रभु के, चरण कमल का ताबेदार ।।६।।
नर पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी नंदनघन श्रेयांस कुमार;
इस अवसर्पिणि काल मध्य ग्यारहवें आप हुए अवतार ।।मिलत

महिष] १२ वासु पूज्य (रक्त

(तर्ज गर्भी पणिहारी या देशी महाड)

श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासुपूज्य भगवान
श्री जिन मन-मंदिर आये...हो... ॥ ध्रुव ॥

राग द्वेप की ग्रन्थि हटाई.. हो.. भविकजन !
हुआ स्वरूप का भान ॥ श्री जिन०॥ १ ॥

समकित लाभ करो सुख कारी...हो.. भविकजन !
समझो अपनी शान ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥

फिर चारित्र वृत्ति को धारो. हो.. भविकजन !
क्रमिक करो उत्थान ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥

नृप "वसुपूज्य" 'जया' के जाये ..हो भविकजन !
निर्मल ज्योति महान् ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

गुरु निर्ग्रन्थो ने बतलाई . हो . . भविकजन !
शुद्ध देव पहिचान ॥ श्रीजिन० ॥ ५ ॥

'सूर्यभानु' अनुभव प्रकटाओ...हो. .भविकजन !
कर लो निज कल्याण ॥ श्रीजिन० ॥ ६ ॥

श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासु पूज्य भगवान्
श्री जिन मन-मंदिर आये हो ॥ मिलत ॥

गेरा ~] ॥ ११ ॥ [मर्या

श्रेयांस

(यह उंगारी जायगी, सरज प्रभाती में भी)

नर-पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी, नंदन धन 'श्रेयांस कुमार,
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥ध्रु०
जगतीतल में, दश दिशि लौं प्रभु आप किया यश का विस्तार;
उन यश के निर्मल प्रभाव से, हुआ अनेकों का निस्तार ॥१॥
अट करम के दल में गाढ़ा, मोह शत्रु का कर संहार;
इस भव-सिन्धु भव जल-निधि, से भगवंत करोगे अब उद्धार ॥२॥
पावनपरन भिगाओ स्वामी, तुम बिन किन से करूँ पुकार;
और क्लेश हम पाया वार, उन पर भी कर्मों की मार ॥३॥
कोई क्रोधी कोई मानी, कोई विषयों का सरदार;
तू या नाथ कलंक रहित, अति-विशुद्ध और सदा अविकार ॥४
आगम वेद पुराण शास्त्र, सुरगुरु कहते जगदीश अपार;
भव तारक सुन नाम जिनेश्वर, आया हूँ तेरे दरबार ॥५॥
जोगी 'सूयभानु' गुण गावे, गुरु निर्भयों का आभार;
सकल चतुर्विध संघ प्रभु के, चरण कमल का तावेदार ॥६॥
नर पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी नंदनधन श्रेयांस कुमार;
इस अवसर्पिणि काल मध्य ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥मिलत

१४

बाज) **अनंत** (स्वर्ग

(तर्ज रेखता ताल दादरा)

भगवंत श्री 'अनंत' सिंहसेन नन्द हैं,
खेले 'सु-जशा, गोद, चौदवें जिनन्द हैं ॥ ध्रुव ॥
जिनके अनंत निज-गुणों का पार है नहीं;
वे नित्य और सत्य चिदानंद कंद हैं ॥ १ ॥
यह दोष-भरी वाणि क्या महिमा सुनायगी ?
गुरुराज शेष शारदा, सुरिंद मंद हैं ॥ २ ॥
आगम, निगम, पुराण, वेद शास्त्र भी सभी,
बस नेति नेति नेति बोल कर के बन्द हैं ॥ ३ ॥
पहुंचे हैं अचल स्थान कर्म द्वन्द दूर कर;
गाते हैं सकल संघ यशोगान छन्द है ॥ ४ ॥
सुनलें विनय हमारी 'सूर्य भानु' अब जरा,
काटें दयानिधान ! लगे कर्म फंद है ॥ ५ ॥
भगवन्त श्री अनन्त सिंहसेन नंद हैं
खेलें सुजशा-गोद चौदवें जिनंद है ॥ मिलत ॥

पराड़] ११ [स्वर

विमल

(तर्ज गजल चाल है—क्या हुआ गर मर गये अपने के वास्ते)

'विमल' जिनके स्मरण बिन नर-जन्म तेरा भार है। ध्रुव।
कान फाड़े, जटा, बांध, सिर मुंडाये, क्या हुआ !
भक्ति बिन पाखण्ड क्रियाकांड सब बेकार है ॥ १ ॥
'पढ़ा पोथा बढ़ा पोथा, पंडता पगड़ा बढ़ा'
तिलक छापा कर खड़ा, समझा न जगदाधार है ॥ २ ॥
छन्द भरु साहित्य पढ़ क्यों व्यर्थ व्याकरणी बना,
आत्मतत्त्व न जान कर, भटका जगत मझार है ॥ ३ ॥
राग द्वेष कषाय से, सड़ने पड़े दुख लोक में,
शरण ले जिनराज का अब, शास्त्र का जो सार है ॥ ४ ॥
प्रभु बिना कोई न देखा, देव गण-मल हीन है
इसलिए संसार—जल—निधि, में वही आधार है ॥ ५ ॥
स्वामि 'सूरज-भानु' के देवाधिदेव महान् हैं,
मात श्यामा नन्द प्रभु, 'वृषभानु' के सुकुमार हैं ॥ ६ ॥
विमल जिनके स्मरण बिन नर जन्म तेरा भार है ॥ विमल ॥

पर अंतराय ने लिया मुझे आ घेरी;
करुणानिधि ! काटो, अब करमो की बेरी ॥४॥
ले ले कर 'व्रत पच्चखान' न पूरे पाले;
नर जन्म पाय कर्तव्यो को न संभाले।
बज रही भयंकर कुटिल काल की भेरी;
करुणाकर ! काटो, अब, करमो की बेरी ॥५॥
अब जन्म-मरण का दुःख न सहा है जाता;
सांसारिक सुख में सार नजर नहिं आता।
इसलिये बनाई बुद्धि तुम्हारी चेरी,
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ६ ॥
अब तुम बिन ऐसी किन को विनय सुनाऊँ;
'सुव्रता' के नंदन ! तेरी, शरणे आऊँ।
नृप 'भानु' पुत्र अब तारो, करो न देरी;
करुणाकर ! काटो, अब करमों की बेरी ॥ ७ ॥
गुरु 'निर्ग्रथों' ने हमें ज्ञान सिखलाया;
तुम पर दृढ़ श्रद्धा करना धर्म बताया।
अय ! सूर्य्यभानु ! उनकी ही कृपा घनेरी;
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ८ ॥
धर्म धर्मनाथ ! धरमावतार ! सुन मेरी,
करुणाकर ! काटो, अब करमों की बेरी ॥मिलत

१५

(स्तवन) धर्म

(तर्ज—मांढ़)

धन 'धर्म-नाथ' परमावतार सुन मेरी,
करुणा-निधि ! काटो, मम कर्मों की बेरी ॥ ध्रुव ॥

मैंने भव भव में जीव अनेक सताये,
सज्जन पुरुषों पर, मिथ्या दोष लगाये।
फँस मोह जाल में तजी भक्ति प्रभु ! तेरी;
करुणा कर ! काटो मम कर्मों की बेरी ॥ १ ॥

प्राणीश भ्रमर सम विषयों में ललचाया;
पर नाथ ! आज तक भी सन्तोष न पाया;
संचय करली अघ-मद पापों की ढेरी;
करुणानिधि ! काटो मम कर्मों की बेरी ॥२॥

ना हाय ! कभी दीनों को सुख पहुँचाया;
दुख-दाता को भी उल्टा पाठ पढ़ाया ॥
क्या कहूँ ? नाथ ! चहुँ-गति में खाई फेरी;
करुणाकर ! काटो ! मम करमों की बेरी ॥ ३ ॥

सच्चे गुरुओं ने धर्ममार्ग समझाया;
तत्त्व स्वरूप भी कई बार बतलाया ।
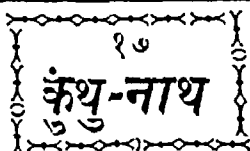
अज] १७ कुंथु-नाथ [स्वर्ण

तर्ज श्याम कल्याण या चौक भैरवी ताल ३
(कुण जाणे वावा दुनियां मे पीर पराई)

दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे;
कुंथुनाथ जिनराज हमारे, अविकारी कहलावें ॥ ध्रुव ॥

चातक ज्यों चित से करता है स्वाति वून्द की चिर आशा,
नट-कुल सकल खेल करता निश्चल मन होकर क्या खासा ।
भ्रमर अनन्य प्रेम से लेता, मालति, पुष्प मधुर वासा;
लोभी पुरुष निरंतर करता, द्रव्य प्राप्ति की अभिलाषा ॥
तैसे तीर्थंकर प्रभु स्वामी हमको अधिक सुहावै;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ १ ॥

आठों कर्मों के राजा को पहले प्रभु ने नाश किया,
समकित मोह चरित्र मोह के वल को पल में ह्रास किया ।
ज्ञानावरण दरसनावरण रु अंतराय को त्रास दिया,
वीर्य अनंत अनंत ज्ञान दर्शन अनंत को पास लिया ।
फिर न रहा ऐसा शत्रु जो, निज गुण से लड पावे,
दुनियां में ऐसा देव नज़र नहिं आवे ॥ २ ॥

१६

शांति

राग) (स्तव

(तर्ज:—पीलू प्रात अयोध्या नगरी के मांही हर्ष भरे)

शांति सरोवर शांति जिनेश्वर ! जन्मत शांति देश में छाई —ध्रुव ॥

भार मृगी दुरभिक्ष निवारे,
विविध व्याधियां नाश मिटाई ॥ १ ॥

अशरण—शरण सहायक सबके,
गावें सकल सुरेन्द्र बधाई ॥ २ ॥

भव भव में बहु देव मनायें,
पर न मिला तुम सा सुखदाई ॥ ३ ॥

अष्ट सिद्धि नवनिधि के दाता,
'अभया'—नंद अभय गति पाई ॥४॥

शुद्ध गुरु निर्ग्रन्थ हमारे,
अक्षय प्रभु की भक्ति बताई ॥ ५ ॥

विश्वसेन कुल दीपक ! स्वामी !
नृप-भानु सुमिरो चितलाई ॥ ६ ॥

शांति सरोवर शांति जिनेश्वर, जन्मत शांति देश में छाई

कल्प वृक्ष अरु काम धेनु सम धर्म मोक्ष का जो दाता;
जिन की सेवा से शुभ गति में, इच्छित शिव संपति पाता।
तारण तरण जहाज, धन्य जिनराज, त्रिलोक पिता माता,
'सूर' पिता 'श्री' देवी माता-सुत गुण गाता हर्षाता;
गुरु निर्ग्रंथो की किरपा से 'सूर्य्य भानु' दरसावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ६ ॥
कुंथु नाथ जिन राज हमारे, अविकारी कहलावे;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ मिलत ॥

करम वेदनी दूर हटा कर अव्याबाध हुए स्वामी,
आयु कर्म को क्षय कर के अवगाहन निर्मल प्रभु पायी।
नाम कर्म को नाश किया जब निराकार हो शिव-धामी,
गोत्र कर्म का मल हटा बन गये अगुरु लघु अभिरामी।
आठ गुणों को धारण कर के सिद्ध रूप को पावे,
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ३ ॥

दीन अनाथ ग्वाल बनिया गौ का हत्यारा हो पापी,
मांस मद्य खाता, पीता, छः कायों का जो परितापी।
शास्त्रों की मर्यादा तोड़ कर, झूठी भी जिसने भाषी
विषय कषाय पुष्ट करने को हिंसा करत बिना मापी
वह भी यदि शरणे आजावे, भव समुद्र तिर जावे।
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ४ ॥

आत्म प्रकाशक, जगदुद्धारक, विरद जिनेश्वर तेरा है,
तेरी महिमा का गाना जग जीवन, जीवन मेरा है।
चंद्र चकोर दंपती में ज्यों होता प्रेम घनेरा है,
त्यों तेरा ही महा प्रभो! मेरे मन मांहि बसेरा है।
धन्य भाग्य है उस नर का जो, तीर्थंकर को ध्यावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ५ ॥

कल्प वृक्ष अरु काम धेनु सम धर्म मोक्ष का जो दाता;
जिन की सेवा से शुभ गति में, इच्छित शिव संपति पाता।
तारण तरण जहाज, धन्य जिनराज, त्रिलोक पिता माता,
'सूर' पिता 'श्री' देवी माता-सुत गुण गाता हर्षाता;
गुरु निर्ग्रंथो की किरपा से 'सूर्य्य भानु' दरसावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ६ ॥
कुंथु नाथ जिन राज हमारे, अविकारी कहलावे;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ मिलत ॥

मेरापर्सी) १८ अरह (स्वर्षी

तर्ज—सोरठ, मुझ आयाँ बोल मोरा, र, मारे श्याम बिना जीवरोरा

जो अरहनाथ को ध्यावे, हो, सब दु ख नष्ट हो जावे ॥ ध्रुव

निर्गुण मम सिद्ध सम प्राणी,
निज स्वरूप को पावे, हो, जो० ॥१॥

जग जीवन की झीनी चदरिया,
प्रभु का रंग चढ़ावे, हो, जो० ॥२॥

चौरासी योनी में भटक्यो,
फिर वासना भावे, हो, जो० ॥ ३ ॥

मानव-जन्म अमोलक पायो;
विरथा नाँहि गमावे, हो, जो० ॥४॥

'देवि' 'सुदर्शन' नृप नंदन का;
चहुँ दिसि यश गुंजावे हो, जो० ॥५॥

'सूयमाल' गुरु निग्रंथों के,
चरणों शीष नमावे, हो, जो० ॥६॥

१९

कुंभ] **मल्लि** [नील

तर्ज—गजल ताल ३, इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी ॥ ध्रु० ॥

जग की वन-स्थली में, हम मोर बन के नाचें;
तुम मेघ बन के आना, सूखी पड़ी है क्यारी ॥१

जल के सरोवरो में, हम फूल बन खिलेंगे;
तुम सूर्य्य बन के आना. अँधियारि रात कारी ॥२

फूले फले अनूठें, उद्यान हम बनेंगे,
ऋतु राज बन के आना, शोभा बने निराली ॥३

बन कर चकोर स्वामी, देखेंगे राह तेरी;
तुम चंद्र बन के आना, निरखें छटा तुम्हारी ॥४

हम दीन हीन बन के, दर पर खड़े रहेंगे;
दातार बन के आना, हमको समझ दुखारी ॥५

संसार में हमारे गुरु देव हैं सहारे,
सब को उन्हीं ने तारे, अब की हमारी बारी ॥६

धन तात 'कुंभ' माता, 'परभावती' के प्यारे;
अय 'सूर्य्य भानु ! 'मेरे मन में बनो बिहारी ॥७

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी ॥मिलत ॥

मैं] १० [स्तवन

मुनि-सुव्रत

(तर्ज—मल्हार)

मुनि सुव्रत स्वामी, अन्तरयामी, महिमा तेरी अपार ॥टेर॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, अचल अमल अविकार;
एक, अनेक, अखंड, सूक्ष्म-घन, अनुपम सुख-दातार ॥१॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरालंब, निगम-निरूपण-सार;
निराकार निर्भय, निखिलेश्वर, निष्कलंक अवतार ॥२॥
तेरी सिद्ध दशा सम मेरा, आत्म-स्वरूप, विचार;
जीता जीव भिन्नता से यह, अति भासित संसार ॥३॥
शुक सेमर मृग तृष्णा सम, संशय संसार मंझार;
चौपरि रमत स्वप्न संपति सम कल्प्य जगत व्यवहार ॥४॥
वंध्या सुत आकाश पुष्प सम, मन कल्पना पसार;
स्वात्मप्रकाश ध्रुव निज स्वरूप समझत स्व-आनन्द धार ॥५॥
'सुमति' पिता 'पद्मावति' माता-नन्दन सुगुणागार;
"रूपभानु" अनुभव स्थिति अपनी, गुरुओं का आधार ॥६॥
मुनिसुव्रत स्वामी अन्तर्यामी महिमा तेरी अपार ॥ मिलत ॥

नलि कमल) २१ नमि (स्वर्ण

(तर्जः—मेरे मौला बुलालो मदीने मुझे)

नमीनाथ प्रभु से मिलादो कोई,
सारे बंधन दूर भगादो कोई ॥ध्रुव॥

चैन पड़ता है नहीं हमको यहां अब तो जरा
प्रभु के अनोखे रूप ने मन भक्ति भावों से भरा।
जरा चहरा सुनहरा दिखादो कोई ॥ नमी ॥१॥

यहां ढूंढा वहां ढूंढा दर बदर फिरता फिरा
पर पता पाया नहीं दिन रात दुखों से घिरा।
कहां छिप कर है बैठा बता दो कोई ॥ नमी॥२॥

इस समय इस काल में इक्कीसवां जिन राज था
"विजय" "विप्रा" नंद था भवियों का जो सिरताज था
उनका चारू चरित्र सुनादो कोई ॥ नमी ॥ ३ ॥

सत्य शिव सौंदर्य मय, जिनका स्वरूप महान् है

ज्ञान मय शुभ ध्यान मय सम्पूर्ण सौख्य निधान है।
अनुभव अमृत का प्याला पिलादो कोई ॥नमी४॥

मल रहित धन सिद्ध पदवी पर अचल आसीन है
निज गुणों में लीन हैं जो सचमा मय हीन हैं।
मेरी उनसे ज्ञुदाई हटादो कोई ॥ नमी ॥ ५ ॥

डाँगि सूरजभानु को निर्ग्रन्थ ने समझा लिया
इसके संसार जल-निधि में शरण पकड़ा दिया।
भव करमों का दुःख छुड़ादो कोई ॥ नमी ६ ॥

२२

शख) # नेमि (श्याम

(तर्ज लावणी कव्वाली)

भज भव "नेमिनाथ" भगवान दया का पाठ पढ़ाने वाले ।ध्रुव।
माता शिवा देवि के जाये, नृपति समुद्र विजय सुख पाये।
हरि के अनुज नाथ कहलाये, यादव वंश दिपाने वाले ॥१॥
आप आयुध शाला में जाय, दिया पंचानन शंख बजाय।
भगे सुन वासुदेव महाराय, त्रिखंडी नाथ कहाने वाले ॥२॥
देख कर सहसा नेमि कुमार पड़े गिरिधर अचरज मंझारे
प्रभु ने उनका जान विचार, बने भुज दण्ड बढ़ाने वाले ॥३॥
कहा 'माधव'! सुनलो यह बात! झुकादो आप हमारा हाथ,
लटके बाहू पर यदुनाथ, नाथ! हरि को शरमाने वाले ॥४॥
कृष्ण ने अतुल जान बलवान चढ़ाई आडम्बर से जान।
टेर सुन पशुओं की भगवान, नार राजुल छिटकाने वाले ॥५॥
चढ़ें गिरिनार हमारे स्वामी तीर्थंकर बन शिव गति पामी।
'सूरजभानु' मोक्ष का कामी गुरु निर्ग्रन्थ, सिखाने वाले ॥६॥
भज मन 'नेमिनाथ' भगवान दया का पाठ पढ़ाने वाले ॥मिलव॥

माग) २१ (मास

पार्श्व

(तर्ज—म्हारे मैं तो दरद दिवानी, मारा, दरद न, जाने कोय)

मन में आप बसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ ध्रुव ॥

रोम रोम में रमिये स्वामी;
ज्यों फूलन में गंध ॥ मन में० ॥ १ ॥

अंग अंग में प्रेम रंग हो;
ज्यों भृंगन मकरंद ॥ मन में० ॥ २ ॥

विषय संग आसंग न होवे;
ज्यों जल में अरविंद ॥ मन में० ॥ ३ ॥

नाग नागिनी देव बनाये;
'पद्मावति' धरणिन्द ॥ मन में० ॥४॥

कमठा सुर उपसर्ग मचाये;
डिगे न ज्यों मंघाकिन्द ॥ मन में० ॥५॥

'अश्वसेन' 'वामा' के नंदन,
'सूर्य भानु' सुख कंद ॥ मन में० ॥ ६ ॥

मन में आप बसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ मिलन ॥

सिह] २४ महावीर [स्वर्ण वर्ण

(तर्ज आशावरी ताल धमाल)

मैं तो आयो शरण तुम्हारी, वीर प्रभु! दीनों के हितकारी ।ध्रुव।
'चंडकोशि' को नाथ उधारा महा परीषह भारी,
अर्जुन माली था महा पापी, पहुंचा मोक्ष मंझारी ॥१॥
पावांपुरी में समवसरण की, सुन्दर छटा निराली;
गौतम प्रमुख इग्यारह पंडित, करण विवाद विचारी ॥२॥
इन्द्र जालिया कहते २ आये बारी बरी,
मनका संशय दूर निवारी, किये महाव्रतधारी ॥ ३ ॥
आनंदादिक श्रावक तारे, चंदन बाला नारी,
धन्ना शालि भद्र उद्धारे, अति महिमा विस्तारी ॥ ४ ॥
धरम नाम पर पशु हिंसा, करते थे घोर अनारी,
परम धरम का मरम बताया, धन्य दया अवतारी ॥ ५ ॥
शूद्र जनों को अधिक सताते थे जब अत्याचारी,
हरि केशी आदर्श बनाये, किये मोक्ष अधिकारी ॥ ६ ॥
तारे तात सिद्धारथ राजा, अरु त्रिसला महतारी
ऐसे आप अनेकों तारे, अबकी हमारी बारी ॥ ७ ॥
शासन के सरदार निहारो, दर पर खड़ा भिखारी,
अब स्वामी मत देर लगाओ, सूर्य भानु बलिहारी ॥ ८ ॥
मैं तो आयो शरण तुम्हारी, वीर प्रभु दीनों के हितकारी। मि॰

मंगल

(छंद—कुंडलियां)

१९ ९१

सम्वत सहस्र विक्रमी, कार्तिक का था मास,
दीपावलि के शुभ दिवस उदित हुआ उल्लास।
उदित हुआ उल्लास, 'भक्ति प्रभु की सुखदाई',
यही समझ कर 'सूर्य भानु' चौपाई गाई।
नित प्रति तीनों काल, पढ़ेंगे जो नर नारी,
सिद्ध लोक के निश्चय, होंगे अधिकारी ॥१

(दोहा)

गुरु निर्ग्रंथों की कृपा, पाया सत्य विवेक,
सकल चतुर्विध संघ को, भेंट करी है एक ॥२॥

श्री जिन भक्ति

द्वितीय खण्ड

१

सपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज—होली, दुमरकी, "अब मदन देश पधारो रसिया")

मिल भाओ, रे, चोवीस जिन ध्याओ मिल भाओ ।धुव।
ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन;
सुमतिनाथ के गुण गाओ; मिल० ॥१॥
शीतल जिन सिरियंस सुमिर लो,
वासु पूज्य भज सुख पाओ; मिल० ॥२॥
विमल अनंत धर्म तीर्थंकर;
शांति नाथ को सिर नाओ मिल० ॥३॥
कुंथु अरह मल्ली मुनि सुव्रत,
नमि नेमि मत बिसराओ मिल० ॥४॥
पारसनाथ वीर प्रभु स्वामी,
जिन शासन में हुलसाओ; मिल० ॥५॥
गुरु निर्ग्रन्थ देव बतलाया,
'सूर्यभानु' शरणे आओ, मिल० ॥६॥
मिल भाओ र चोवीस जिन ध्याओ, मिल भाओ ॥मिलजा॥

२

संपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज काली कमली वाले तुम पर लाखों सलाम)

तन मन तुम पर वारे, मेरेप्यारे जिनंद, मेरे प्यारे जिनंद ५,॥ध्रुव

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन;
सुमति पदम सुपारस चंदन ।
दीनो के दुलारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ १ ॥

सुविधि सितल सिरियंस मुनीश्वर;
वासु पूज्य सिरि विमल जिनेश्वर।
अनंत नाथ सहारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ २ ॥

धर्म, शांति, 'कुंथू, अर स्वामी;
मल्लिनाथ, मुनि सुव्रत नामी।
नेमि नमी रखवारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु;
ग्यारह गणधर विहर मान विभु ।
ये सब धर्म सितारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥४॥

अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन,
मुनिमन रंजन, भवदुख भंजन ।
सिद्ध सुपद को धारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥५॥

उपाध्याय आचार्य हमारे,
सकल संत जन धर्म दुखारे।
पाँचों पद विस्तारे मेरे प्यारे जिनंद ॥ ६ ॥
गुरु निर्ग्रंथों ने सिखलाया,
यों नवकार मंत्र बतलाया।
"सूर्य भानु" स्वीकारे, मेरे प्यारे जिनंद ॥७॥
तन मन तुम पर वारे मेरे प्यारे जिनंद मेरे प्यारे जिनंद ॥

३

सपूर्ण-जिन भक्ति

(तर्ज—अल्ला हू अल्ला हां)

मेरे तो सहारे जिनवर हैं, जिनवर हैं ३ ॥ ध्रुव ॥

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन,
सुमति पद्म सुपारस चंदन ।
दीनो के दुलारे जिनवर हैं३ ॥१॥

सुविधि सितल सिरि यंस जिनेश्वर,
वासु पूज्य सिरि विमल मुनीश्वर ।
अनंत शिवपुर वारे जिनवर हैं३ ॥२॥

धर्म शांति कुंथु अर स्वामी,
मल्लिनाथ मुनि सुव्रत नामी ।
नेमि नमिश्वर प्यारे जिनवर हैं३ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु
ग्यारह गणधर विहरमान विभु ।
ये शासन रखवारे जिनवर हैं३ ॥४॥

अजर अमर अखिलेश निरंजन,
मुनि मन रंजन भव दुःख भंजन ।

सिद्ध सुपद को धारे जिनवर हैं२ ॥५॥

उपाध्याय आचार्य हमारे,
सकल संघ जन धर्म दुलारे।
पांचों पद विस्तारे जिनवर हैं२ ॥६॥

गुरु निर्ग्रन्थों ने सिखलाया
यह नमस्कार मन्त्र बतलाया
'सूरज भानु' हमारे जिनवर हैं२ ॥७॥

४

सिद्ध-जिन

(तर्ज-होली)

सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन, सच्चा आनंद मनाओ, रे,
सिद्ध पद ध्याओ, रे ॥ ध्रुव ॥
पांचों विषयों में रचि पचि क्यों अपनी शान गंवाओ रे
परमारथ पाकर सांसारिक दुख हटाओ रे ॥ सिद्धपद० १ ॥
चंचलता को दूर निवारो, निश्चल मन बन जाओ रे;
दर्पण सम चित मांहि, ब्रह्म का रूप लखाओ रे ॥२॥
आगम वेद पुरान शास्त्र का सार समझ गुण गाओ रे,
आत्म गुणों का अनुभव कर के, लगन लगाओ रे ॥ ३ ॥
दर्शन ज्ञान अनन्त अटल संस्थान अतुल बल पाओ रे
निराकार लघु गुरू विहीन; गुण को प्रकटाओ रे ॥४॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निर्मल तम कहलाओ रे,
'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थो पर प्रेम जमाओ रे ॥ ५ ॥
सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन सच्चा आनंद मनाओ रे,
सिद्ध पद ध्याओ रे ।

५

सिद्ध जिन

(तर्ज—आ, आ, आ दिल जान, भर २ जाम पिला गुलफाम
बनादे मतवाला)

जय जय जय भगवान—
अजर अमर अखिलेश निरंजन जयति सिद्ध भगवान ॥ध्रुव

अगम, अगोचर, तू अविनाशी,
निराकार, निर्भय सुख—राशी।
निर्विकल्प, निर्लेप निरामय निष्कलंक निष्काम ॥ जय० ॥१

कर्म न काया मोह न माया,
भूख न तिरखा रंक न राया।
एक स्वरूप अनूप अगुरुलघु निर्मल ज्योति महान ॥जय०२

हे, अनन्त ! हे, अंतरयामी;
अष्ट गुणों के धारक स्वामी।
तुम बिन दूजा देव न पाया त्रिभुवन से उपराम ॥जय०॥३॥

गुरु निर्ग्रंथो ने समझाया;

सच्चा, प्रभु का, रूप बताया।

अब तुम में ही मिल जाऊँ मैं ऐसा दो वरदान ॥जय०॥४॥

'सूर्य्य भानु' है शरण तुम्हारी

मेरी करना प्रभु रखवारी ।

मुझ में तुझ में भेद न पाऊँ, जय २ कृपानिधान ॥जय०॥५

जय...जय...जय भगवान–अजर अमर अखिलेश निरंजन

जयति सिद्ध भगवान ॥ मिलत ॥

सिद्ध जिन

(तर्ज—आखिर नार पराई है)

मेरे मन में आना रे, अपना रूप दिखाना रे ॥ ध्रु ॥

जब मैं तेरा ध्यान लगाऊँ;
बस तुझ को ही तुझ का पाऊँ।
ऐसी लगन लगाना रे अपना० ॥ १ ॥

तन मन धन तुम पर विसराऊं;
तेरा ही प्रभु ! अंश कहाऊं।
ज्योति में ज्योति मिलाना, रे, अपना० ॥ २ ॥

तेरी है प्रभु अकथ कहानी,
हारे ब्रह्मा विष्णु भवानी।
निर्गुण को समझाना रे, अपना० ॥ ३ ॥

सोई ब्रह्म नित्य अविनाशी,
अशरण-शरण, सदा सुखराशी।
जन्म रू मरण मिटाना, रे, अपना ॥ ४ ॥

गुरु निर्ग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
"धन्य मानु" ने भजन सुनाया।
निर्भय पद पहुँचाना रे, अपना० ॥ ५ ॥

मेरे मन में आना, रे, अपना रूप बताना, रे, ॥ मिलना॥

७

देव

(तर्ज—पितु मातु सहायक स्वामि सरन तुमही इक नाथ हमारे हो)

जिन-पति, जिन-वर, जगदीश, नाथ, तुमही, इक इष्ट हमारे हो
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव-भय-भंजन हारे हो॥ ध्रु.

शुभ गुणागार धरमावतार, जग-जीवन, प्राण हमारे हो,
महिमा तुम्हार, पावै न पार, सुरगुरु सरिसहु बुध हारे हो॥ १

कर काम क्रोध मद लोभ हान, शुभ शुक्ल ध्यान को धारे हो;
करुणा निधान, संपूर्ण ज्ञान की संपति के अधिकारे हो॥ २

कर क्षीण मोह अरु द्रोह कर्म-संदोह विदारन हारे हो,
भय-कारि भवोदधि मांहि परै, जीवों के एक सहारे हो॥ ३

जँह लौ आकाश अवस्थित है, तंह लौ महिमा विस्तारे हो;
श्री सकल संघ के "सूर्य्यभानु" तुमही इक रच्छन हारे हो॥ ४

जिन-पति जिनवर जगदीश नाथ तुम ही इक इष्ट हमारे हो,
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव भय-भंजन हारे हो

अक्षय ज्ञान सुधा-निधि, दूषण गण से रहित गिरा गुण खान।
वृंदारक-पति-पूजित, मंगल मय हों सदा वीर भगवान॥

———

८

गुरु

तर्ज—गजल बाम चमाल, अगर हम बागवां होते तो गुलशन

पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ध्रुव ॥
पंच इन्द्रिय विजय कर के, हुए जो विषय के त्यागी,
जो नवविधि शील के धारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ १ ॥
चतुर्विध तज कषायों को, बने संयम के अनुरागी;
करें शासन की रखवारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ २ ॥
त्रिगुप्ती युक्त पाँचों महाव्रतों को शुद्ध जो पालें,
विमल श्रुत ज्ञान है भारी धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ३ ॥
आहार निर्दोष लाते हैं, बयालिस दोष को टाली,
वाणि जिनराज की प्यारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ४ ॥
भजो निर्ग्रन्थ गुरुओं को, सकल श्री संघ हितकारी,
यह 'सूरजभानु' बलिहारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ५ ॥
पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ मिलत ॥

पाप-पराग पुंज प्रणाशक पावक पावन पुण्य प्रधान
होवें मंगल रूप निरन्तर, सद्गुरु सर्वे-दया-निधान ॥

६

धर्म

(तर्ज—पहाडी धुन हमारे वशी वाले से नाहिं बनेगी)

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ ध्रुव ॥

समझे जग के सुख सब ठग हैं।

ठगाये गये हम मारे करम के ॥धरम०॥१॥

रीझे हुए थे मनोहर तन पै,

भरे मांस मज्जा रुधिर औ चरम के ॥धरम०॥२॥

पा गये वस्तु हमारी हमी में;

फिरते फिरे, मारे मारे भरम के ॥धरम०॥३॥

गुरु निर्ग्रन्थ मिले उपकारी;

सुनाये वचन हमको पूरे मरम के ॥धरम०॥४॥

मोहनींद से तब हम जागे,

सुन्न हुए अब मारे शरम के ॥धरम०॥५॥

'सूर्य भानु' अनुभव प्रकटाये;

जान गये गुण पुरुष परम के ॥धरम०॥६॥

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ध्रुव॥ मिलत॥

जन्म मरण दुख जगत में, जागो रे मति मान।

'सूर्यभानु' आराध लो, जैन धर्म गुण खान ॥

१०

जिन-वाणी

(तर्ज—सुखकर दुख हर प्रणत पाल प्रभु जय रघुराई जय जय)

जय कल्याणी, जय सुखदानी, जय जिनवाणी, जय, जय ॥ध्रु०

महावीर मुख कमल प्रकाशी,
सुमिरत सब दुख जावे नाशी ।
नमस्कार सौबार करूं मैं जय गुण-खानी जय, जय ॥१॥

स्याद्वाद गल हार विराजै,
सप्तभंगी नय भूषण भ्राजै ।
माला दया धर्म की साजै, जय जग-मानी जय, जय ॥२॥

तेरे लिये देव गण तरसें,
तीर्थंकर मुख अमृत बरसे ।
मोह कर्म बल जाय मूल से जिसने ठानी, जय, जय ॥३॥

भजन कियौं करमन दल भाजे,
दिव्य ज्ञान की ज्योति जु जागे ।
पाँच पटल अघहर अक्षय सुख मग लग प्राणी जय, जय ॥४॥

अब कर्म दावानल तायो,
'डांगी सूरज' शरणे आयो ।
भवसागर से पार उतारो, जय महारानी, जय, जय ॥५॥
जय कल्याणी, जय सुख-दानी, जय जिनवानी, जय, जय ॥मि०

अजर अमर करते हमें, अमृत सम जिन वैन,
सच्चे सुख-दाता सदा, आराधौ दिन रैन ॥

११

सिद्धांत

(तर्ज—श्यामकल्याण, थी राधे रानी द वारो नी बेसरि मोटी)

प्रभु ने जो देखा सो होई ॥ ध्रुव ॥

भारत ध्यान करत जो निशि दिन;

है अति मूरख सोइ ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

अपने पुरुषारथ का प्यारे,

दंभ करो मत कोइ ॥ प्रभु० ॥ २ ॥

व्यर्थ विचारों में रचि पचि के;

क्यों मरते हो रोइ ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

होना हो सो होय रहेगा;

त्यागु चिन्ता सोइ ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

इस जग में सब ने ही भोगे

सुख दुख के फल दोइ ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

'सूर्यभानु' मत-मस्त रहो सब,

निज पद मेंह मन पोइ ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

प्रभु ने जो देखा सो होइ ॥ मिलत ॥

१२

पार्श्व-चरित्र

तर्ज—पचरंगी ढोया)

धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी;
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मनभाये जी॥ध्रुव

१

निज शयनागार सजा सोई महारानी,
महाराज, उसे सुख निद्रा आई जी,
देखे चौदह शुभ स्वप्न सुनो सब ध्यान लगाई जी ॥
गज उज्जवल, श्वेत वृषभ, देखा बनराई,
महाराज, देख लक्ष्मी सुख पाई जी,
लख सुमन माल, रवि, शशि, दर्शन कर अति हरसाई जी ॥
नभ मंडल में फिर ध्वजा एक फहराई;
इक कलश कमल सरवर भी दिये दिखाई।
लख पयनिधि, सुर विमान, फूले न समाई;
फिर रत्न राशि, अरु, अग्नि शिखा दरसाई।
पति शय्या पर जाय, दिये स्वप्न सुनाय,
नर पति हरसाय, कहा मन में विचार ॥२॥

प्रिये ! पुत्र ऐसा प्रकटेगा,
जो भव भव के रोग हरेगा।
या होगा छः खंडी स्वामी;
या होगा तीर्थंकर नामी॥

ईसा से आठ सौ वर्ष पूर्व हे स्वामी!,
महाराज, आप भारत में आये जी, धन 'काशी नरेश कुमार' नाम त्रिभुवन मन भाये जी॥ १॥

२

धन पौष मास धन कृष्ण पक्ष सुखदाई,
महाराज, धन्य दशमी तिथि आई जी,
प्रभु तीर्थ हुए तेइसवें तीर्थंकर जिन-राई जी॥

कराय मान निज आसन लख सुरराई, महाराज विचारे ज्ञान लगाई जी प्रभु जन्म समझ कर तुरत सुघोषा घंटि बजाई जी।

सुर असुर इन्द्र इंद्राणी मिल कर आवें;
अपना पूरा सौभाग्य समझ सुख पावें।
नाचे दे २ ताल रागिनी गावें;
कनकाद्रि शृंग पर जा प्रभु को न्हवरावें॥

अपना कर्तव्य कर; रक्खा चरणों में सर;
सुर गये निज घर; हुआ उत्सव महान २॥

वंदी दुर्जन दिये छुडाई,
घर २ सुख प्रद बॅटत वधाई ।
उस छवि को हम कैसे गावें,
जिसका सुर गुरु पार न पावें ॥
क्या कहूं ? नाथ, माता, मन में हर्षानी,
महाराज, पुण्य के फल प्रकटायेजी,
धन काशि नरेश कुमार नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥२॥

३

रमते रमते इक दिन गंगा तट आये,
महाराज चरण से नदी छुआनी जी,
तब से सुर-सरिता का कहलाता, निर्मल पानीजी ॥
पारस प्रभु के उन चरण कमल को ध्याओ,
महाराज, महा मंगलमय मानी जी
जिनके प्रभाव से आज अहो गंगा पूजानी जी ॥
उस तट पर ढोगी एक तपस्वी आया,
उसने अपना आडम्बर खूब बनाया,
राजा को भी लोगो ने जाय सुनाया,
दर्शन कर के वह भी मन में सुख पाया ॥
भोले, योगी, प्रकार कहें पारस कुमार,
तप तेरा असार अरे ज्ञान विचार २

नाग नागिनी जलते माई
काष्ठ चीर प्रत्यक्ष दिखाई ।
योगी अपनी शान गंवाई
क्रुद्ध हुआ सुध बुध बिसराई ॥

नव पद दे नाग नागनी को उद्धार,
महाराज इन्द्र इन्द्राणि बनाये जी ॥
धन कासि नरेश कुमार, नाथ त्रिभुवन मन भायेजी ।।३॥

४

फिर तीस बरस तक गृहस्थ धर्म निभाया,
महाराज, जगत निस्सार लखाया जी
फिर नगर बनारस निकट सकल ममत्व हटाया जी ॥
दीक्षा भगवति की धार सत्य सुख पाया,
महाराज धर्म का मार्ग सुहायाजी,
धन कमठ सुर उस योगी ने उपसर्ग मचायाजी ॥

मूसलाधार जल रज बरसा बरसाई ।
भय-प्रद प्रेतों को छोड़ त्रास दिखलाई ॥
उस पापी ने पर्याप्त व्याधि पहुंचाई;
उल्टे उस पर प्रभु ने समता बरसाई ॥

नहिं क्रोध विकार, प्रभु के दिल मझार,

क्षमा कर दी अपार, धन धन जिनराज २

धन धरणेन्द्र देवकी माया ।
द्रव्य दुःख प्रभु का विसराया ॥
केवल ज्ञान आप प्रकटाया;
भाव दुःख को दूर भगाया ।

अचला विमला केवल कमला को पाई,
महाराज वीतरागी कहलाये जी
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥
द्रुम 'अशोक' के नीचे प्रभु आप विराजे,
महाराज, सुर सुमन वृष्टि रचाई जी;
पैंतिस विधि वानी शिवसुखदानी आप सुनाई जी ।
प्रभु चरण कमल कर स्पर्श ऊर्ध्व गति पावै,
महाराज, चमर युग रहे सिखाई जी,
उस रतन जटित सिंहासन पर प्रभु मूर्ति सुहाई जी ॥

तन का प्रकाश भामंडल रूप बनाया,
देवो ने नभ में दुंदुभि शब्द बजाया,
सब भजो त्रिलोकीनाथ, त्रिछत्र धराया ।
आठो प्रतिहार्य्य सुनाय सत्य-सुख पाया ॥

सत गुरु निरग्रंथ, समझाया शिव पंथ, कर निगमो का मंथ, धन २ गुरुराज, धन धन गुरु राज ॥

नाग नागिनी जलते भाई
काष्ठ चीर प्रत्यक्ष दिखाए।
योगी अपनी शान गंवाई
क्रुद्ध हुआ सुध बुध बिसराई॥

नव पद दे नाग नागनी को उद्धारा,
महाराज इन्द्र इन्द्राणि बनाये जी॥
वन काशि नरेश कुमार, नाथ त्रिभुवन मन भायेजी।।२॥

४

फिर तीस बरस तक गृहस्थ धर्म निभाया,
महाराज, जगत निस्सार लखाया जी
फिर नगर बनारस निकट सकल मजाल हटाया जी॥
दीक्षा भगवति की धार सत्य सुख पाया,
महाराज धर्म का मार्ग सुझायाजी,
वन कमठ सुर उस योगी ने उपसर्ग मचायाजी॥

मूसलाधार जल रक्त बरसा बरसाई।
भय प्रद प्रेतों को छोड़ त्रास दिखलाई॥
उस पापी ने पर्याप्त व्याधि पहुंचाई,
उस्टे उस पर यम ने तलवार चलाई॥

नहिं क्रोध विगार, प्रभु कर दिया उपकार,

१३

भगवती मल्लि

तर्ज—तेरी कुदरत की गुल क्यारी, कायम है फुलवारी, फूल रही है कैसी ये फुलवारी वारी बलिहारी, तेरी कुदरत की गुल क्यारी [नाटक की रंगत]

जयति जयति मल्लि कुमारी, जय भगवती हमारी,
तीर्थंकरी...जगत उद्धारन
हारी .वारी बलिहारी, जयति २ मल्लि कुमारी ॥ध्रुव॥

'कुंभ' पिता की एक दुलारी,
'प्रभावती' माता की प्यारी।
तुम समान को हुई न नारी,
जय जय जग महतारी . वारी बलिहारी०॥१॥

रूपवती अति मोह निगारी,
हुई स्वयंवर की तय्यारी।
छः राजा मोहे अति भारी,
आये सभा मंझारी ..वारी बलिहारी० ॥२॥

पुतली तुमने एक बनाई,
अन्न कौर से उसे भराई।
ढक्कन खोल उन्हें समझाई,
तन की अशुद्धताई . वारी बलिहारी० ॥ ३ ॥

चिन्तामणि पारस को ध्याओ;
मन मन में आनंद मनाओ।
पारस लोह सुवर्ण बनावै;
"पारस" निज सम गुरु प्रकटावै॥

यह 'सम्य भानु' प्रभु पर बलिहारी जावै,
महाराज, चरण में शीश झुकावे जी
धन 'काशिनरेश' कुमार नाथ, त्रिभुवन मन भाये जी ॥५॥

धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी।
धन काशीनरेश' कुमार नाथ त्रिभुवन मन भाये जी॥मिलन

१४

धर्म के नाम पर

तर्ज—मरना है इक रोज क्यों ना मेरं वतन की शान पर हां मेरं वतन की शान पर मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर, मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर मेरे सोने के हिन्दोस्तान पर।

मरना है इक रोज क्यों ना मरें धरम के नाम पर,
हॉ, मरें धरम के नाम पर मेरे जैन धरम के नाम पर,
मेरे दया धरम के नाम पर ॥ ॥

महावीर प्रभु का गुण गावें,
कुत्सित देवों को न मनावें।
वारें तन धन प्राण जिनेश्वर देव गुणों की खान पर, हाँ मरना०॥१

आओ जैनी वीरो आओ,
जैन धर्म पर बलि २ जाओ।
नाचें फिर इक रोज जिनेश्वर नाम सभी के जुबान पर, हाँ मरना०२

सत्य वृत्ति को कभी न छोडें
दया धर्म से मुख ना मोड़ें
फिर इक दिन फहराय वीर का झंडा जगत जहान पर हां, म.॥३॥

बरसी दान दियो श्री कारी
दान महात्म्य बता भारी ।
जैनी दीक्षा को अवधारी,
पाये तीर्थ चारी बारी बलिहारी० ॥ ४ ॥
जग में जीव अनेकों तारी;
नारि जाति प्रतिमा विस्तारी ।
मोह दशा को दूर निवारी,
पहुँची मोक्ष मंझारी बारी बलिहारी०॥५॥
गुरु निर्ग्रन्थों ने समझाई,
तेरी महिमा हमें बताई ।
अकल सब अविचल निधि पाई;
सूरज भानु' सुनाई बारी
बलिहारी जयति जयति मल्लि कुमारी,
जय भगवती हमारी ॥ तीर्थंकरी
जगत व्यसन हारी बारी बलिहारी
जयति जयति मल्लि कुमारी ॥६॥

१४

धर्म के नाम पर

तर्ज—मरना है इक रोज क्यों ना मरें वतन की शान पर हां मरें वतन की शान पर मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर, मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर मेरे सोने के हिन्दोस्तान पर।

मरना है इक रोज क्यो ना मरें धरम के नाम पर,
हॉ, मरें धरम के नाम पर मेरे जैन धरम के नाम पर,
मेरे दया धरम के नाम पर ॥ ध्रुव ॥

महावीर प्रभु का गुण गावें,
कुत्सित देवो को न मनावें ।
वारें तन धन आशा जिनेश्वर देव गुणो की खान पर, हॉ मरना० ॥१

आओ जैनी वीरो आओ,
जैन धर्म पर बलि २ जाओ ।
नाचें फिर इक रोज जिनेश्वर नाम सभी के जुबान पर, हॉ मरना० २

सत्य वृत्ति को कभी न छोड़ें
दया धर्म से मुख ना मोड़ें
फिर इक दिन फहराय वीर का झंडा जगत जहान पर हां, म.॥३॥

पंच परमेष्ठी मन्त्र हमारा,
सही जान से हमको प्यारा।
होंगे सफली भक्त भरोसा रखते हैं भगवान पर, हां, म॥४॥
सुख दुःख में ना धर्म को भूलें;
सभी आफतों को हम सहलें।
भारत भारत बेस भग हम जन्म हिन्दोस्थान पर, हां, म॥५॥
सादा सीधा जन्म बितावें;
गुरु निर्ग्रन्थों को हम ध्यावें।
उछलें 'सूरजभान' सदा हम महावीर के नाम पर हां, म॥६॥
मरना है इक रोज क्यों ना मरें धरम के नाम पर० ॥मिलता॥

१५

सच्चे जैनी

(तर्ज—झंडा ऊँचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा)

सर्व धर्म सम भाव दिखावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥ध्रुव॥

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,
सिक्ख, बुद्ध, सब ही हैं भाई;
सब ने प्रभु की महिमा गाई ।
सब को अपने गले लगावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥१॥

राम, कृष्ण अरु बुद्ध हमारे,
ईशु मुहम्मद धरम दुलारे ।
जैन धर्म को सब ही प्यारे;
आओ सब को शीष नमावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥२॥

जब २ जैसे कष्ट पड़े थे ।
अत्याचार असंख्य बढ़े थे ।
जो उन पापों से झगड़े थे;
उन को श्रद्धांजलि पहुँचावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥३॥

नर नारी गोरा या काला,
ऊँच नीच, बालक या बाला ।
गूँथें इन पुष्पों की माला;

सब को सम अधिकार दिलावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥४॥

वेद पुरान कुरान पढ़ावें
सब धर्मों का मर्म बतावें,
उनमें प्रभु दर्शन करवावें ॥

तन मन धन 'जिन' पर विसरावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥५॥

सत्य दया का नाद गुंजावें,
विश्व प्रेम का राग सुनावें,
पक्षपात को दूर भगावें ।

'सूर्य भानु' निर्मल सुख पावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥६॥

१६

उपदेश

(तर्ज—भोले राजा खिड़कियां खोल रसकी बूंदें झरे)

भोले भय्या भजन कर ले, उमरिया बीत रही ॥ध्रुव॥

छिन छिन में छीजत है काया,
माया में तू क्यों भर माया।
प्रभु का ध्यान धर ले, उमरिया बीत रही ॥ १ ॥

बड़े २ पृथ्वी पति स्वामी
रहे न कोई यहां मुकामी
सुजस का घट भर ले, उमरियां बीत रही ॥ २ ॥

क्रोध मान को दूर भगादे,
दया सत्य में प्रेम लगा दे,
ईश्वर से डर ले. उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥

दुर्लभ मानुस तन को पाया,
विषयों में क्यो व्यर्थ गमाया।
अब सुकरत कर ले, उमरिया बीत रही ॥ ४ ॥

गुरू निर्ग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
'सूर्य भानु' को यों समझाया।
भव सागर तिरले, उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥
भोले भय्या भजन कर ले उमरिया बीत रही ॥ मिलत ॥

१७
बच्चों का भजन

सुनो बच्चों की करुणा पुकार,
दीन बन्धु! हैं शरण तुम्हारी।
और नहीं आधार,
सुनो शिशुगण की करुणा पुकार ॥ ध्रुव ॥
सूरज बन मन मंदिर आओ,
अंधकार अज्ञान नसाओ।
सब सुख के दातार ॥ १ ॥
सदाचार का पाठ पढ़ाओ,
जीवन का रहस्य समझाओ,
निर्गुण गुण आधार ॥ २ ॥
देश दुखी है नाथ! हमारा
'सूर्य भानु' हम बनें सहारा।
भर दो शक्ति अपार ॥ ३ ॥
सुनो हम सब की करुण पुकार,
दीन बन्धु हैं शरण तुम्हारी,
और नहीं आधार,
सुनो बच्चों की करुण पुकार ॥मिलता॥

१८

वीर--जयंती

(तर्ज—उडा कर ले गया पंछी मेरी जंजीर सोने की)

आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं ;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ॥ध्रुव॥
धरम के नाम पर पापी, किया करते थे जब हिंसा,
दयामय धर्म बतलाया, उन्हीं का यश सुनाते हैं ॥१
नीच समझा था लोगो ने हमारी शूद्र जाति को;
उसी हरि केशि को संसार का स्वामी बनाते हैं ॥२
'पैर पैजार' कह, स्त्री जाति का अपमान करते थे,
महासति चंदना को मोक्ष में सीधा पठाते हैं ॥३
परीषह घोर सहकर के उबारा, चंड कोशी को,
दुष्ट 'अर्जुन' को भी तारा, उन्हीं को सिर झुकाते हैं ॥४
इन्द्र ने यों कहा आकर, रहूँ मै साथ रक्षा को,
कहा, अर्हंत अपनी शक्ति से ही मुक्ति पाते हैं ॥५
अहो, श्री संघ मे स्वामी! ज्ञान के फूल खिल जावें,
विजय हो जैन शासन की भावना शुद्ध भाते हैं ॥६
अरे, इस 'सूर्य्य भानु' के सदा प्रभु ही सहारे हैं;
उन्हीं ही की कृपा से भजन सुंदर हम बनाते हैं ॥७
आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ॥मिलत

१९

महावीर-चरित्र

(तर्ज—जागयी)

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी;
मरि मंडल में मार्तण्ड, परम अवतारी ॥ ध्रुव ॥
क्यों हो न ! भाग्य मय देश गौरव धारी;
जहां प्रकटे आप आप से जग हित-कारी ।
धन राय 'सिधारथ' 'त्रिशला दे' महतारी ॥
उत्पन्न किया नंदन, त्रिभुवन-भय-हारी;

॥ दोहा ॥

फैला था अज्ञान का अंधकार मरि मंड;
इसीलिये प्रकटित हुए थे, मार्तण्ड प्रचण्ड ।
पाखंड हरि सर्वत्र करी उजियारी;
महि मंडल में मार्तण्ड परम अवतारी॥१
? न वचन सुधा-माधुर्य्य अनूपम धारी;
भविजन-मन-मोहन-सदा शांति विस्तारी ।
सद् दया धर्म सुषमा सर्वत्र प्रसारी;
यह जैन-समाज रहेगी ऋणी तुम्हारी ॥

॥ दोहा ॥

अजर अमर संसार में वर्द्धमान भगवान;
जिन की वाणी है अभी,तारण तरणि समान।

घन दर्शन ज्ञान सुसंपति के अधिकारी,
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी ॥२॥

होती पशु हिंसा धर्म नाम पर भारी,
उस देश व्याप्त हत्या को दूर निवारी ।
पैरो की जूति कहार्ती थी जब नारी;
तब चंदनबाला भेजी मोक्ष मंझारी ॥

॥ दोहा ॥

शूद्रों को पैरो तले, कुचल रहे जब हाय,
उसी समय हरिकेशि को बना दिया मुनिराय।

सब शीप झुक दे दभी अत्याचारी,
महि मंडल मे मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ ३ ॥

बोला जब इन्द्र जिनेन्द्र शब्द उच्चारी,
मै रहूं साथ अब कष्ट पड़ेंगे भारी ।
तब बोले दीनानाथ ! उसे ललकारी;
सुर राज ! वचन बोलो तुम जरा विचारी ।

॥ दोहा ॥

तीर्थंकर की शक्ति का, क्या न तुम्हें है ज्ञान ।
स्वाभिमान की मूर्ति हैं, इनको लो पहचान ॥

कांटेंगे हमारे कर्म यही असुरारी,
महि मण्डल में मार्तण्ड परम अवतारी ॥ ४ ॥

गौतम से ग्यारह पंडित लिया धारी,
जो पांच २ सौ शिष्यों के परिवारी ।
सब बने साथ अणगार पञ्च आचारी;
थे जिन-शासन के 'सूर्य्य भानु' रखवारी ॥

॥ दोहा ॥

गुण जिनराज अनेक हैं तारण तिरण जहाज,
यथा शक्ति उल्लास से, स्वल्प सुनाये आज ॥

नहिं अधिक और कहने की शक्ति हमारी।
महि मंडल में मार्तण्ड परम अवतारी ॥ ५ ॥

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी,
महि मंडल में मार्तंड परम अवतारी ॥ मिलत ॥

जिन भक्ति

तृतीय खण्ड

आज है तो कल नहीं

(हरि गीतिका)

फूल फल उद्यान में फूला फला, दरसा, अहो,
आज 'सूरजमान' वह कुम्हला गया क्यों कर, कहो ।
एक सा होता कभी संसार का प्रति पल नहीं,
यह दशा अपनी, समझलो, आज है तो कल नहीं ॥१॥

दीप्त किरणों से छिपाकर विश्व को चमका रहा,
शाम को वह ढल गया, हमको यही सिखला रहा ।
सोच 'सूरजमान' सूरज भी सदा निश्चल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥२॥

आज तो देखा जिन्हें था राग रंग उमंग में,
कल उन्हें हमने निहारा, सिर पकड़ते दुख में;
देख 'सूरजमान' सुख दुख, अनवरत अविचल नहीं
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नहीं ॥३॥

मान मत करना कभी अपने विभव धन धाम का,
याद 'सूरजमान' करना, नाम रावण राम का ।

तीन खंड नरेश को मरते समय था जल नहीं ;
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नही ॥४॥

मिल गया नर-जन्म दुर्लभ छोड राग-द्वेष को,
कृष्ण-गीता के अनोखे याद कर उपदेश को ।
कर्म 'सूरजमान, कर पर हाथ तेरे फल नहीं ;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥५॥

७

संसार

अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥ध्रुव॥

अणु २ परिवर्तित है प्रतिपल।
इसीलिए कहलाता चंचल।
सत्य रूप से अचल, विमल है नित्या नित्य विचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥१॥

अभी जन्म है अभी मरण है,
अभी श्वास है अभी शरण है।
धूप छांह सम हास अश्रुमय जीवन का संचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥२॥

अभी बाल है अभी युवा है,
अभी वृद्ध है अभी मुआ है।
कैसा रे, परिवर्तन मय है यह निष्ठुर व्यापार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥३॥

यहां कहां रे, शांति चिरंतन
कर्म दलों का निबिड़ निबन्धन।
'सुप्रभानु' है संग निरन्तर सृजन और संहार;
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥४॥

३

लाख बात की है एक बात

(मनहर)

दीवानी में नाहिं फौजदारी हू में नाहि,
नाहिं राज कचेहरी हू की पाया जी हुजूरी में।
मास्टरी मे नाहिं कछु डाक्टरी में नाहिं,
औ क्लेक्टरी में नाहिं नाहिं कलर्क की मजूरी में।
वैरिस्टरी माहिं नाहिं नाहिं ब्रेक्सीनेटरी में,
सेठ हूकी किसी फेक्टरी की मैनेजरी में।
"सूर्य्य भानु लाख बात की है यह एक बात,
सब सुख पाया एक संतोष सबूरी में ॥१॥
सिश्री में न पाया मधु माखन में पाया नाहिं,
दाखन मे पाया नाहिं लाख लाख लेखिये।
पाया न मयूख में पीयूख हू में पाया नाहिं,
चूँख चूँख ईख हू को चाहे आप फैंकिये।
सुधा में न पाया सुधा, पान कर हारा मै तो,
नहीं पाया प्यारी के अधर चूम पेखिये।
'सूर्य्यभानु' लाख बात की है यह एक बात,
सब रस पाया जिनवाणी सुन देखिये ॥२॥

इन्द्र न सुहात, धरमेन्द्र न सुहात
चमरेन्द्र न सुहात सिकरेन्द्र न सुहात है।
नरेन्द्र न सुहात, न महेन्द्र हू सुहात रंच,
चन्द्र न सुहात दिवसेन्द्र न सुहात है।
संसार के और सुख वैभव सुहात नाहिं,
कुबेर को कोष हू सो कुछ न सुहात है।
'सूर्यभानु' खास बात की है यह एक बात,
नाथ-नाथ त्रिशला को लाल मन भात है ॥७॥

(छप्पय)

जहँ तहँ मिलैं अनेक, शास्त्र पढ़कर समझावें,
जहँ तहँ मिलैं अनेक राग और रंग सुनावें।
जहँ तहँ मिलैं अनेक निरन्तर ढोंग बनावें,
जहँ तहँ मिलैं अनेक चमत्कारी कहलावें।
'सूर्यभानु' सब ही मिलैं, अपनी २ टेक,
आतम ज्ञानी ना मिलैं खास बात की एक ॥८॥
मिलैं निरोग शरीर मिलैं मन गिनत सहारे,
मिलैं धरा धन धाम मिलैं परिवार पियारे।
मिलैं राज और पाट मिलैं अधिकार निराले,
मिलैं जगत के ये दुख मय सुख वैभव सारे।
'सूर्यभानु' सब ही मिलैं काम न सुधरे नेक,
आत्म तत्व पाया नहीं खास बात की एक ॥९॥

४
कौम के खातिर

(मनहर)

कौम के खातिर श्री 'निकलंक' जू,
बौद्धो के हाथ से प्राण गवावै
कौम के खातिर 'गोविन्द' के सुत,
जीते जी द्वार में जाय चुनावै।
कौम के खातिर राणा 'प्रताप' जू,
जंगल जंगल कष्ट उठावै।
'सूरजभानु' तू है मुरदा कुछ,
कौम के खातिर काम न आवै।१।
कौम के खातिर 'सेनयतीन्द्र' जू
भारत पै बलिदान चढ़ावै,
कौम के खातिर छात्र 'गणेश' जू
जन्म की भूमि पर स्वर्ग सिधावै।
कौम के खातिर 'मोहन गांधि' जू
जीवन का सर्वस्व लगावै।
सूरजभानु तू है मुरदा कुछ
कौम के खातिर काम न आवै।२।

५

श्रावसी

पायो अभिराम धाम ठाम २ नाम पायो,
पायो विस्राम पायो धनधाम राजसी,
सुख को सामान पायो, अधिक आराम पायो,
पर यह प्रीति प्रभु भीनी बलधारसी।
वर्द्धमान भगवान भजले भर, सुमान,
भाव रस लेना न तो पीछे पछतावसी।
मस्त मान मान, कह रागी 'सूर्यभानु' सुन
खोयो नर जन्म फर हाथ नहिं आवसी॥

महिमा जिन राज की

कहत कहत मुनिराज कविराज हारे,
कीरति कलाप भवि जन सिर ताज की
लिखत २ सुर गुरुराज कहत अपार गुण
गण गाथा गरीब निवाज की
सुनत सुनत महावीर के निराले जस,
चकित भई है मति सुजन समाज की।
'सूरजभानु' आज तोहे तनिक न आई लाज,
कहने के काज रे, महिमा जिनराज की ॥

विनय

मम हृदय कमल, विकसित कर, रे, ।।
यह विनय विमल उर में धर, रे, ।।ध्रुव।।

दिनकर बन कर सघन गगन पर
रुचिकर मनहर अरुण वरण भर।
अतर में छिपकर, अन्तर-तर,
चमक अनुपम चिर-स्थिर, रे,
मम हृदय कमल विकसित कर, रे ।।१।।

स्नेह-सुधा का स्रोत बहा दे,
शिव सुख मय सुषमा सर सा दे।
कोमल ललित लहरी लहरा दे,
विप्लव मय जीवन भर रे,
मम हृदय-कमल विकसित कर रे ।।२।।

शत्रु मित्र पर एक भावना,
त्रिभुवन की कल्याण कामना,
"सूर्यभानु" की यही प्रार्थना,
विहरित करना भर घर रे,
मम हृदय कमल विकसित कर रे ।।३।।

मम हृदय कमल विकसित कर रे,
यह विनय विमल उर में धर, रे ।।मिलत।।

८

दिव्य-संदेश

अंधी श्रद्धा को जड से, सब खोद बहाओ, अय पुण्येश;
हो स्वतंत्र श्रम करो सदा, पावोगे तुम साफल्य विशेष।
कर्मवीर बन कर विचरो, अति धीर महा गंभीर महेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुन लो अतुल दिव्य संदेश ॥१॥

द्रव्य भाव हिंसा को त्यागो त्यागो फूट कपट अरु क्लेश;
सादा खाओ सादा पीओ, सादा रक्खो अपना वेश।
क्रम से क्रम से चढो तभी चढ पाओगे तुम सिद्धि नगेश।
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुन लो अतुल दिव्य संदेश ॥२॥

सत्य धर्म के हेतु कटे चाहे अपना सिर क्यो न हमेश,
प्यारो! कटवाओ प्रसन्नता से, मत डरो कभी लवलेश।
अरे, सहायक है हम सब का एक वही नव पद मंत्रेश,
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश ॥३॥

पर उपकार करो तन मन से रहे न कोई श्रम अवशेष;
पर न करो अभिमान रंच, कहलाओगे तुम सभ्य नरेश।
करो नहीं निंदा दुष्टो की, दुष्ट प्रकृति की तोड़ो रेश;
ज्ञात पुत्र श्रीवर्द्धमान के, सुनलो अतुल दिव्य संदेश।

राग द्वेष को दूर भगाकर, तजो कषाय का अवशेष;
फिर तज दो मद दर्शन अरु चारित्र मोहनी कर्म अशेष।
उसी समय लग जाय हृदय में केवल ज्ञान रूप दिनेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान का सुनलो अतुल दिव्य संदेश।
जर्जर बाकी कर्म अघा कर, बन सकते हो सिद्ध जिनेश,
बन जाओगे पूर्ण ज्ञान सुख बल के अति गंभीर बलेश।
जन्म मरण विनिर्मुक्त कहाओगे, योगी 'सूरज' अखिलेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश॥

६

जुरती नहीं जोरी

(मनहर)

टूटी हार जुरी जाये, कोई तदबीर हू ते,
जुरिजाये चाहे कैसे मोती हू की मनियां ।
टूटी फूटी काच की कटोरी चाहे जुरिजाय,
जुरि जाये चाहे दृढ़ हरि हू की कनियां ।
पत्थर की शिला चाहे सिम्मट से जुरि जाये,
जुरि जाये तीखी २ लोह हू की अनियां ।
"सूर्य्यभानु' एती टूटी जुरती हू जोरी पै,
जुरति नहीं जोरी टूटी मन केरी तनियां ॥

१०

देश महिमा

(भजन)

जय जय प्यारा हिन्दोस्थान

जिसने पैदा किये हमारे वर्द्धमान, गौतम गुण खान,
आनन्द कामदेव से गृहपति, बाहुबलि से विक्रम महान् ।
धन्ना जैसे महा तपस्वी, शिवि मुनि जैसे दया प्रधान,
हरिश्चन्द्र से दानवीर थे, मेघरत्य से त्यागी जान ॥
अरणक जैसे धर्म धीर, ध्रुव, ढंढण जैसे दृढ़ प्रणवान ।
कपिल दधीचि वशिष्ठ अत्रि से ऋषि प्रवर थे ज्ञान निधान,
भीष्म पिता अरु सेठ सुदर्शन, अतुल ब्रह्मचारी परधान ।
अर्जुन भीम पवन-सुत से थे, बड़े २ भारी बलवान ।
हेमचन्द्र अरु उमा स्वामि से थे, आचार्य महा विद्वान ।
जिन्हें देख कर दूर भागता था, पाखण्ड मोह मद मान ॥
बड़े बड़े ऋषि मुनि यति तपसी, धर्म मर्म पारगत, ज्ञान
जिनसे प्यारा देश हमारा, कहलाता था स्वर्ग समान ॥
भोज विक्रमादित्य मोरध्वज, अकबर जैसे थे सुलतान,
कालिदास से महा कवीश्वर, गाते थे जिनका गुणगान ।

जिसमे प्रकृति छटा छहराई के कि वृन्द की केक महान् ।
अलि कुल कलरव करत सदा अरु कोकिल करती सुन्दर गान।
सर सर सरतीं सरस सुर सरित सुर सुतासर सती सुसान ।
सुरसा सरस सरसतीं सरसो सरस रसिक सामी पहिचान ।
डांगी 'सूरजभानु' यहां थे कैसे रे, आदर्श महान ।
देख छटा इस भारत माता की विस्मित था सर्व जहान ॥

जय जय प्यारा हिन्दोस्थान

श्रावण शुक्ला ३ १९८४	**सर्व प्रथम** रचना	गांधावत जैन गुरुकुल छोटी सादड़ी (मेवाड़)

(धुन)

जिन-पति जिनवर जय जय वीर
भवसागर तारक महावीर ॥

सत्य ही जीवन मेरा है,
सत्य ही जीवन मेरा है।
सत्य के बिना अंधेरा है,
सत्य का ईश्वर चेरा है ॥

सत्य जगतीतल का शृंगार,
सत्य-बिन मनुज-जन्म बेकार ॥

११

भगवती अहिंसा

माता ! तूने उपजाये थे 'राम' 'कृष्ण' से पूत सपूत ।
सत्यदेव की धर्म-सहचरी ! भेजे 'वीर' 'बुद्ध' से दूत ॥
दानवता का मारा जब माँ ! जन-समाज अकुलाया था ।
ईसु मुहम्मद दयानन्द से सब संकट विसराया था ॥
सब तीर्थंकर सब पैगम्बर तेरे दास कहाते हैं ।
सब पुरुषोत्तम सभी सुधारक तेरे स्रोत बहाते हैं ॥
अब अत्याचारो से जगको त्रस्त हुआ तूने देखा ।
तब खैची हम सब के उर मे सुखद शान्ति की स्मित रेखा ॥
सत्यदेव से भी न जगत का कुछ भी कभी सुधारा हो ।
करुणाशीले ! अगर न उनको तेरा पूर्ण सहारा हो ॥
सत्यदेव के साथ अम्बिके ! निज दर्शन देते रहना ।
सब विरोधियों के प्रहार को सीख जायंगे हम सहना ॥
अन्यायों के मर्दन मे जो सूक्ष्म रूप रहता तेरा ।
उसे सदा समझाते रहना कायरता न करे डेरा ॥
तेरा वेष बना करके जब कायरता छलने आवे ।
तब तू असली रूप बताना राक्षसी न ठगने पावे ॥
धर्म धर्म चिल्लाकर जो ठग स्वार्थ-साधना करते हैं ।
दीनो की अबलाओ की आहों से जरा न डरते हैं ॥
उनको सच्चा मार्ग सुझाने नवयुवकों में शक्ति भरो ।
'सूर्य्यभानु' बस यही विनय है त्रिभुवन में घर घर विहरो ॥

१२

भगवान से

अपना रूप बता दो ॥

ढूंढा मथुरा ढूंढी काशी,
क्या न पड़ा कहीं के वासी।
शिव सुन्दर अक्षय सुख राशी,
सब रहस्य समझादो। अपना० ॥१॥

वेद पुराण शास्त्र पढ़ २ कर
भी समझा न तुम्हें मूरख नर
अज़र, अमर, सुख, कर, शंकरवर,
अनुभव सुरस चखादो। अपना० ॥२॥

कोई कहत महा त्रिपुरारी,
हम कहत अरहन्त पुकारी।
कोई मुहम्मद बुद्ध मुरारी,
नाम मंत्र सिखलादो। अपना० ॥३॥

कब २ कैसे कष्ट पड़ेंगे,
अत्याचार असंख्य बढ़ेंगे।
होकर उनसे विमुख अड़ेंगे;
यह भविष्य चमकादो। अपना० ॥४॥

दीनों के पालन में तुम हो,
दुष्टों के घालन में तुम हो।
अगुर संचालन में तुम हो,
कह विवेक प्रकटादो। अपना० ॥५॥

पाप पुंज में पले हुए है,
माया से हम छले हुए हैं,
तृष्णा से हम जले हुए हैं।
चित की तपन बुझादो। अपना०॥६॥

स्वार्थ-वासना के भूखे हैं,
अरु स्वभाव के भी रूखे हैं।
तरुवर जीवन के सूखे है,
शांति स्नेह बरसादो। अपना०॥७॥

कर्मों का मारा मैं स्वामी,
अब तो तारो अंतर्यामी।
अविचल सुख का हूं मैं कामी,
सब आवरण हटादो। अपना० ॥८॥

तेरे दर पर खडा हुआ हूं,
विषयों के वश पडा हुआ हूं,
मोह गर्त में गड़ा हुआ हूं,
ऊंचा नाथ उठादो। अपना०॥ ९ ॥

जिसके मन-मंदिर में आओ,
अंधकार अज्ञान हटाओ।
जग के सब सुख दुःख बिसराओ,
निर्मल प्रेम भरादो। अपना० ॥१०॥
आओ मेरे प्यारे आओ,
मुझ पर तो अधिकार जमाओ।
हृत्तन्त्री के तार बजाओ,
मन को मस्त बनादो। अपना०॥११॥
मैंने लाल रतन को पाया,
फिर क्यों कंकर हाथ उठाया।
निज का ही तो मान भुलाया,
अंधर शोर मचादो। अपना० ॥१२॥
भीलन को मोती न सुहावे,
मोती मूल्य नहीं घट जावे
उन्हें छोड़ घरमें मुसकावे;
सच्ची परख करादो। अपना०॥ १३॥
दुर्जन मुझ पर थूकेंगे,
सारमेय गज पर भूंकेंगे।
वे समझा निश्चय चूकेंगे,
सीधा पाठ पढ़ादो। अपना०॥ १४॥

एक बार वह गाना गादो,
गगनांगन में ध्वनि मंडरादो,
मीठी मीठी तान सुनादो,
गहरी नाद गुंजादो । अपना० ॥१५॥

जग में तो दुख ही दुख पाया,
सुख का नाम नजर नहीं आया।
इससे प्रभु का भजन बनाया,
सुन्दर साज सजादो । अपना० ॥१६॥

चाहे हो मति ठीक ढंग में,
करी प्रार्थना यह उमंग मे ।
छनी छनाई मधुर भंग में,
नीला रंग जमादो । अपना० ॥१७॥

'सूर्य्यभानु' है शरण तुम्हारी,
जन्म-मरण को दूर निवारी ।
यही विनय जिनवर, अब धारी,
शिवपुर में पहुंचादो । अपना० ॥१८॥

११
सत्य भक्त से

भगवान सत्य के भक्त वीर !

तन मन में भर साहस अथाह,

कन कन में भर कमनीय कांति;

जीवन में भर सौन्दर्य शान्ति ।

करुणोदधि में भर मधुर नीर, भगवान के सत्य के भक्त वीर।

भय-मद कवित्व भरे विचार,

भरु गतानुगति मय मूढ़ भ्रांति।

जग में समूल हो जोश प्यार;

फैलाना ऐसी प्रबल क्रांति ।

पर रहना मति गम्भीर धीर। भगवान सत्य के भक्त वीर।

तुमको समझूंगा राम कृष्ण,

ब्रह्मा, शंकर, धर्मावतार ।

ईसा मसीह, जरथुस्त, बुद्ध;

पैगम्बर पुरुषोत्तम उदार ।

तुमको मानूंगा महावीर। भगवान सत्य के भक्तवीर॥

तुम तेज पुंज तुम दिव्य ज्योति,
तुम प्रिय स्वदेश के रत्न लाल।
तुम स्वाभि मान की विमल मूर्ति;
तुम विश्व प्रेम के गृह विशाल।
तुम कुरूढ़ियों के लिये तीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥४

कह लघु वय वर का है सुभाग,
बच्चों पर करते अनाचार।
हा! बाल वृद्ध अनमेल व्याह;
अबलाओं पर भीषण प्रहार।
विगलित करना वैधव्य वीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥५

इन पढ़े लिखो की सब विभूति,
जल थल करके होरही छार।
बेकार फिरें क्या करें हाय;
इनमे न कला कौशल प्रचार।
इन को बतलाना सुतद वीर। भगवान सत्य के भक्तवीर॥६

ये मुफ्त खोर अज्ञान बाल,
मुनि-साधु नाम धारी गंवार।
खाते औरो का व्यर्थ माल;
लोभी लम्पट पूरे लबार।
हटवाना इनकी बुरी भीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥७

है घर घर में डाकिनी फूट,
"तू तू मैं मैं हा ! लूटमार ।
आपस आपस में मद भाव;
हा ! कैसा संकीरण विचार ।
बिहरा नवयुग की खरममीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ।
हैं बड़े बड़े ये धनी सेठ,
जिनकी सम्पत्ति का नहीं पार ।
मामर, मोसर, गगोज, मोज;
ही में व्यय करते हैं असार ।
क्यों हैं लकीर के ये फकीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ।
जो पकड़ एक कर में कृपाण,
उसकी करलेना तीक्ष्ण धार ।
फिर काट कुकर्मों का विपाक;
हिम्मत मत खाना बन्धु ! हार ।
है भचक्ष धर्म की यही सीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥१०
जीवन है समरस्थल महान,
होकर सतर्क करना विहार ।
है विजय लाभ अति कठिन काम;
पग पग पर रहना होसियार ।
यह 'सूर्य भानु' विनती अखीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥११

१४

सत्य-सेवक से

सत्य के सेवक बढते चल,

तेरे चरण चिन्ह शिव-सुख-मय ।

जीवन पर अंकित कर निर्भय,

विजय श्री पावेगा निश्चय ।

उर अम्बर में हो अरुणोदय ॥

विफल न खोना पल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥१॥

बाधाएं चढ़ बढ कर आएं,

नूतन नूतन रंग बनाएं ।

क्यो हम दुर्बलता दिखलाएं;

उनकी शक्ति कुचलते जाएं ।

हो न कभी चंचल । सत्य के सेवक बढते चल ॥२॥

सत्य ही है तेरा आधार,

इसी से होगा बेडा पार ।

विरोधी दल का हाहाकार,

समझना तू अपना सत्कार ॥

प्रण से तनिक न टल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥३॥

आखिर एक समय आयेगा,
पूर्ण सफलता तू पायेगा ।
सब के संकट बिसरायेगा,
जग तेरी महिमा गायेगा ।
अतुल मिलेगा फल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥४॥

सिद्ध, बुद्ध, जरथुस्त, राम को,
गुरु गोविन्द जिनन्द श्याम को ।
महम्मद पैगम्बर इस्लाम को,
ईसा के पावन पैगाम को ।
करना खूब अमल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥५॥

दम भईत न लाना प्यारे,
इन्हें सर्वथा रखना न्यारे ।
जीवन के हैं शत्रु हमारे,
नष्ट करेंगे अयत्न सारे ।
"सरजभानु" समझ । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥६॥

१५

कवि से

कवि, गाना गादे.

प्रबल शोर मच जाय गगन में गहरी नाद गुंजा दे।

कवि, गाना गादे ॥ ध्रुव ॥

कांप उठे सहसा वन उपवन,

तरुवर गिरि-गहवर, अंबर-धन।

सरिता सर वर ग्रह उपग्रह गन,

उछले सागर का चंचल मन,

ऐसी क्रांति मचादे, कवि, गाना गादे ॥ १ ॥

मिटे जगत की दुखित दीनता,

मनुज जाति की पराधीनता।

आपस की सब मन-मलीनता,

विभव--जन्म अनुराग हीनता।

मधुरी तान सुनादे, कवि, गाना गादे ॥ २ ॥

अरुणोदय की किरण २ पर,

उदधि ऊर्मि पर अंबुज गण पर,

द्युति पर च्विति पर रज कण २ पर।

क्षण के अणु २ पर तृण २ पर।

अपनी ध्वनि पहुंचादे, कवि, गाना गादे ॥ ३ ॥

विघ्न छिन्न हों वसुधा भर में,
विपुल शांति हो नगर नगर में।
प्रचुर प्रेम प्रकटे घर २ में,
जीवन के सूख सरुवर में,
निर्मल श्रोत बहा दे, कवि, गाना गा दे ॥ ७ ॥

विहग राग में राग मिलावें,
सरिता सर २ शब्द सुनावें।
स्वर से नभ जल थल भर आवे,
सुरनर मुनि सुध बुध बिसरावें।
मोहन मन्त्र चलादे, कवि, गाना गादे ॥ ८ ॥

कभी न समझें प्रेम भंग में,
बहें स्नेह की जल तरंग में।
संग २ में एक रंग में
'वृषभानु' अपनी उमंग में।
सब को रंग बनादे, कवि, गाना गादे ॥ ६ ॥

१६

अर्हन्त शरण

अनवरत अवलम्बन अभिराम,
अवस्थिति शून्य हृदय-विश्राम।
अनूपम अमित सौख्य का धाम;
अहा! अर्हन! तेरा शुभ नाम॥

१७

सिद्ध-शरण

निरंजन, निर्विकार, निष्काम,
आत्म-रत 'सूर्यभानु' वसु-धाम।
धवल तव यश सुविलसित ललाम;
सिद्ध भगवन! स्वीकार प्रणाम॥

१८
साधु-शरण

मात, पिता, सुत, बन्धु' सहोदर,
स्वार्थ बिना कुछ काम न भावै,
स्वार्थ घने सब हो यह 'सूरजभान'
सदा सब के मन भावे।
धन्य सु साधु सदा बिन स्वारथ के,
प्रभु के पद पे पहुंचावें।
स्वारथ औ परमारथ में,
शरणागत के दुख दूर भगावै॥

१९
वीतराग-धर्म-शरण

श्री जिन भाषित धर्म ही,
सकल सुखों का सार।
'सूर्यभानु' भय छोड़ कै,
पकड़ एक आधार॥

२०

अंतिम-भावनाष्टक

अचल, अमल, अज, अजर, अमर-वर, अगम, अगोचर, अविनाशी;
अलख, निरंजन, भव-भय-भंजन, दुःख निकंदन, सुख-राशी ॥
सादि, अनादि, अनंत, अखंड, अनेक, एक, घट-घट-वासी;
सिद्ध, बुद्ध, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, भज, अक्षय-सुख-अभिलाषी ॥१॥
अशरण-शरण, हरण-दुख-दारुण, करुणार्णव, अंतर्यामी;
भव-जल-निधि-उद्धरण-तरणि-सम, इक अवलंबन अभिरामी ।
मंगल-करण, सुधा-रस-स्रवण, शांति जल-झरण, विगत कामी;
ऐसे प्रभु को हृदय धार बन जांय विशुद्ध-मार्ग-गामी ॥२॥
काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, तजने में तत्पर रहते हैं,
स्वार्थ छोड कर सदा दूसरो के हित परिषह सहते हैं ।
ऐसे सच्चे गुरु की हम सत्संग निरंतर किया करें;
उनकी शुचि सेवा में रह कर ज्ञान-सुधा रस पिया करें ॥३॥
सब जीवो को सुख पहुंचावें सत्य-मार्ग-पर डटे रहें,
धूलि समझ कर पर-धन को हम तस्करता से हटे रहें ।
पर-नारी से सदा प्रभो! हम माता सा व्यवहार करें;
हो न ममत्व अनात्म वस्तु पर ऐसा सदा विचार करें ॥४॥
सकल चराचर के जीवो पर मित्र भावना बनी रहे;

यह आत्मा सज्जन दर्शन कर भक्ति स्नेह में सनी रहे ।
दुखी जनों को देख निरंतर धार प्रभु की दया करे;
दुष्ट दुरात्मा पापी पर माध्यस्थ भावना रहा करे ॥५॥
तन मन धन अर्पण करने पर भी न धरम जाने पावे,
लालच से भय से न कभी, अन्याय मार्ग में चित जावे ।
शांति २ हो सकल जगत में, कोई उपद्रव नाहि रहे,
दूर-कपट, छल छिद्र सत्य की सुन्दर सरिता मांहि बहे ॥६॥
नाथ हृदय आमीष सुभर सम कभी न विषयों में धावे,
देश, समाज धर्म की सेवा कर तेरी महिमा गावे ।
सादा, सीधा, सरल, हमारा, रहन-सहन बनता जावे;
जीवन हो आनन्द-पूर्ण सर्वत्र सौगन्ध सुयश छावे ॥७॥
स्वार्थ-वासना घटे निरंतर, परमारथ हित जिया करें,
न्याय-धर्म को आगे रखकर, सभी कार्य हम किया करें ।
वरा ले प्रतिबिम्ब, प्रभो ! हम आत्म-तत्व का मान करें;
'परजमालु' भावना भरी, त्रिभुवन का कल्याण करें ॥८॥

२१

चरम मंगल

आज्ञा हीनं क्रिया हीनं, मंत्र हीनं चयत्कृतं ।
तन्मे कृपया देव !, क्षमस्व परमेश्वर ॥

मिलने का पता:—

मुहता सिमूमलजी गगारामजी

बलुन्दा (मारवाड़)

जिम्मर्नसिंह लोढ़ा के प्रबन्ध से
श्री जैन-गुरुकुल प्रिंटिंग प्रेस
ब्यावर में मुद्रित।

सती अंजना

सुख के जीवन में भी जिसने, दारुण दुःख उठा
धैर्य रखा नहीं तजा धर्म, निज कर्म कलंक मिटा
पढ़कर उसकी करुण कहानी, कुछ तो शिक्षा अपनाओ !
सीख मान सद्गुरु की बहनों, तुम्ही अंजना बनजाओ ! !

पं० मुनि श्री चैनमलजी महाराज

सुख के जीवन में भी जिसने, दारुण दुःख उठाया था.
धैर्य रखा नहीं तजा धर्म, निज कर्म कलंक मिटाया था.
पढकर उसकी करुण कहानी, कुछ तो शिक्षा अपनाओ!
सीख मान सद्गुरु की बहनों, तुम्ही अंजना बनजाओ!!

सती अंजना

रचयिता—

कविवर पं. मुनि श्री चैनमलजी महाराज

प्रकाशक—

जैन साहित्य मण्डल, ब्यावर (राजपूताना)

द्रव्य सहायक—

कनकमलजी सा० कोठारी, खांगटा
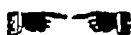
प्रथमावृत्ति 1000	मूल्य सदुपयोग	वीर सम्वत् २४६५ विक्रम सम्वत् १९९५ ई० १९३८ नवम्बर

एक-वचनः—

प्रिय पाठक गण !

आपके कर कमलों मे "जयमल संगीत माला" का तृतीय पुष्प पूज्य श्री कानमलजी महाराज सा० के प्रधान शिष्य पं० मुनि श्री चैनमलजी महाराज सा० द्वारा संपादित् "श्री अंजना सती चारित्र" समर्पित करता हुआ आशा रखता हूं कि आप इसे आद्यन्त पढ़कर अवश्य ही इस कथा में वर्णित भावों को धारण करके आत्मोन्नति में अग्रसर होवेंगे।

निवेदकः—

मंत्री श्री जैन साहित्य मंडल

ब्यावर (राजपूताना)

तर्ज–ख्याल । रगत नाटक ।

धन सती अञ्जना सायी सत्यवन्ती राखी शील में ॥ टेर ॥

मोह मङ्गल मंगल मन मोहन, महिन्द्रपुरी शुभ स्थान ।
गढ़ मढ़ मन्दिर बाग बगीचा सुन्दर स्वर्ग समानजी ॥१॥

महिन्द्रपुरी को शोभे महिपति महिन्द्र सेन महाराज ।
भूप गुणों से शोभित राजा, भजे सदा जिनराजजी ॥२॥

तिन घर लक्ष्मी है मन हरणी 'मनवेगा' पटनार ।
शील सुरंगी है मृदु अंगी, चाले कुल आचारजी ॥

महिन्द्र सेन के पुत्र एक सौ, पण्डित और पुण्यवान ।
पूर्व पुण्य से पाये सारे द्रव्य और सन्तानजी ॥

कन्या रत्न एक कामन गारी रूपे रती समान ।
शील शिरोमणि सती अञ्जना, कला सर्व की खानजी ॥४॥

पढ़ शुभ कन्या भई पण्डिता जैन धर्म की जान ।
चन्द्रवदनी कोकिलवयनी विनयवती गुणवानजी ॥५॥

अनुक्रम आई यौवन वय में महिपति करे विचार ।
पुत्री अब परणावणी म्हारे, कहते नीतिकारजी ॥६॥

॥ अथ द्रुतविलम्बित ॥

विनयकी नयकी सति खान है ।
सरलता मृदुता गुण ध्यान है ॥
धरम में प्रभु में पुनि प्रेम है ।
नियम में उनका नित नेम है ॥१॥

शशि मुखी सुमुखी रति कोर है ।
गजगती जगती नहिं और है ॥
सकल अंग शुभोपम सोहिनी ।
वदन कोमल है मन मोहिनी ॥२॥

अकल में कल में हुसियार है ।
चतुरता जिनमें विनपार है ॥
अमरिसी कुमरी सुकुमार है ।
अपर ना इनके उनिहार है ॥३॥

॥ दोहा ॥

महिपति बोला मंत्री को, सुनो सुमति सरदार ।
पति लायक भई पुत्रिका, कीजे कौन प्रकार ॥१॥

तर्ज–राधेश्याम रामायण ।

मन्त्री कहे सुन महाराजा, यह कहना ठीक तुमारा है ।
पहले ही से मैने तो यह, दिल में सोच विचारा है ॥१॥
वसन्तपुरी नगरी का नामी, वसन्त सेन महाराजा है ।
है कुँवर बड़ा होशियार भूप के, होनहार गुण ताजा है ॥२॥
मेघ कुँवर है मेरी नजर में, उसको कन्या ब्याह दीजे ।
बस ठीक योग्य है वर कन्या का, आना कानी मत कीजे ॥३॥
गुणवान महामतिमान मनस्वी, विद्वान् अकल का आगर है ।
गंभीर धीर दृढ़ धर्मी है और, सरल शांति का सागर है ॥४॥

कुवरी क्रीड़ा करे किलोलां, धर कर उर उछरंग।
उसी समय का सुनो जिकर, किम पड़े रंग में भंगजी ॥१५॥

करे वात मन चाही सखियां, कुंवर सुने धर कान।
भले भाग्य तुम पायो बाई, पति पवन पुण्यवानजी ॥१६॥

एक दम कन्या हंस के बोली, धन्य है मेघकुंवार।
भोग छोड़ ले जोग जगत में, धन उणरो अवतारजी ॥१७॥

सुन करके आ बात अपूरव, आयो क्रोध अपार।
पर पुरुषों की करे प्रशसा, है व्यभिचारण नारजी ॥१८॥

करम करे सो करे न कोई, सुनिये चातुर भाई।
रामचन्द हरिचन्द राजवी, दीये विपन पठाईजी ॥१९॥

भीतर पीतर पात के सरे, तां पर कंचन भोल।
आखिर में अवलोकियो सरे, खुली ढोल की पोलजी ॥२०॥

चिरताली के चरित्र का सरे, पार कहो कुन पावे।
पति मार के सती होजावे, नीतिकार बतावेजी ॥२१॥

किसको मधुर वचन बतलावे, उर विच और ही ध्यावे।
किसको ललित लोचन से ललना, लालच दे ललचावेजी ॥२२॥

गति न जानी जाय जगत में, इनका चरित्र अपार।
हरि हर ब्रह्मादिक देवों को, कीना तावेदारजी ॥२३॥

निकमो इस कुलटा हित झुरतो, हा हा मुझे धिकार।
डूंगर पास डरावना सरे, दूर से शोभाकारजी ॥२४॥

कुलटा कामिनी कहा काम की, परण्यां इज्जत जाय।
ऐसा सोचने शीघ्र कुंवर ने, लीना धनुप चढ़ायजी ॥२५॥

॥ दोहा ॥

मंत्री तेरी मंत्रणा, मैं करता स्वीकार ।
लेकिन इसमें रहस्य है, उसका करो विचार ।१।

तर्ज—राधेश्याम रामायण ।

ज्ञानी ने फरमाया है यह, दीक्षा लेगा मेघकुँवर ।
कुँवरी को फिर दुख होवेगा यही लगा है मुझे फिकर ॥१॥
वर वर ऐसी कन्या देना नीति का फरमाना है ।
अतएव कुँवरी को और कुँवर पुण्यपाल देख परणाना है ॥२॥
बात असल में नीतिकार ने ठीक ठीक बतलाई है ।
मात पिता के कारस जिस्का कन्या साथ ले भाई है ॥३॥

॥ दोहा ॥

चिन्तातुर लख भूप को, बोला सुमति प्रधान ।
बहुत जगत में राजकुँवर हैं, बड़े २ गुणवान ॥२॥

तर्ज—राधेश्याम रामायण ।

रत्नपुरी महतापसिंह का पवन पुत्र पुण्यवान सही ।
पवन मदन सा सुन्दर मनोहर, सर्व गुणों की खान यही ॥१॥
आप बात तुम मान मेरी, अब देरी इसमें मत कीजे ।
पवनकुँवर के संग कुँवरी की, अतएव शादी कर दीजे ॥२॥
जब यों भूप के कहते ही, योग्य जोड़ी यह दिखलाई ।
पत्र भेज मन्त्री को रत्नपुरी और शादी जमसे ठहराई ॥३॥

तर्ज-मूल ख्याल ।

दोनों घर में वटत वधाई, वरते मंगलाचार ।
सधवा सुन्दर सुस्वर कंठी, गावे गीत रसालजी ॥८॥
पवन कुँवर का दोस्त मन्त्री सुत, खीर नीर सम प्रीत ।
सुख दुख में रहे संग सर्वदा, यही प्रीत की रीतजी ॥९॥
सती अञ्जना रूप रंग की, शोभा करे संसार ।
कीर्ति सुन कर अपने मित्र से, ऐसे कहे कुमारजी ॥१०॥

तर्ज-गवरल ईसरजी कहे तो हंसकर बोलनाजी ।

सज्जन कहे एक वार मुझ संगे सासरे चालनाजी ॥ टेर ॥

कैसी कन्या कैसा रूप, सुन्दर अंगी शची स्वरूप, है नहीं दूजी उन अनुरूप, मेरी मोहनगारी प्यारी मुझे दिखावनाजी ॥१॥ देख्यां बिन मनड़ो दुख पावे, देखन हित चित नित ललचावे, प्यारी बिन जीवड़ो घबरावे, चालो देख सकें सुखसेती अकल निकालनाजी ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम पंथ पागल हुवा, पवनकुँवर इन रीत ।
समझावे सज्जन तदा, पूरण लाकर प्रीत ॥१॥

तर्ज-तावड़ा धीमो पड़जारे ।

कुँवरे सा बात कहूं थाने २,
देखन की जो हूंस हुवे तो चालो अव छाने ॥ टेर ॥
मुशकिल मिलनो ऐसे आपको, लागे नहीं फिर ठीक ।
महिन्द्रपुरी है दूर यहां से, मत जानो नजदीक ॥ १ ॥

कुंवरी क्रीड़ा करे किलोलां, धर कर उर उछरंग।
उसी समय का सुनो जिकर, किम पड़े रंग में भंगजी ॥१५॥

करे वात मन चाही सखियां, कुंवर सुने धर कान।
भले भाग्य तुम पायो बाई, पति पवन पुण्यवानजी ॥१६॥

एक दम कन्या हंस के बोली, धन्य है मेघकुंवार।
भोग छोड़ ले जोग जगत में, धन उणरो अवतारजी ॥१७॥

सुन करके आ वात अपूरव, आयो क्रोध अपार।
पर पुरुषों की करे प्रशंसा, है व्यभिचारण नारजी ॥१८॥

करम करे सो करे न कोई, सुनिये चातुर भाई।
रामचन्द हरिचन्द राजवी, दीये विपन पठाईजी ॥१९॥

भीतर पीतर पात के सरे, तां पर कंचन झोल।
आखिर में अवलोकियो सरे, खुली ढोल की पोलजी ॥२०॥

चिरताली के चरित्र का सरे, पार कहो कुन पावे।
पति मार के सती होजावे, नीतिकार बतावेजी ॥२१॥

किसको मधुर वचन बतलावे, उर विच और ही ध्यावे।
किसको ललित लोचन से ललना, लालच दे ललचावेजी ॥२२॥

गति न जानी जाय जगत में, इनका चरित्र अपार।
हरि हर ब्रह्मादिक देवों को, कीना तावेदारजी ॥२३॥

निकमो इस कुलटा हित झुरतो, हा हा मुझे धिकार।
डूंगर पास डरावना सरे, दूर से शोभाकारजी ॥२४॥

कुलटा कामिनी कहा काम की, परण्यां इज्जत जाय।
ऐसा सोचने शीघ्र कुंवर ने, लीना धनुष चढ़ायजी ॥२५॥

तर्ज—पनिया भरन कैसे जाना ।

कुंवर कोप चित धारी लिया धनुषबाण कर मांही ॥ टेर ॥
है कुलक्षण कुलखापणी नारी मुझे खबर पडी अब सारी थी ।
दूं परभव बीच पठाई ॥१॥
कुछ निर्णय कुंवर नहीं कीना, झट कोप कुंवरी पर कीनाजी ।
ज्यों सीता पर रघुराई ॥२॥
किया धनुष तणा टंकारा तब बोला मित्र पियाराजी ।
ना टाल चेनमल भाई ॥३॥

तर्ज—गजल रेखता ।

कुंवर सा आप को ऐसे, बनाना ना मुनासिब है ।
पराये घर पे यों हंगल मचाना नामुनासिब है ॥ टेर ॥
लाये क्यों आंख में लाली बनाई सूरत क्यों काली ।
भूलकर भ्रकुटीका ऐसे चनाना ना मुनासिब है ॥१॥
पवन नाजुक बिचारी का गुलाबी फूलसा कोमल ।
उसी पर तीर यह तीक्ष्ण, चलाना नामुनासिब है ॥२॥
आये थे देखने कामें खबर नर होसी राजा में ।
मुफ्त ही मान की मिट्टी मिलाना ना मुनासिब है ॥३॥
तरसते देखने को तुम, रात दिन कैसे रोते थे ।
हुवा क्या रंज का कारण भुलाना ही मुनासिब है ॥४॥

॥ दोहा ॥

सुनकर पवनकुमार यों, सोचे चित्त मझार ।
कैसे मैं इनको कहूं, अपना हृदयोद्गार ॥१॥

तर्ज—कांई रे जवाब करूं रसिया ।

कांई रे जवाव देऊँ इणने, जवाव देऊँ मै सवाल करूँ मै ।
मन को दरद कहूं मै किणने ॥ टेर ॥
कारण क्या कहूं कह्योहन जावे, कहतां सज्जन शरम सतावे ।
निकमो फिजूल अठे मै आयो, आखिर देख घणो दुख पायो ।१।
आ व्यभिचारण कुलटा नारी, खवर पड़ी मुझे वन्धव सारी ।
दुष्टनकू दूं नरक पठाई, धनुष चढ़ायो ओ कारण भाई ॥२॥

तर्ज—वीरा लुमा झुमा होय आयजो ।

कहे मित्र सुनो मेरे भाई, थारे आ कांई मन मे आईजी ।
म्हारी वुरी लगावोला कांईजी ॥ टेर ॥
अव झट पट घरे पधारो, मत मारो दया विचारोजी ॥१॥
मत कुलटा इणने मानो, थे असल वात नही जानोजी ।
दीक्षा मेघकुंवरजी लेसी, करी स्तुति वात है ऐसीजी ॥२॥
यदि खवर राजाजी पासी, तो इज्जत आपणी जासीजी ।
यों नीठ-नीठ समझाया, ले पवन रतनपुरी आयाजी ।३॥

॥ दोहा ॥

सज्जन ने यह भेद सव, समझाया था ठीक ।
पिण पवन हृदय से ना मिटा ज्यों पत्थर की लीक ।१।

तर्ज—राधेश्याम रामायण ।

नर नीतिकार वतलाते हैं, दिल फटने पर नहीं सिल सकता ।
[illegible] फिर नहीं मिल सकता ॥१

प्यारी अंग में एक जुबां है बाकी गात सरासर है।
यही मित्र है यही शत्रु है अमृत जहर हलाहल है॥२
पहले ही से जुबान पर तुम अंकुश प्यारे रख लेना।
किसी नशे में आकर के तुम शब्द भ्रष्ट नहीं कह देना॥३
अगर जुबां का जख्म कहा है दुधार किसी पर चलती है।
दुधार बड़े बस वीर पुरुष का चीर कलेजा करती है॥४
तोप तीर तलवार तमंचर ताकी मार नहीं ऐसी है।
नहीं मरहम यहीं हो सकती यह धार जुबां की पैनी है॥५

॥ दोहा ॥

देखो खटके पांवको, गयो तो खटके देह।
वचन खटके बावलो, ज्यों खटके नेह॥१

तर्ज—राधेश्याम रामायण।

बस यही बात थी यहां पर भी पर इसमें फर्क था बहुत बड़ा।
कहा कुमरी ने वीर ढंग से, कुंवर साहब ने वीर मढ़ा॥१॥
बिन सोचे ही कुंवरी पर कुंवर साब नाराज हुवे।
ममता का अपवाद देख कर ज्यों सीता पर रघुराज हुए॥२॥
जो बिन सोचे ही करते हैं वो पीछे से पछताते हैं।
दुख पाते हैं घबराते हैं और अपनी इज्जत गंवाते हैं॥३॥

॥ दोहा ॥

होनहार के जोग से, पलटा पवनकुमार।
सज्जन को ऐसे कहे, परणूं नहीं यह नार॥१॥

तर्ज—म्हारे घरां पधारोजी ।

हाने खोटी लागेजी २,
ऐसी कन्या से शादी करतां भूंडी लागेजी ॥ टेर ॥
ाटी खावे मांटी केरी गुण वीरा का गावे ।
र पुरुषांरी करे प्रशंसा फिर किम सती कहावे ॥ १ ॥
लती मेड़ घरे कुण घाले कुण नोंत दरिद्र लावे ।
ाथम ग्रास में आवे मक्षिका फिर किम भोजन भावे ॥२॥

॥ दोहा ॥

सज्जन सुन मन सोच के, पूरण लाके प्रीत ।
मंजुल मीठे वचन से, समझावे इण रीत ॥१॥

तर्ज—गोपीचन्द लडका० ।

सुन बात हमारी जोड़ी बिन झूठो जग में जीवनो ॥ टेर ॥
पशु पक्षी भी रहे रात दिन अपनी प्यारी संग ।
पुरुष होय के परणो नांही न्यो कांई लागो रंगजी ॥१॥
ऐसे कैसे हुवा कुंवरजी शादी सुं नाराज ।
क्या तुम शादी लायक नहीं हो या बनसो महाराजजी ॥२॥
क्या अवगुण है कन्या मांही आप गया क्यों रूठ ।
सती सुशीला कारण मुख से क्यों थे बोलो झूठजी ॥३॥
काणी खोड़ी कारण दुनियां, रुपीया लेकर जावे ।
नटो कुंवरजी सुन्दर सुं थे बड़ो अचम्भो आवेजी ॥४॥
घर की शोभा घरणी सेती वरणी नीतिकार ।
काम पड्यां या आड़ी आवे स्वारथियो संसारजी ॥५॥

मै नहीं शादी करसूं इनसे इनका क्या हो विगाड़ ।
परणन वाले बहुत जगत में, राजा राजकुंवारजी ॥२०॥
जैसे कन्या अति दुख पावे, ऐसो करूं विचार ।
शादी कर छिटकाऊं इनको, पासी दु:ख अपारजी ॥२१॥
भर्यो हुकारो नीठ कुंवरजी, कही न मनकी बात ।
श्रोता ऐसे कपट न करना, अपने मित्र के साथजी ॥२२॥
मित्रराय ने जाय कही है, दीना लगन थपाय ।
आनन्द सु तव पवनकुंवर को दीना वींद वणाय ॥२३॥
चढ़ी जान जब पवनकुंवर की लाखों लोग है लार ।
महिंदपुरी में आई सवारी, देखे सब नरनारंजी ॥२४॥

तर्ज–लावनी ।

जानकी खूब करी त्यारी २,
पवनकुंवर की तोरण ऊपर आई असवारी ॥ टेर ॥
हाथी घोड़ा रथ पालखी, पलटन है भारी ।
बाजा बाजे नाटक नाचे नारी नखराली ॥ १ ॥
हाथी होदे बनड़ो सोहे, मोहे नरनारी ।
केसर और कसूमल वागा, सारी असवारी ॥ २ ॥
मस्तक मोड़ जोड़ कुंडल की, गलमाला डारी ।
कल्पवृक्ष सम बने पवनजी, सूरत है प्यारी ॥ ३ ॥
चंचल नयनी चन्दा वदनी, जो परदेवाली ।
जाली झरोखे वैठी बाला, देखे असवारी ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

सारे नगर की नारियां, देखन हुई तैयार ।
अपनी अपनी सहेलियां, ले चाली निज लार ॥१

तर्ज—सीता माता की गोदी में ।

जातो जातो ए देखण ने बनड़ो आयियो ए ॥ टेर ॥
बनड़ो मोहक्षिभा मन म्हारा धीरज किम धरूं ए ।
कैसी सूरत कामनगारी लागे मियवर से भी प्यारी ।
इनकी आंखों है मतवारी ॥ १ ॥

कैयक रूपवती मतवारी कायल होगई ए ।
देख्यो बनड़ा केरो रूप, शोभे सुंदर इन्द्र सरूप ॥
लाजे राजा रावा भूप ॥ २ ॥

धन्य है भाग्य मनरमा केरा पुण्यवन्त पति मिलगो ए ।
है सब बनड़ा का गुण गावे, बनड़ी को कोई धीर बधावे ॥
धीरे धीरे सवारी आवे ॥ ३ ॥

तर्ज—भूल ।

महीप्रताप ने महीपपुरी को, दीनी है सिणगार ।
ठोर ठोर पर बाजा बाजे मनहरा झणकारजी ॥२४॥
धीरे-धीरे चलते आया रम्य भुवन के मांय ।
महारानीजी लिये मांयने बनड़ो गाय बधायजी ॥२५॥
सखी मनरमा सज्जित होकर बैठी गोख मझार ।
बींद देखकर बोली सखियां कन्या को सिणगारजी ॥२६॥

तर्ज—खेलण दो गणगोर ।

धन थांरो अवतार बाईजी २
हो पुण्यतणो परताप बाईसा ऐसो मिल्यो भरतार ॥ टेर ॥
निरखत निरखत नयन न धापे हरस रही सब नार ।
गुणवन्तो पति योरसो पाई सुन्दर है सुकुमार ॥१॥

तू है रति सम अति ही सुन्दर, यह है काम कुमार।
तू है राज दुलारी प्यारी, यह है राजकुमार ॥२॥

॥ दोहा ॥

चंचल नयन चकोर से, देख्यो पति मुख चन्द।
त्रिवली चहरे पर चढ़ी, देख सती हुई मन्द ॥१॥

तर्ज-बामणा का।

सइयां मोरी ए बात सुणो एक माहरी,
सहियां मोरी ए मत सरावो भरतार।
सहियां मोरी ए नजर कहीं लग जावसी,
सहियां मोरी ए मिले जो लिखियो लिलार ॥१॥
सहियां मोरी ए सकल सवारी मोद में,
सहियां मोरी ए पिवड़ो क्यों दिल गीर।
मोरी सहियां ए फीको चेहरो क्यों पड्यो,
सहियां मोरी ए कांई पियूरे पीर ॥२॥
सहियां मोरी ए छतियां धूजे माहरी,
सहियां मोरी ए फुरके दक्षिण अङ्ग।
सहियां मोरी ए कैसे पियूजी रूसिया,
सहियां मोरी ए पड़े न रंग में भंगजी ॥३॥

तर्ज-मूल।

आखिर आकर बैठे चंवरी में, झटपट दम्पती जोड़।
नरनारी कहे इन्द्र इन्द्राणी, करे न इनकी होड़जी ॥२८॥
देजकरी हरिणाक्षी मन में, कर रही खूब विचार।
घूंघट पट में चंचल नयनी, देखे पति दीदारजी ॥२६॥

पवनकुंवर की छोल मांय मैं नहीं मन का रंग ।
परएया पहली प्यारे पियु का, कैसे बदला रंगजी ॥२
हथलेवा में हाथ मिलायो ऐसे ही बिगार ।
पवनकुंवर को कुपरी ऊपर, आई रीस अपारजी ॥३
करे पीड़न में मन की पीड़ा हुई अञ्जना माइ ।
प्रेम भरे का हाथ मिलाना होता और ही रंगजी ॥४
सती अञ्जना सोचे दिल में, अठे हाल में बालो ।
क्या कारण है कैसे रूठो प्रीतम को मतवालोजी ॥५
परणी पाछी उतरया डेरे दीनो दायजो राय ।
पवन्न मातादि सखी पांच सौ, दीनी साथ पठायजी ॥६
दियो दायजो तामो राजा लोग कहे सब ठीक ।
हुई सीख अब निजपुत्री को, दे माता यों सीखजी ॥७

तर्ज–रसिया नवीन ।

मेरी जाबे तूं ससराल, सुयश ले पाछी आइजे ए ॥ टेर ।
जैन धर्म को मर्म समझ तूं हिये रमाइजे ए ।
मिथ्या पाखण्ड बीच में पड़ भूल न जाइजे ए ॥१॥
पति परमेश्वर तुल्य समझ तूं हुकम उठाइजे ए ।
पति जो कड़वे वचन कहे तो मत रीसाइजे ए ॥२॥
सास्तु सुसर की ओंचे मन से सेवा बजाइजे ए ।
पाव दिवस तूं करके काम मत आलस लाइजे ए ॥३॥
ननन्द जिठाणी और देवर को दिल न दुखाइजे ए ।
सब से हिल मिल रहीजे, मतना पड़ भजाइजे ए ॥४॥
रहिजे आनन्द मांय सदा सदाचार निभाइजे ए ।
दोनों कुल की लाज कहूं मैं शोभा बढ़ाइजे ए ॥५॥

॥ दोहा ॥

सुनी सीख यह अंजना, करके नीचे नैन ।
हथ जोड़ निज मात को, बोली ऐसे बैन ॥१॥

तर्ज–रसिया नवीन ।

माता देदे शुभ आशीष, सदा सुख सम्पत्ति पाऊंगी ॥ टेर ॥
तो जो आज्ञा आप सुनाई, शीश चढ़ाऊँगी ।
सदाचार श्रृङ्गार सजाकर, वंश बढ़ाऊँगी ॥१॥
सुख दुख में रह पति के संग में, उन्हें रीझाऊँगी ।
पति भक्ति का हार हिये में, मै पधराऊँगी ॥२॥
मैं कह माता बेटी तेरी, नहीं दूध लजाऊँगी ।
दोनों कुल को सारे जग में, ऊँचा दिखाऊँगी ॥३॥
ओलू आसी माता थारी, पत्र पठाऊँगी ।
हाय आज मैं प्यारे पिहर से, दूर होजाऊँगी ॥४॥
अब तो माता जद तू बुलासी, तब मैं आऊँगी ।
रात दिवस मै याद करूँगी, भूल न जाऊँगी ॥५॥

तर्ज–मूल ।

ऐसे सीख दीधी कन्या ने, हुई सवारी तैयार ।
गावे ओलूं सधवा नारी, मन में धरके प्यारजी ॥३६॥
एक मजल पहुंचावण आये, राजा राणी लार ।
मन्त्री को दे साथ भूपति, गये निज नगरी मझारजी ॥३७॥

पवनकुंवर की आंख मांय में, नहीं प्रेम का रंग ।
परण्या पछली प्यारे पियू का, कैसे चढ़सा रंगजी ॥२४॥
हथलेवा में हाथ मिलायो, जैसे लो अंगार ।
पवनकुंवर को मुंदरी ऊपर आई रीस अपारजी ॥२५॥
करे पीहर में मन की पीड़ा, हुई अंजना व्याह ।
प्रेम भरे का हाथ मिलाना होता और ही ढंगजी ॥२६॥
सती अंजना सोचे दिल में, अठ वास में आलो ।
क्या कारण है कैसे रूठो, प्रीतम मो मन पालोजी ॥२७॥
परणी पाछी सासरिया सरे, दीनो दायजो साथ ।
बसन्त मालादि सखी पांच सो दीनी साथ पठायजी ॥२८॥
दियो दायजो तामो रसता लोग कहे सब ठीक ।
हुई सीख अब निजपुत्री को, दे माता यों सीखजी ॥२९॥

तर्ज–रसिया नवीन ।

मेरी आवे ए सुसराल सुयश से पाली जावे ए ॥ टेर ॥
जैन धर्म को मर्म समझ लूं, दिये रमावे ए ।
मिथ्या पाखण्ड बीच में पड़, भूल न जावे ए ॥१॥
पति परमेश्वर तुल्य समझ लूं, हुकम उठावे ए ।
पति जो कड़वे वचन कहे तो मत रीसावे ए ॥२॥
सासू सुसर की सांचे मन से सेवा बजावे ए ।
रात दिवस लूं करवे काम, मत आलस लावे ए ॥३॥
नणन्द जिठाणी और देवर को दिल न दुखावे ए ।
सब से हिल मिल रहीजे मतना पाड़ भनावे ए ॥४॥
रहिजे आनन्द मांय सदा सदाचार निभावे ए ।
दोनों कुल की साख जहां में शोभा बढ़ावे ए ॥५॥

॥ दोहा ॥

सुनी सीख यह अंजना, करके नीचे नैन।
हथ जोड़ निज मात को, बोली ऐसे बैन ॥१॥

तर्ज–रसिया नवीन।

माता देदे शुभ आशीष, सदा सुख सम्पत्ति पाऊंगी ॥ टेर ॥
जो जो आज्ञा आप सुनाई, शीश चढ़ाऊँगी।
सदाचार श्रृङ्गार सजाकर, वंश बढ़ाऊँगी ॥१॥
सुख दुख में रह पति के संग में, उन्हें रीझाऊँगी।
पति भक्ति का हार हिये में, मै पधराऊँगी ॥२॥
मैं कहूं माता बेटी तेरी, नहीं दूध लजाऊँगी।
दोनों कुल को सारे जग में, ऊँचा दिखाऊँगी ॥३॥
ओलू आसी माता थारी, पत्र पठाऊँगी।
हाय आज मैं प्यारे पिहर से, दूर होजाऊँगी ॥४॥
अब तो माता जद तूं बुलासी, तब मैं आऊँगी।
रात दिवस मै याद करूँगी, भूल न जाऊँगी ॥५॥

तर्ज–मूल।

ऐसे सीख दीधी कन्या ने, हुई सवारी तैयार।
गावे ओलूं सधवा नारी, मन में धरके प्यारजी ॥३६॥
एक मजल पहुंचावण आये, राजा राणी लार।
मन्त्री को दे साथ भूपति, गये निज नगरी मझारजी ॥३७॥

इधर सवारी चलती आई, रत्नपुरी के मांय।
सन्मुख आयो हर्षित होकर श्री प्रह्लाद महारायजी ॥३८॥
पवनकुंवरजी परण पदमनी, ले आया निज लार।
नार नगर की गावे बधावा देवन हुई तैयारजी ॥३९॥

तर्ज—वीरा झुमा झूमा होय थायजो ।

आओ आओ देखण ने भाई, या सती सासरे आईजी ॥टेर॥
है सती सुशीला सयानी जिन मानी मन जिनवानीजी।
सब देख देख सुखपाई प्रभु सुगति जोड़ मिलाईजी ॥१॥
है अञ्जना रोहिणी जैसी, नहीं रति कामकी ऐसीजी।
है सीता राम ही लागे, सब जनमें पाहन लागेजी ॥२॥

तर्ज—मूल ।

सासु बहू पे राजी होकर, खूब कियो सम्मान।
पगे लागणी मांय सती ने, गहणो दियो धनमानजी ॥४०॥
मैहमा लैहगा साड़ी सुन्दर वस्तर विविध प्रकार।
महंगा रतन जड़ाव का सरे, दीना सुन्दर हारजी ॥४१॥
गांव पांच सौ दिया बहू ने और भी मोटा महल।
झकझक लीला करो यहां पर आओ सुख से सहलजी ॥४२॥
सास सुसरा प्रेम करे पिस, पवन न पूछे सार।
पति बिना है पदमणी रे सूनो सब संसारजी ॥४३॥
परण लिया ने पवनकुंवरजी मू की महल मझार।
सर्प कांचली जैसे छोड़ी फिर नहीं कीनो प्यारजी ॥४४॥

अन्तर हेत हुवे नहीं तो, नैणा नेह न होय।
नेह विनानी तेह नीसरे, वात गमे नहीं कोयजी ॥४५॥
वोल कु वोल न नीसरे, साले शल्य समान।
आरती अति घणी करे अजना, कर्म तणो फल जानजी ॥४६॥

तर्ज–विन ऋतु वरसे मेह।

कैसे मैं अव काढ सू ए सजनी, प्रीतम विन दिनरात ॥टेर॥
वसन्तमाला सुन वातड़ी ए, सजनी किम रूठो भरतार।
मालूम मुझको नहीं पड़ी ए सजनी, कहे अंजना नार ॥१॥
रंग राग भावे नहीं ए सजनी, निशि नहीं आवे नींद।
खान पान खारा लगे ए सजनी, क्यों नहीं आयो वींद ॥२॥
सूना मंडप मालीया ए सजनी, सुन्दर मंदिर महल।
रसिया विन नीरस हुआ ए सजनी, खोटा सगला खेल ॥३॥
लाओ जलदी जायने ए सजनी, प्रीतम ने समझाय।
विना पिया जीना वुरा ए सजनी, जीव लहरिया खाय ॥४॥

तर्ज–मूल।

कहे वसन्ती सुनो कुंवरी सा, क्यूं थे करो विचार।
कोई कारण सुं आया नांही, नहीं कोई और विचारजी ॥४७॥
परण्या सो तो आसी आखिर, करसी फिर घर वास।
था जैसी ने छोड़े कैसे, राखो तुम विश्वासजी ॥४८॥
सती कहे क्या करम आवसी, नहीं आने का ढंग।
चँवरी में भी देखलियो मैं पियू का बिगड़ा रंगजी ॥४९॥
सुनो सहेली एक हमारी, सो वाता की वात।
पत्र हमारा जाकर देना, पवन पिय के हाथजी ॥५०॥

तर्ज—कांटो लागोरे देवरिया।

कैसे रूठो ए सहेली म्हारो मन मोहन भरतार।
मन मोहन भरतार म्हारो रूठ गयो करतार ॥ टेर ॥
चुगल खोर कोई लागो काने, झूठी साची कहदी छाने।
भरमायो भरतार ॥१॥
या कोई गलती हुई हमारी, जिन से पिवुड़ो करे खुवारी।
भुगतू कारागार ॥२॥
पिया बिना अब जिया न लागे, खान पान सब खारा लागे।
मरसूं खाय कटार ॥३॥

तर्ज—मूल।

ऐसे आरती करती रति बिन, सती अञ्जना नार।
प्रीतम कारण झुरे झूरणा, छोड्या सब सिणगारजी ॥५७॥
गांव पांच सौ सासु दिया वे, खोस्या पवनकुमार।
लीना मंदिर मालिया सरे, नहीं करे सार सम्भारजी ॥५८॥
एक महल में रहे अञ्जना, सहे विरह की मार।
कुंवर कुंवरी के प्रेम नहीं यह, फैली नगर मझारजी ॥५९॥
राजा राणी सुनकर दोनों, रहे पूर्ण दुख पाय।
पवनकुंवर को पास बुलाकर, रहे एम समझायजी ॥६०॥

तर्ज–मैं डरूं एकली बादल में चमके०।

सुन पुत्र पियारा क्यों तू रीसायो अवला ऊपरे ॥ टेर ॥
यह अवला है दीन विचारी, इनकी राखो शर्म।
कीड़ी ऊपर कट की करना, क्षत्री का नहीं धर्मजी ॥१॥

क्यों लीना यह गांव पांच सौ, भूपण और मेवार।
समझदार होकर के कुपरसा यह क्या किया विचारजी ।४।
सती सुलक्षणी सुन्दर विदुषी विनयवती रति जेम।
क्यों अवज्ञा भावे म्हाने, इन पर रूठा केमजी ।५।

॥ दोहा ॥

पिता वचनको श्रवणकर, लज्जित हुआ कुमार।
किन्तु नीची दृष्टि कर, उत्तर कहे उदार ॥१॥

तर्ज—खेलन दो गणगोर० ।

मत पूछो इन बार पिताजी मत पूछो इन बार।
हो म्हारा मावों का व्यवहार पिताजी मत करिये लाचार ।टेर।
आप पिता मैं पुत्र तुम्हारा कैसे कहूं समाचार।
याद आवे म्हने यथो पिताजी नीति को व्यवहार ।१।
और जो आज्ञा तुम फरमावो, केरूं मैं सिरधार।
इनके लिये जो कुछ भी कहा तो, मरसू आप हजार ।२।

तर्ज—मूल ।

भूप विचारे चित्त में सरे कुंवर चर्ये गुणवान।
भेद न लेमा किसी भाव का है नीति करवानजी ।१।
खबर पड़ी या मित्र मैं सरे, कुंवर करे अन्याय।
सती अजना अबला ऊपर गयो कुंवर रीसायजी ।१२।
मित्र आप असरी स सिखियो जहां पे पवनकुमार।
प्रेम लाप समझावन कारण पोंहते पवन विचारजी ।१३।

तर्ज— कांई रे जवाब करूं रसिया।

कांई रे मिजाज करे मन में, मिजाज करे तूं गुमान करे तूं।
ओ सब साज उड़ेगा छिन में ॥ टेर ॥
बालकपन ऐसे नहीं कीजे, अबला विचारी ने दुख नहीं दीजे।
कांई इण जुलम कियो है थांरो, कोमल वदनी ने यूं क्यूं मारो।१।
कीड़ी ऊपर कटकी न कीजे, सोच विचार काम सब कीजे।
बिन हिम्मत क्यूं परणी नारी, सब मिल लोग देवेगा गारी।२।

तर्ज–कमली वाले की।

लाचार करो मत यार मुझे, यूं मेरा मन घबराता है।
मरे हुए मन मृग ले पर फिर क्यों तूं तीर चलाता है ॥टेर॥
चाहे साज रहै या मिजाज रहे, मत राज रहै मेरी लाज रहै।
पर क्या कहूं मुझ से दोस्त अरे! हा! असही सहा न जाता है।१
लाख उपाय करो तुम प्यारे, काम एक नहीं आता है।
नहीं मिलता है मन मोती जो, एक बार कहीं फट जाता है।२

तर्ज–मूल।

मित्र विचारे अब नहीं कहना, नहीं कहने में सार।
तामसमें अरदास न करनी, कहते नीतिकारजी ॥६४॥
और किसी के रती न अटके, सती रही दुख पाय।
पति प्रेम बिन गई अञ्जना, कजनी ज्यूं कुमलायजी ॥६५॥
खान पान और स्नान छोड़ी, छोड्या सब सिणगार।
ध्यान हिये जिनवर को धरती, करे सामायिक सारजी ॥६६॥
ऐसे करता केई दिन जावे, एक दिवस की बात।
पवनकुंवर हित भेज्यो भेटणो, सती अञ्जना तातजी ॥६७॥

तर्ज— कांई रे जवाब करूं रसिया।

कांई रे मिजाज करे मन में, मिजाज करे तूं गुमान करे तूं।
ओ सब साज उड़ेगा छिन में ॥ टेर ॥
बालकपन ऐसे नहीं कीजे, अबला बिचारी ने दुख नहीं दीजे।
कांई इण जुलम कियो है थांरो, कोमल वदनी ने यूं क्यूं मारो।१।
कीड़ी ऊपर कटकी न कीजे, सोच विचार काम सब कीजे।
विन हिम्मत क्यूं परणी नारी, सब मिल लोग देवेगा गारी।२।

तर्ज–कमली वाले की।

लाचार करो मत यार मुझे, यू मेरा मन घबराता है।
मरे हुए मन मृग ले पर फिर क्यों तूं तीर चलाता है ॥टेर॥
चाहे साज रहै या मिजाज रहे, मत राज रहै मेरी लाज रहै।
पर क्या कहूं मुझ से दोस्त अरे! हा! असही सहा न जाता है।१
लाख उपाय करो तुम प्यारे, काम एक नहीं आता है।
नहीं मिलता है मन मोती जो, एक वार कहीं फट जाता है।२

तर्ज–मूल।

मित्र विचारे अब नहीं कहना, नहीं कहने में सार।
तामसमें अरदास न करनी, कहते नीतिकारजी ॥६४॥
और किसी के रती न अटके, सती रही दुख पाय।
पति प्रेम विन गई अञ्जना, कजनी ज्यूं कुमलायजी ॥६५॥
खान पान और स्नान छोड़ी, छोड्या सब सिणगार।
ध्यान हिये जिनवर को धरती, करे सामायिक सारजी ॥६६॥
ऐसे करतां केई दिन जावे, एक दिवस की वात।
पवनकुंवर हित भेज्यो भेटणो, सती अञ्जना तातजी ॥६७॥

गहणा वस्तर साल दुसाला, मेवा और मिष्ठान ।
और भी मोती हीरा पन्ना भेज्या खूब समानजी ॥६८॥
सती देख मन करे आरती झरोखे भरतार ।
देख भेटणो म्हारे पियूजी, करसी मुझ से प्यारजी ॥६९॥

तर्ज—पपैयो बोलणोजी ।

सहेली झटपट आइजे ए, आज म्हारे आव पिया की खबर आप तू वेग सुनाइजे ए । पियाने भेटणो दीजे ए आज इण दासी का परणाम चरणां में फिर कह दीजे ए ॥ ॥ पियामें मरज सुनाइजोजी, आज म्हने तरस तरस नरसाय पिया मत मत तरसाइजोजी । पियामें ज्यूं त्यूं मनाइजोजी, थांरी परणी जोवे वाट मिलण ने वेगा आइजोजी ॥७०॥

तर्ज—मूल ।

वसन्त माला से दासी वासी सखियां के परिवार ।
आई इस विधा में चलके पवनकुंवर के द्वारजी ॥७०॥
कुंवर साब के महलां मांहि लगे नाटक झणकार ।
वसन्त माला को देखी नजरों अजरयो पवनकुमारजी ॥७१॥
नमस्कार कर वसन्तमाला धर्यो भेटणा ताम ।
कुंवर साब तो गंधवों मे बांट दियो है तमामजी ॥७२॥
देख दशा यह वसन्त माला मे रूठी रीस अपार ।
आई ताम दवायजी सरे कुंवरानी के द्वारजी ॥७३॥
सुनो कुंवरी सा कान लगाकर साथ कहूं समाचार ।
देख लिये मैं नजरों थारो, मौडू है भरतारजी ॥७४॥

॥ दोहा ॥

सखी लखी पियू की व्यथा, तथा कही सब साफ।
पवनपति पर प्रेमला, अति करे सती विलाप ॥१

तर्ज—गूजरणी।

समझदार सहेली है, अकलदार सहेली है,
म्हांरो प्राणांरो पियारो साहिब वस कियो,
म्हारा कामणगारा ऊपर कामण कुण कियो ॥ टेर ॥
सखी जादूगर जादू कियो, हे सखि लीयो पियो विलमाय।
सखी या कोई मंत्र से मोहियो, हे सखी जिनसे रह्यो भरमाय ॥१
सखी ऐसो मैं नहीं जाणियो, हे सखी अध विच देसी छोड़।
सखी पियूड़े जाल करी घणी, हे सखी है कपटी शिरमोड़ ॥२
सखी जल विन तड़फे माछली, हे सखी घन विन तरसे मोर।
सखी पियू विन नित मैं तरसती, हे सखी चन्द्र विना ज्यूं चकोर
॥ समझदार० ॥३॥

तर्ज—मूल।

इण विध सोच करत है निश दिन, पीड़ारो नहीं पार।
तदपि पति पर नहीं नाराजी, करमों का है विकारजी ॥७५
कहे अञ्जना सुणो सहेली, भोंदू नहीं भरतार।
पियूड़ा ने थे यूं मत वोलो, पियू मुज प्राण आधारजी ॥७६
वहिन वुलावण कारण भाई, आवे वारवार।
पियू राजी विन खारा लागे, तीजादि त्योंहारजी ॥७७
सती अञ्जना कारण चिन्ता, करे मात अरु तात।
कुँवरी ऊपर किण विध रूठो, जुल्म करे जामातजी ॥७८

एक दिन आये एक आतापी, चहम सुलाचया काम।
कैसे मुँह दिखलाऊँ भाई, भाई सती ने लाजवी।
आकर देखी भाई बहिन में देखा और ही रंग।
प्रेमभाव से पूछे सती को, यह क्या कीना रंगजी।

तर्ज—क्या भुणियो ले।

परि कारण आमियो सुख बेहनीए
जो सुख सुलमी होय सुमने केहनीए।
किस विध आमण दूमणी सुख बाई ए,
तू अस विन बेसी होय क्यों कुमलाईए॥१॥
कम्प पवन फगिको पड़यो सुख बहनीए
गयो कोमल तन कुमलाय थारो कहनी ए।
के ही सासू नासियां दुख पाई ए
के सुसरो नयो रीसाय क्यों घबराई ए॥२॥

॥ दोहा ॥

गद गद कंठी हो गई, जल भर आयो नैन।
रोती रोती यों कहे, सुन भाई मुझ बैन॥१॥

तर्ज—मारवाड़ी पनिहारी।

सुन उस दुख में क्या कहूँ सुण भाई रे
कहतां आवे लाज रे सुण भाई रे।
तुझ पाछे दिन रात में सुण भाई रे
दूं तो आपो काज सुण भाई रे॥१॥
ना कोई सुसरो पीसीयो सुण भाई रे
नहीं ही सासू नाल रे सुण भाई रे।

कोई दासी दुख दीयो सुण भाई रे,
रूठो है भरतार रे सुण भाई रे ॥ २ ॥
कर चालू पीहरे सुण भाई रे,
इण विरिया के मांयरे सुण भाई रे।
थू बिन बिरथा नार रे सुण भाई रे,
सूनो सब संसार रे सुण भाई रे ॥ ३ ॥

तर्ज—मूल

भगनी का सुन वचन यों भाई, दुख पायो अनपार।
सुनिये बाई सती अञ्जना, क्यों रूठो भरतारजी ॥८१
सती कहे यह कर्मगती है, होवे ज्यों तकदीर।
कोई किसी का चूक न इसमें, सुनो हमारा वीरजी ॥८२
जाओ भाई अपने घर तुम, रहना आनन्द मांय।
सोच फिकर मत करना मेरा, रहे कर्म सतायजी ॥८३
मात पिता को कहना मेरा, भक्ति युक्त परणाम।
जब तक राजी पियू नहीं होवे, मत लेना मुझ नामजी ॥८४
विलख वदन हो भाई अपनी, नगरी आयो चाल।
मात पिता ने बाईजीरा, मांड कह्या समाचारजी ॥८५
मात पिता सुण सोच करे अति, सती करे धर्म ध्यान।
ऐसे करता केई दिन जावे, आगे सुणो बयानजी ॥८६
घोड़ा खेलावण प्रति दिन जावे, सज्जन पवनकुमार।
आता जातां सती अञ्जना, करले पति दीदारजी ॥८७
दरसन से परसन चित होवे, सती मन धारे धीर।
एक दिन प्यारे पवनकुंवर की, पड़ी दृष्टि तिन तीरजी ॥८८

तर्ज—गोपीचन्द लड़का ।

सुन मित्र पियारा, क्या दुख कमी है महलां मांयने ॥ टेर ॥
मोहनगारी सूरत प्यारी कैसी है सुकमाल ।
किन्नरी है या अपछर कन्या, अथवा नागकुमारजी ॥१॥
सुन राजकुंवरजी सामी कमी है प्यारी आपकी ॥ टेर ॥
सती सुशीला सुन्दर अंगी, है यह अञ्जना नार ।
कर्मन करया कमी आकर, इनकी क्या विचारजी ॥२॥
परम प्रतापी पवनकुंवरजी, दीना हुकम लगाय ।
सती महल के आगे अंगी, दीनी भीत चुनायजी ॥३॥

॥ दोहा ॥

सती अति आरत करी, नयी हुई या बात ।
कही जाय दासी सखी, गती बिगाड़ी नाथ ॥४॥

तर्ज—लावनी ।

सखी किस विध धारूँ धीर मती घबराई
मुझे पिया बिना सब जगत लगे दुखदाई ॥ टेर ॥
मैं देखूं सूना महल फटे मेरी छाती
यो निरख निरख के रहूं सदा बिलखाती ।
रो रो कर कटती रात नींद नहीं आती,
प्रीतम बिन सारी रात तड़फती जाती ॥
मेरे नाथ पिया को जरा दया नहीं आई ॥१॥
मैंने छोड्या मायर बाप और मेरे भाई
मैं छोड्या सब परवार और भोजाई ।

मैं छोड्यो पीहरे को प्रेम पिया संग आई,
मैं मन में धरके आस सासरे आई ॥
मेरी मिटगई मन की मौज खोज रहा नांई ॥२॥
यदि चूक हुई हो नाथ ! चौड़े फरमादो,
जो गलती हुई हो नाथ ! साफ दरसादो ।
यह दासी रहे उदास चरण की चेरी,
चाहे रूठो तूठो नाथ ! शरण हूं तेरी ॥
क्या कीना मैं अपराध कियूंनी वतलाई ॥३॥

तर्ज—मूल ।

सती आरती छोड़ सदा ही, करे धर्म चितलाय ।
एक समय का सुनो जिकर तुम, श्रोता ध्यान लगायजी ॥८६
राज सभा में आयो दूत एक, लंका सेती चाल ।
पूछ्यां से सव मांड कह्या है, रावण केरा हालजी ॥६०
वरुणराय को जीतन कारण, आप भणी वुलवाया ।
जलदी से आ जाना भूपती, ऐसा हुक्म लगायाजी ॥६१
प्रहलाद भूपति सुनत वचन यह, सेना करी तैयार ।
रण में जातां देख पिताने, वोला पवनकुमारजी ॥६२

तर्ज—म्हारे घरां पधारोजी ।

म्हाने खोटो लागेजी, आप जैसों को रणमें जाणो भूंडो लागेजी।टेर
रगड़ा झगड़ा करना आछा जोर जवानी मांही ।
वूढ़ापा में झगड़ो करनो भलो न भाखे भाई ॥ १ ॥
वूढ़ापा में नीति कहवे धर्म करण की वेला ।
किण कारण कहो झगड़ो करिये, साथे न चाले अधेला ॥२॥
मुझ ने आज्ञा देवो पिताजी, झगड़ो करघा जाऊं ।
आप तणे परताप वरुण को जीत फते कर आऊं ॥ ३ ॥

तर्ज-मूल।

अति हट देख्यो पवनकुंवर को, दी आज्ञा फरमाय।
रण में रहना तुम हुशियारी दीना सब समझायजी ॥९३॥
पहर शस्त्र सजकर कुंवर होगयो खूब हुशियार।
सेनापति ने हुकम लगायो की सब सैन्य तैयारजी ॥९४॥
यह सब खबरां सुनने पाई, सती अञ्जना नार।
प्राण पिया तो रण में जावे, करना केम विचारजी ॥९५॥
दर्शन करलूं प्राण पिया का प्रीतम जावे आप।
शुभ सुगन से वस्तु आऊं देऊं हुकम सजायजी ॥९६॥
वसन्तमाला ने सती संग ले, ऊभी पन्थ मझार।
झांकी जोवे पवनकुंवरजी देखे आंख पसारजी ॥९७॥
कैसे वृक्ष विचारे देखो चित्र लिपी है कमाल।
इस आगे शीघी चपकर किमर होजावे पेमालजी ॥९८॥
सुनकर प्रधान कहे कुंवरसा यह मत मानो चित।
यह है प्यारी सती अञ्जना पूरण पुण्य पवित्रजी ॥९९॥
सुनकर रूठा पवनकुंवरजी क्यों आई इणवार।
छाती पासमें लाके कुंवर ने दी ठोकर की मारजी ॥१००॥
पड़ी धरण पर धस खाकर के ज्यों कदली की डार।
सती सोच मन दूखो मानो पायो दुःख अपारजी ॥१०१॥

तर्ज—कांकसियारी।

म्हारा प्राण पियारा प्रीतमजी हा! इम किम रूठो रे।
इम किम रूठो रे कलंक दियो झूठा रे। टेर।
मैं तो आई आज्ञा करके पियू का दर्शन करसूं रे।
हाथ जोड़ कर क्षमा मांगसूं, शीश चरण बिच धरसूं रे॥
किम मुझो अपूठो रे ॥१॥

सब लोगां के सामे म्हांरी, कीनी खूब खुवारी रे।
इणसे आछो जहर देयकर, मुझने क्यों नहीं मारी रे॥
कुयश छायो भूण्डोरे॥२॥
रोती रोती सती अंजना, पड़ी धरण मुरछाय रे।
वसन्तमाला बाला को बोले, सती मती अकुलाय रे॥
चलो घर ऊठो रे॥३॥

तर्ज–आखीर नार पराई है।

सोच सती अब करो मती, मूरख मिलियो पवनपती॥टेर॥
भीतर पीतल ऊपर झोल, पती आपरो फूटो ढोल।
खबर करी मैं रती रती॥१॥
ज्यों पूछे ज्यों अति गुमरावे, खर मिसरी।ज्यूं मुंड हिलावे।
ऊँध गती है मूढ़मती॥२॥

॥ दोहा ॥

पति निन्दा को नहीं सुने, सतियों को आचार।
वसन्तमाला को रीस ला, बोली अंजना नार॥१॥

तर्ज–निश दिन चरखो कात सहेली।

पियू को ऐसे न बोल सहेली, पियू मुझ प्राण पियारो है॥टेर॥
कुल दीपक मन मोहनगारो घर उजियारो हे।
शिर सेहरो सिणगार हमारो हार हियारो हे॥ १॥
विवेक चिनारो वचन तुम्हारो खटके खारो हे।
पति परमेश्वर कयो नीति में हिये विचारो प॥ २॥

तर्ज–मूल ।

ऐसे वातां करती दोनों, आई महल मझार ।
सामायिक शुभ मन से करती, अरु पडिकमणो सारजी ॥१०
धर्म ध्यान में समय बीतावे सती अंजना तमाम ।
पवनकुंवर ने नगरी बाहर कीना प्रथम मुकामजी ॥१०
खान पान कर सेन्या सब ही सुखे करे विश्राम ।
पवनकुंवर अब मिले सती से सुनिये कथा तमामजी ॥१०

तर्ज–चन्दा थारी चांदनीसी रातरे ।

पवनकुंवरजी बैठा होल्यो ढाल रे कांई सज्जन रे संग करे वातजी । चकवो चकवी बैठा तवरी डार रे कांई आई रे ऊपर आधी रातजी ॥ १ ॥ सज्जन पवनजी दोनों ही मिल बोलरे कांई वातां रे कर रया खूब किलोलजी । होल होलकर बोले दोनों बोल रे कांई आपमें रे प्रेम कथा अनमोलजी ॥ २ ॥ चकवी कर रही है चहचाट रे, कांई कानेरे सुणियो पवनकुमार ने । क्यों कुरलावे कारण कांई बतलाव रे कांई बोल्यो रे सज्जन ने ललकार रे ॥३॥

तर्ज–नाथ कैसे गज को फन्द छुडायो ।

चकवी यों क्यूं शोर मचायो क्यों चहचाट लगायोरे ।टेर
कारण एन में रति नहीं दीसे, जिससे जिय घबरायो ।
यिन कारण ही क्यों कुरलावे पतो पूरो नहीं पायो ॥ १ ॥
सुनकर सज्जन यूं मन सोचे आछो अवसर आयो ।
जिससे सतीको मद अपमानी ऐसो रंग लगायो ॥ २ ॥

चकवी इणविध शोर मचायो ॥ टेर ॥
चकवी कहती चतुर सुनो तुम, चित किनको चमकायो।
कलंक लगाकर किया विछोहा, जिनको विरह फल पायो ॥३॥
सती अंजना पे रंज को कारण, सगलो भेद बनायो।
ऐसो ढंग रंग दिखलाकर, पवनकेऽनंग जगायो ॥ ४ ॥

तर्ज—तावड़ा धीमो पड़जारे।

वचन यूं पवनजी सुणिया रे वचन०,
गुणीयो मुख नवकार एक और मस्तक ने धुणियो ॥ टेर ॥
कैसा प्रेम है इस चकवी का, निज पति चकवे साथ।
पशुओं में भी पति प्रेम हा ! किसो भन्यो जगनाथ ॥ १ ॥
मुझ को कैसी मिली करकशा, पूरव भव के पाप।
घर में झगड़ो रहे रात दिन, दिल में लग्यो सन्ताप ॥२॥
सज्जन कहे सुन दोस्त हमारा, क्यूं करो चिन्ता घोर।
थारे जैसी नारी जग में, नहीं है दूजी ठोर ॥ ३ ॥
सती सुयश तो फैल्यो जग में, गावे गुण सब शहर।
ऐसे कहता पवनकुंवर को, मिटियो सारो जहर ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

शुभ कर्मों के उदय से, आयो प्रेम अमाप।
क्रोध हट्यो सती ऊपरे, करे कुँवर सन्ताप ॥१॥

तर्ज—हां सखी चल खास कन्नेडी।

होय काम मैं खोटो करियो, लोक लाज से जरा न डरियो।
द्वेष सती के ऊपरे नाहक ही धरियो रे ॥ टेर ॥

पवन के पीछे पीछे क्यों तरसाती, बनजा तूं मेरी पियारी है।
जोर जवानी फिर न मिलेगी, सुनले तूं मोहनगारी है ॥२॥

॥ दोहा ॥

सती अंजना और सखी, सुणया अपूरव बोल।
बोली उत्तर में सखी, सुणरे फूटा ढोल ॥१॥

तर्ज—कायथडा ॥

हां रे लंपटी कै तूं मारग भूलियो, हां रे लंपटी के थारो आगयो काल रे पापी, म्हारा पिया परदेशां में ॥ टेर ॥ हां रे लंपटी चालूं थारी जीभड़ी, हां रे लंपटी चिराऊँ थारी खाल रे पापी म्हारा पिया० ॥ १ ॥ हां रे लंपटी मै ऐसी नहीं कामनी, हां रे लंपटी राचू थारे फन्द रे पापी म्हारा० ॥२॥ हां रे लंपटी क्या तू मेरे सामने, हां रे लंपटी गिणुं न इन्द नरेन्द्र रे पापी म्हारा० ॥३॥

॥ दोहा ॥

सती शील में झिल रही, लखली पवन कुमार।
प्रेम लाय के पुनरपि, बोल्यो वचन विचार ॥१॥

तर्ज—मेरा नन्नासा देवरा ॥

होले होले अब तूं बोल मेरी प्यारी, नहींतर है मेरी खुवारी है। झटपट खिड़की खोल मेरी अञ्जना, मै आयो हुं पवन पियारी है। हो मोरी प्यारी अञ्जना, तो पर वारी है ॥ टेर ॥ १ ॥ जिनके लिये तू झूरे झूरणा, उनको वेवे किम गारी है। मै हूं तुम्हारा पियू पियारा, तूं है मेरी पियारी है ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

दीपक लेकर देखियो, निश्चे पवन कुमार ।
जाय बसन्ती सखीमणी, बोली इणी प्रकार

तर्ज—पनजी मूंडे बोल ॥

पियू घर आयो ए २ सुन सती अंजना नाम बधायो ए ।
बोल बोल अब बोल मून तू, थारो भाग्य सवायो ए ।
देख देख अब आयो पियूजो, बिना बुलायो ए ॥१॥
सुणयो पवन यो सती अंजना, अमृत मेघ बरसायो ए ।
पियू आमे से सती हिया में हर्ष न मायो ए ॥ ॥
ऊठी सती तब निज आसन सी बदन कमल विकसायो ए
कोल जुपार ओढ़ कर दोनों वचन सुनायो ए ॥२॥

तर्ज—गवरल ईसरजी केवे तो हंसकर बोलना

भले आया हो मीतमजी आऊं वारणा हो थां पर म हो बलिहारी राज पधारया हो ॥ टेर ॥ सती मन ऊठी शी मनायो पियू दरसण से मन विकसायो अपनो सब अपर बमायो मंद पद आसन लाय बिछायो राज पधारया ॥१॥ आज आंगण में सुरतरु फलियो म्हारो सारो दुख टलियो पुण्य जोग से मीतम मिलियो म्हारी धन्य घ धन भाग कि राज पधारया हो ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

स ी सरलता दाखिता, पतिवरता पिय ओर ।
लखकर मन मुदित हुआ, बोला कुंवर किशोर

तर्ज-बना ऊमराव ॥

प्यारी म्हारी तू कुलवन्ती नार, सतवन्ती तूं साची ए म्हांरी घरनार। प्यारी म्हारी सज्ये। शील सिणगार, पति प्रेम में राची ए म्हारी घरनार ॥ १ ॥ प्यारी म्हारी मैं हूं बड़ो पुण्यहीन, दुखड़ा थाने दीनाए म्हांरी घरनार। प्यारी म्हारी तू तो लियो गुण चीन, अवगुण एकन लीनो ए म्हारी घर-नार ॥ २ ॥ प्यारी म्हारी तूं है घड़ी गुणवान, मोटी महिमा थारी ए म्हारी घरनार। प्यारी म्हारी क्षमो म्हारो अपमान, जाऊं मं बलिहारी ए म्हांरी घरनार ॥ ३ ॥ पिया म्हारा तूं है प्राण आधार, मं हूं दासी थांरी हो म्हांरा भरतार। पिया म्हांरा ऐसो न करियो विचार, मैं चाकर चरणांरी हो म्हांरा भरतार ॥४॥ पिया म्हारा किया मैंने जो कसूर, माफी उणारी दीजो हो म्हारा भरतार। पिया म्हारा बढ़ गयो म्हारो नूर, अब तो किरपा कीजो हो म्हारा भरतार ॥ ५ ॥ पिया म्हारा सब करमां का खेल, कैसो रंग दिखायो हो म्हारा भरतार। पिया म्हारा आज हुवो है मेल, ऐसो लेख लिखायो हो म्हारा भरतार ॥६॥

तर्ज-मूल ॥

ऐसे उत्तर प्रत्युत्तर कीया, पवन अञ्जना नार।
दोनों ही गल बैयां डाली, आया महल मजारजी ॥१०९॥
रति क्रिया में पति पत्नी का, गया तीन दिन रात।
पवनकुंवर कहे प्यारी से यूं, चौथे दिन परभातजी ॥११०॥
प्यारी थारे प्रेम में, कुछ नहीं सूझे मोय।
जाणो दिल चावे नहीं, रेणो किस विध होयजी ॥१११॥

तुम बिन सुख नहीं मिल्ह मिलके भग्यो अपर अंमाल।
आऊँ छोड़ नहीं पैर मरीजे, हुयो हाल बेहालजी ॥११२॥
सुख में मुझको आयो पवसी सुख प्यारी या बात।
सहसा सुख में महलां मांहीं सखी बसन्ती सातजी ॥११३॥
पियागमन का वचन श्रवण कर, हागई अधिक उदास।
हाथ जोड़ चरणां में झुककर करे सती अरदासजी ॥११४॥

तर्ज–मारवाडी मांढ ॥

सुन प्राण पियारा हाय हियारा आवो मत मुझे छोड़ ॥टेर॥
हाथ पकड़ पतिराज को रे बोली अबला नार।
आयो थो तो भावसो रे जाओ नहीं इणबारजी ॥१॥
आप बिना नहीं भावड़े रे सुणज्यो किरपानाथ।
सौ बातां री बात एक है ले चालो मुज साथ हो ॥२॥
झुक झुक चरणां झुक रही रे गद् गद् बोले बेण।
पिपू गले में लिपट गई रे झब झब भरिया नैण हो ॥३॥

॥ दोहा ॥

प्रेम फास में फस गये, फिर नहीं आना हाथ।
चिन्तातुर हो चित्त में, कहे अंजना नाथ ॥१॥

तर्ज—पनिया भरन कैसे जाना ॥

हम कहे तुमपर मृदुवानी सुन सील सती हूं सयानी ॥टेर॥
नहीं आने का चित चावे दिल देख घणो पछतावेजी
कयो मान मेरो कुंवरानी ॥१॥
मैं पीहर दी था आर्ड अपने त्यो न जावे म्हांसूंजी
मत मान मगन से पानी ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

रोती रोती बोली अञ्जना, यह तो कीजे काम ।
एक वार तो जावो राज में, ज्यों न होय बदनामजी ॥११५॥
पिया मान हमारी, आप पधारो सीधा राज में ॥टेर॥
गर्भ वृद्धि अब होसी मेरी कुछ तो करो विचार ।
सासू सुसरा देखने सरे, देसी मुझे धिकारजी ॥११६॥
इण से अर्ज है मेरी आप से, जाय कहो समाचार ।
शंका जिण से रती न होवे, शोभा हो संसारजी ॥११७॥
सुन प्राणपियारी, मैं तो सरमाऊं जातां राज में ॥ टेर ॥
कुंवर कहे क्यूं जाऊं राज में, जातां आवे लाज ।
दुनियां दिल क्या जाणसी सरे, क्या केसी महाराजजी ॥११८
मातपिता की शंका मेटण, कहूं एक उपाय ।
गहणा कपड़ा मेरी मुद्रिका, देना उन्हें दिखायजी ॥११९॥
कर्मयोग से जाने की हा !, नहीं आई मन मांय ।
वसन्तमाला को दी भोलावण, सकल कथा समझायजी ॥१२०
रुदन करे असराल अञ्जना, पियू को करे प्रणाम ।
मुखसूं देती ऐसे ओलया, मत लो 'जावां' नामजी ॥१२१॥

॥ दोहा ॥

आणो तो आछो घणो, जाणो जहर समान ।
वालहा तणा विछोहचा, मत दीजे भगवान ॥१
पियू जावो थे जंगमें, हिय में लग्यो हिलोल ।
सुध बुध सारी भूल गई, चित्त चढ़ियो चकडोल ॥२
नयन आसी नींदड़ी, आछो न लागसी अन्न ।
रसिया थामें रात दिन बसियो म्हांरो मन्न ॥३

पड़सूं पतली आप बिन, जल बिन जिम जलमेव।
भटके सारा सेर सम, मोहन तुम बिन महेल ॥४

सवाल पवनकुंवर का—

॥ दोहा ॥

प्यारी न्यारी नहीं करूँ, मैं हिरदा सूँ दूर।
पिया इण बिरिया अंग मे, आयो मुझ जरूर ॥१॥
प्यारी तू मन में बसी, ज्यू पथरी में आग।
ऐसो कामण क्यूं कियो, कैसी लगाई लाग ॥२॥
प्यारी बिन सारी नही, लागे मोय असार।
मिलनो बिछुड़नो अरे !, क्यों कीनो करतार ॥३॥
प्यारी आसूं बेगसूं, मन म्हारो तुम पास।
धीरप चित धारणा करो यू मत होवो उदास ॥४॥

तर्ज—मूल ॥

पति चिलवामन देख सती मन आयो और विचार।
युद्ध मे जातां पति ना रोकना कहत नीति करजी ॥१२॥
सोच मुमोच मजना बोली, सुन साहब सरदार।
युद्ध में बैरी जीतजो सरे नम आवो भरतारजी ॥१३॥

तर्ज —मीठो खरबूजो ॥

सुन बालम सरदार आप म्हने भूल म जाइजो हो बेगा आइजो हो। टेर। युद्ध में जाकर सुयश कमाइजो मत कायरता लाइजो हो। पड़े बड़े झुंझार मारकर और जमाइजो

हो ॥१॥ सामी छाती लइजो भंवरजी !, मत थे पूठ दिखाइजो हो। गढ़-पतियों का गाढ़ काढ़कर, दास बनाइजो हो ॥ २ ॥
हाथ जोड़कर आही अरज है, युद्ध से जीतकर आइजो हो।
चरणां की चेरी की पियूड़ा, खबरां लिराइजो हो ॥३॥

जवाब पति का–

सुनो सुलक्षणी नार लार आनंद में रहीजो हो, जस थे लीजोहो।टेर
पाछो वेगो आसूं प्यारी, सोच जरा मत कीजो हो।
सत्यवन्ती कुल नार अञ्जना, रीत में रहीजो हो ॥१॥
महलां में मन मोहनगारी, सुख से क्रीड़ा कीजो हो।
सुनो वसन्ती मेरी प्यारी को, दुख मत दीजो हो ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

ऐसा कहकर पवनकुंवरजी, मिल्या मित्र से जाय।
अब तो चालो कटक मांयने, ठेस्यां ठीक न थायजी ॥१२४॥
कटक लेयने पवनकुंवरजी, लंका नगरी जाय।
भूप भली परे भेटीया सरे, अति रलियायत थायजी ॥१२५॥
लेकर आज्ञा रावण राय की, शुभवेला सुखदाय।
वरुण राय पर ततछिण चढ़ियो, दल बल सबल सजायजी ॥१२६
अब तुम सुणो सती कथा को, गर्भ रह्यो तिण रात।
गुप्त पणे का काम है सरे, कोई न जाणे वातजी ॥१२७॥
गर्भ वृद्धि को जान के सरे, माडी दान की शाल।
दीन हीन अरु दुखियारों की, लेवे सती संभालजी ॥१२८॥
सासू आशु खबरां पाई, वहू वधायो पेट।
द्रव्य लुटावे राजनो सरे, पुरी जमाई पेठजी ॥१२९॥

तर्ज-तरकारी लेलो० ॥

मं तो नहीं मानूं साची वातां तूं कहदे अजना ॥ टेर ॥
झूठ बोलता जरा न लाजे, अयि ! व्यभिचारण नार।
कैसा अनरथ किया पापणी, धिक धिक तुझे धिक्कारजी ॥१
रे दुष्टे ! दुर्भागण ! डाकण !, लोपी कुल की लाज।
तू कुल खांपण आई घर में, देख लिवी मैं आजरे ॥२॥
पियो तेरे से कबहु न बोल्यो, क्यों तूं बोले कूड़।
निर्णो इसको निकलेला जद, पड़सी मूंडे धूड़जी ॥३॥

॥ दोहा ॥

कटुक वचन सासु तणा, सुणया अंजना नार।
उत्तर में आतुर तदा, बोली वचन विचार ॥१॥

तर्ज-तावडा धीमो पडजारे ॥

सासूजी वेड़ा मत बोलो २ पड़ा कांइ रूठ गया हो कड़वा क्यों बोलो ॥ टेर ॥ जाया थारा आया अठे श्रौर, रह्या हमारे पास। आ सहिनाणी देखलो सरे, राखो मेरा विसवास ॥१॥ रोती रोती कहे अंजना नहीं मैं कीना कर्म। मत दो झूठो आल सासूजी, राखो हमारी शर्म ॥२॥

लाड़ीजी लखण नहीं आछा हो २, खोटा करके काम अबे थे बण रह्या हो साचा ॥ टेर ॥ चोरी कर तूं लाई गहणा, बण रही साहूकार। जाणुं लखण मैं थारा सारा, तूं सेवे व्यभिचार ॥१॥ कंचन छुरी नहीं मारूं पेट में, सो बातां एक बात। पिहर जा परी पापणी सरे, नहीं राखू एक रात ॥२॥

॥ दोहा ॥

मती अंजना और सखी, करे अरज कर जोड़।
मानो अरजी मानजी, थे मांरा शिर मोड़ ॥१॥

तर्ज-कांटा लागो रे देवरिया० ॥

मतना मेलो हो सासुजी म्हांने पिहरिये निरधार ॥ टेर ॥
कलंक लेय किम पीहर जाऊँ, ऐसे जातां मैं शरमाऊँ,
मत काढो घर बार ॥ १ ॥
हाथ जोड़ मै अरज करू छूं, मस्तक चरणां बीच धरूं छूं,
एक थारो आधार ॥ २ ॥
पियुड़ो म्हांरो पाछो आसी, साच्च कहूँ सासू दुख पासी।
ऐसी तुझे धिक्कार ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

केतुमती अति क्रोध में, सुन्या वचन लिगार।
अनुचर को बुलवाय के, बोली यों ललकार ॥१॥

॥ तर्ज-लावणी ॥

मत देना कोई आल किसी पर भाई, भुगते हाथो हाथ हुवे दुखदाई ॥ टेर ॥ केतुमती कहे कथन क्रोध भर नैना, है हुकम मेरा यह साफ साफ सुन लेना। इन दोनों को रथ मांय घाल ले जाना, फिर अध विच में छिटकाय लौट घर आना, यदि होगा इसमें गलत मौत तेरी आई ॥१॥ दोनों को काला वेस तुरत पहिराया, जो आभूषण मणि माल तुरत

सुखपाया। सती करे अरदास सखी समझावे रथ बास
है समझाट जगल में आवे, अनुचर कहै कर जोड़ मति
पाई ॥ २ ॥

तर्ज—मीठोखरबूजो ॥

केतुमती अति रीस लाय यों हुकम लगायो है यों फुरमायो है रे
कांई कहूं मैं बात बाहसा कहतां दिल घबरायो है।
छोड़ जंगल में आपने मुझको सुखपायो है ॥ १ ॥
समझो मेरो अपराध नाईजी, चरणों शीश नमायो है।
इण में नहीं है चूक मेरो मैं हुकम बजायो है ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

गयो सारथी छोड़कर ऊपर आई रैन।
अति दुखित हो अजना, बोली ऐसे बैन ॥१॥

॥ तर्ज—पपैया काहे मचावे शोर ॥

सहेली अब किम धारूं धीर पड़े नयन से नीर ॥ टेर।
पापी अब तो भीमम मुझ पर नाहक वे नाराज। पिया प्रेम
अब किया मेरे से सासु बिगाड़ी लाज कलंक के काले ता
पर बीर ॥१॥ जस जीवन अपजस है मरना कहते नीति
कार। इसमें मरना श्रेय मुझ है मरसूं खाय कटार, सुनत
यों लाय कलेजा चीर ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

आकुल व्याकुल अंजना, आयो नयनां नीर।
तदपि साहस धारकर, सखी बंधाये धीर ॥१॥

॥ तर्ज कमली वालेकी ॥

दिलगीर हुये क्यों बाईजी, तकदीर लिखा वही होता है।
तदबीर करो चाहे लाखों पर, तकदीर लिखा जो होता है॥टेर
जो रोज सुवह को खिलता है, वह श्याम पड़े कुमलाता है।
जो दाग हजरते वैठ गये फिर, रगड़ रगड़ क्या धोता है॥१
एक दशा नहीं रही कभी, यह गेंद दड़ी ज्यों गोता है।
हल मस्त होय जो फिरता था, वह आज दुखी हो रोता है॥२

तर्ज-मूल ॥

ब्द सुणया यों सती अञ्जना, आयो हिरदे होस।
ामलदार ने अमल डली ज्यों चढ़ियो दूणो जोसजी ॥१४५॥
ती दुख काटण दिनकर ऊग्यो, प्रगट्यो प्रकट प्रकाश।
खी सती को धीरज देवे, देवे पूरो जासजी ॥१४६॥
हिन्दपुरी आ दीखे सामने, अब मत कीजे वार।
ालो बाईजी जे जन करिये, होसी जय जय कारजी ॥१४७॥

तर्ज- मैं अंगरेजी पढगई हूं ॥

नहीं पीहरिये चालूं, मुझको शर्म सताती ॥ टेर ॥ कलंक
य किम पीहर जाऊँ, साच कहुं सहियर शर्माऊं, हा हा
से हालूं ॥१॥ जोगिन बनकर अलख जगास्यूं, सुत होने से
र जल जासूं, पूरण पतिव्रत पालूं ॥२॥

तर्ज-मूल ।

: कर्मों की माया बहिनी, सती मतीकर सोच।
ाढ़त मिलियां सब सुख होसी, ऊभो घर आलोचजी ॥१४८

तर्ज-मांड मारवाडी ॥

सुन भाई प्यारा, वचन हमारा, जाय कहो नरपाल ॥ टेर ॥
पुत्री आई आपकी रे, निर्मल मन निकलंक।
सासु फासु द्वेष कर मोपे, दीनो कालो कलंकजी ॥१॥
जो विसवास हो आपने प्रभु, राखो मुझने पास।
प्रीतम आवे जहां लगे म्हांने, आपसूं यह अरदासजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

द्वारपाल भूपाल ने, जाय कही ततकाल।
पहिपति सुन मूर्छित हुवा, बोला शीघ्र सवाल ॥१

तर्ज—कव्वाली ॥

काढो कन्याने घर बार कुलको कलंक लगाने वाली। कु० दोनों लोक लजाने वाली ॥ टेर ॥ कहना तुम यों ललकार देना मुख से उन्हें धिकार, चल तूं अयि! व्यभिचारण नार, प्यार कर यार बनाने वाली ॥१॥ मतले यहां रहने का नाम, तुमने किया नाम बदनाम, करके ऐसे खोटा काम, हा! हा! नहीं शर्माने वाली ॥ २ ॥ मुझको मत मुंह दिखलाय, कुन देखत ही विष खाय, झट पट मुंह ले यहां से जाय, कुल में दाग लगाने वाली ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

कही सही नृपति कही, आतुर अनुचर आय।
कदली वृक्ष ज्यों धरणी पे, पड़ी बाल मुरझाय ॥१

सासू मो सिर कलंक चढ़ाया, काला वेस मुझे पहनाया ।
जिनसे मैं शर्माई हूं ॥ २ ॥
पिता साहब ने हुकम लगाया, प्यासी ने नहीं नीर पिलाया ।
गाढी मैं घबराई हूं ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

हींडे हींचती मातने, सुनली ताम पुकार ।
लखी पुत्रिका अंजना, बोली निजर निहार ॥१॥

तर्ज—आखिर नार पराई है ॥

जब ही अन जल खाऊँगी, कन्या बार कढाऊँगी ॥ टेर ॥
कलंक लेय क्यों आई आज, इनको जरा न आवे लाज ।
मैं नहीं मुंह लगाऊंगी ॥१॥
बांझ प्रभु हा! क्यों नहीं कीनी, क्यों कुलटा यह कन्या दीनी ।
इनका नाक कटाऊंगी ॥२॥

॥ दोहा ॥

आई क्यों यहां अंजना, माता का नहीं प्रेम ।
चेडी नेड़ी आय के, बोली वेड़ी एम ॥१॥

तर्ज—बीरा लूंबां झूंबां होय आई जो ॥

म्हांरी बुरी लगावेला कांइजी, तूं क्यों पीहरिये आईजी ।।टेर।।
क्यों खोटा कर्म कमाया, थे कुलने चावल चढायाजी ।
थे अब तो कुछ शर्मावो, म्हाने मूंडो मती दिखावोजी ॥१॥
मत मंदिर अन्दर आना, चले झटपट यहां से जानाजी ।
है माताजी का कहना, मत खड़े मिन्ट भर रहनाजी ॥२॥

तर्ज—म्हाने खोटो लागेजी ॥

मोने भूडो लागेजी, नणद बाई ओ वेश आपरो आछो न लागेजी ॥ टेर ॥ घर घर में थे फिरो हींडता, जरा नहीं शर्माओ । लाज शर्म सब ऊँची धरदी, म्हाने मती लजावो ॥१॥ कुण दीना है पीला चावल, अठे आप क्यों आया । दोनों कुल ने दाग लगायो, आछा कर्म कमाया ॥२॥

॥ दोहा ॥

सखी लखी यह रीस हा !, ऊठी उरमें झाल ।
पीस दांत और रीसला, बोली यों ततकाल ॥१॥

तर्ज—गनगोर की चाल मे ॥

भोजाई थे म्हारा थारा वचन विचारी बोलोजी २ अब तो जलदी आडो खोलोजी ॥ टेर ॥ ल्होडीजी लखणांरा लाडा, आडा क्यो थे जडियाजी । मै थांरो कहो कांई विगाड्यो, वचन बोलो अणघडियाजी ॥१॥ घर आयो मा जायो कहवे, अब तो नीचे आवोजी । और थांरे सू नहीं हुवे तो, पाणी आकर पावोजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

नणद भोजाई बीचमें, आयो आतुर वीर ।
वीर देख सती अंजना, कहै नयन भर नीर ॥१॥

तर्ज—गनगोर की चाल में ॥

पावोनी अब नीर भाइजी म्हाने पावोनी अब नीर हो म्हारा जामण जाया वीर भाइजी म्हाने पावोनी अब नीर ॥

॥ दोहा ॥

सखी कहै सती अंजना, अति मति करो विचार।
मनमें अब तुम मानलो, स्वारथियो संसार ॥१॥

॥ तर्ज कमली वालेकी ॥

व मतलब के संग साथी है, दुनियां में किसी का कोई नहीं।
व अपने अपने गर्जी है दु:ख दरदी दिल का कोई नहीं ॥टेर
नी वनी के है मीड़ और आन वनी के कोई नहीं।
सुख में साथी लाखों है और दुख का साथी एक नहीं ॥१॥
तकदीर टिकाने जब थी, था मुझ से न्यारा एक नहीं।
जब मेरा मेरा करते थे, अब तेरा प्यारा एक नहीं ॥२॥

॥ दोहा ॥

ऐसे आखिर आगई, माणक चौक मंझार।
नागरीक नरसे सती, कर रही एम पुकार ॥१॥

तर्ज-तरकारी लेलो मालन आई रे० ॥

नगरी का लोका कोइ तो पिलावो पानी आय के ॥ टेर ॥
प्यासां मरती मरूं हाय मैं, नीर नयन में आयो।
मात पिता तो मुझ पर रूठे, पानी भी नहीं पायोरे ॥१॥
अयि! नगरी का लोकां आवो, मतना तुम भय खावो।
दीन दुखी दुर्वल अवला की, जरा दया दिल लावोरे ॥२॥

॥ दोहा ॥

ऐसे कहतां अंजना, हग भर आयो नीर।
हृदय विदारक आहसे, जाय कलेजा चीर ॥१॥

तर्ज—छन्द मालिनी ॥

सब नगर सिपासी देख आये उदासी ।
अति दुखित पियासी अबला और दासी ॥
सब श्रम भय आवे चित्त में दुःख पावे ।
पर जल न पिलावे, पास कोई न आवे ॥१॥

तर्ज—छन्द द्रुतविलम्बित ॥

नगरिमें नरि में करुणा नहीं दुखनता ममता अकुला थी ।
अब नहीं तु कहां मन लापनो, दुर भयो समतो मनभावनो ॥

तर्ज—छन्द मालिनी ॥

शिर पर अति चोटी, हाथ सादी लिये हैं ।
जल भरकर लोटी स्नान सुखी किये हैं ॥
अतिकर करुणाई तिन मे पास आई ।
इम किम कुमलाई बोल तू बोल पाई ॥१॥

॥ छन्द द्रुतविलम्बित ॥

नृपति की पति की घटना सही ।
सब कथा विकथा, घटना कही ॥
जनकजी क जहां जननी रहे ।
मुझ कियो तु नहीं जन ! नीर है ॥१॥

॥ छन्द-मालिनी ॥

सुनकर अकुलायो, तिमने शीश नायो
मटि मन घबरायो, धैर्य ऐसे बधायो ॥

मुझ विनय सुनीजे, देर माता न कीजे।
झट पट अब पीजे, नीर ठंडा तु लीजे ॥१॥

तर्ज—ख्याल की चाल में ॥

सुन विप्र पियारा, मैं तो नही पियूं पानी पुण्य का ॥ टेर ॥
पानी बूंद एक पिऊ पुण्य की, पीता लागे पाप।
कष्ट पड्यां भी कायम रहणो, कह्यो नीति में साफजी ॥१॥
और रहस्य है इनमें भाई, किम लोपूं पितु आन।
इनसे कहना मेरा मानलो, जावो घर मतिमानजी ॥२॥

सुन सती सयानी, मतकर नादानी पानी पीजिये ॥ टेर ॥
मैं हूं नोकर माता तेरा, तूं मोटी महारानी।
अरज दास की मान अरोगो, छोड़ो आना कानीजी ॥३॥
भीड़ पड़े फिर आन कान क्या, सबसे प्यारे प्रान।
पानी पीकर शांति कीजे, मुझ अरजी लो मानजी ॥४॥

न्याय युक्त है तेरा कहना, पर है एक विचार।
राजाजी नाराज होवेगा, होसी तेरा बिगारजी ॥सुन विप्र०॥५

चाहे राजा मुझ पर रूठे, लूटे सब घर बार।
कूटे काटे फांसी देवे, छूटे नहीं उपकारजी ॥ सुन सती०॥६॥
पानी कैसे पीऊँ प्यारे, होवे तुजको दुःख।
पर प्राणी को दुःख देकर के, नहीं मानूं निज सुखजी ॥सुन विप्र०७
नगरी बाहिर चालो बाई, पालो पिता की आन।
पानी पायां बिन नहीं जाऊँ, दिल में लीनी ठानजी ॥सुन सती०॥८

॥ दोहा ॥

पानी पाकर विप्रवर, गयो आप निज द्वार ।
सती सखी तब सखी कहे, चालो विपिन मझार ॥१॥

तर्ज—याद प्रभु आवे रे दरदमें ॥

चालो अब बाई संभालो विपन मे
संभालो विपन मे पालानी वनमे ॥ टेर ॥

पीहर सासरे आसरो नांहि कसकर कपड़े यो वसकर मनम ॥१
वन मृगनन के मन में रोंगे भूल जाय तू सकरे सदन मे ॥२

॥ दोहा ॥

चली चलीसंग अंजना, आई विपिन मझार ।
कर्मरेख जग वाकड़ी, देखो सब नर नार ॥१॥

तर्ज–मन चलियो तूं वेर ॥

माता सांभलो हो भवियण कोई मत दीजो आल ॥ टेर ॥

आल दियां लागे घणो हो भवियण बड़ो कर्म जंजाल ।
भुगतणमेला जीवने हो भवियण करदे हाल बेहाल ॥१॥
आल दियो सती अंजना हो भवियण पूरव भव में पियार ।
बारह घड़ी का हो भया हो भविकण बारह वर्ष ।

मुझ विनय सुनीजे, देर माता न कीजे।
झट पट अब पीजे, नीर ठंडा तु लीजे ॥१॥

तर्ज—ख्याल की चाल में ॥

सुन विप्र पियारा, मै तो नहीं पियू पानी पुण्य का ॥ टेर ॥
पानी बूंद एक पिऊ पुण्य की, पीतां लागे पाप।
कष्ट पड्यां भी कायम रहणो, कह्यो नीति में साफजी ॥१॥
और रहस्य है इनमें भाई, किम लोपूं पितु आन।
इनसे कहना मेरा मानलो, जावो घर मतिमानजी ॥२॥

सुन सती सयानी, मतकर नादानी पानी पीजिये ॥ टेर ॥
मै हूं नोकर माता तेरा, तूं मोटी महारानी।
अरज दास की मान अरोगो, छोड़ो आना कानीजी ॥३॥
भीड़ पड़े फिर आन कान क्या, सबसे प्यारे प्रान।
पानी पीकर शांति कीजे, मुझ अरजी लो मानजी ॥४॥

न्याय युक्त है तेरा कहना, पर है एक विचार।
राजाजी नाराज होवेगा, होसी तेरा विगारजी ॥सुन विप्र०॥५
चाहे राजा मुझ पर रूठे, लूटे सब घर बार।
कूटे काटे फांसी देवे, छूटे नहीं उपकारजी ॥ सुन सती०॥६॥
पानी कैसे पीऊँ प्यारे, होवे तुझको दुःख।
पर प्राणी को दुख देकर के, नहीं मानूं निज सुखजी ॥सुन विप्र०७
नगरी बाहिर चालो बाई, पालो पिता की आन।
पानी पायां बिन नहीं जाऊँ, दिल में लीनी ठानजी ॥सुन सती०॥८

कहां पीयर कहां सासरो हो भवियण, कहां माता कहां वीर।
घर रखणी अलगी रही हो भवियण, जरा न पायो नीर ॥३॥
कहां रथ पिंजस पालखी हो भवियण, कहां दासी और दास।
दुख पावे दोनों जणी हो भवियण, नहीं कोई दूजो पास ॥४॥
सती अति रोवे आरडे हो भवियण, करे रुदन विकराल।
रोती रोती इम भणे हो भवियण, सुण सहिअर मुज हाल ॥५॥

तर्ज—छोटी मोटी सहियां रे।

सुन मेरी सहियर ए दुखों से दिन काटना ॥ टेर ॥ अति दुःख पाया मैने पिया के प्यार में, बारे बारे वरसों तक नहीं बतलावना ॥ १ ॥ अति दुख पाया मैंने सासू की कार में, कलक लगा करके जगल में मुझे काढ़ना ॥२॥ फिर दुख पायो मैंने पियर के द्वार पै, भाई भोजाई ने नीर नहीं पावना ॥३॥

॥ दोहा ॥

वसन्तमाला वाणी वदे, कीजे वन में केल।
सुख दुख मिलना बिछुड़ना, सब कर्मों का खेल ॥१

तर्ज—होरी काफी।

कही कर्मन की गत न्यारी, टरे ना किन से टारी ॥ टेर ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश शेष सब, कर्मन के वसकारी। पांडव राम राय हरिचन्द से, बड़े बड़े अवतारी, भमें वन वन भिखियारी ॥१॥ सुख दुःख संपति विपति वियोग है, चल दल ने अनुहारी। पूरव भव के कर्मोपार्जित, पावत है नरनारी लिखो यों नीति मझारी ॥२॥

तर्ज—तावड़ा धीमो पडजा रे।

काम मैं आछो नहीं कीनो २ दीयो सति ने दुःख नाहक अपजस शिर लीनो ॥टेर॥ मेरी लाडली सती अञ्जना, आशा कर आई मै निरभागन ऐसी निकली जरा न बतलाई ॥ १ ॥ अकल गई थी निकल हमारी, विकल भई मुझ देह। पानी तक नहीं पायो उनको, आसू बरसे मेंह ॥२॥

॥ दोहा ॥

पाछल बुद्धि नार की, पड़ी धरणी मुरजाय।
महाराजाजी आय के, रहे एम समझाय ॥१॥

तर्ज–रुणभुणियो ले।

किस कारण इण रीत सुं सुणो राणीजी, थे डब डब भरिया नेण हो महाराणीजी। इतनो सोच करो किसो सुणो राणीजी, थे सांच कहो मुझ वेण हो महाराणीजी ॥ १ ॥ के थांने लागी भूतणी सुण राणीजी, के थारो दुखे शीष हो महाराणीजी। के कोई हुकम न मानियो हो महाराणीजी जिणसुं आई रीस हो महाराणीजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

रोना धोना रोक के, कर कुछ सोच विचार।
हाथ जोड़ राणी कहे, सुण प्रिय! प्राणनाथ ॥१॥

वसन्तमाला कहे सुण तूं बाई, बाप तेरो चण्डाल।
माता तेरी पापणी और भाई है कंगालजी ॥१६४॥
पानी तक नहीं पायो प्यारी, और कहूं क्या बात।
आल दियो फिर झूठो उलटो, नहीं राखी एक रातजी ॥१६५॥
सती कहे तूं मतिकर निन्दा, पुण्यवन्त मारो तात।
पतिव्रत पालनहारी माता, पितु भक्ता है भ्रातजी ॥१६६॥
पीहर और सासरे मांही, मत कर किन पर रोष।
पूर्व भव में कर्म कमाया, दे कर्मों ने दोषजी ॥१६७॥
पग में भागो कांटो सती के, आटो काढे जाम।
चलियो न जावे अति दुःख पावे, बोली सखी को तामजी॥१६८

तर्ज—कांटो लागो रे देवरिया।

काटो लागोए पग मांय सहेली पैंड भर्यो ना जाय ॥टेर॥ किन विध चालू कहिये बाई, चलतां चलतां मैं घबराई, जीव रह्यो दुःख पाय ॥१॥ जिण में कांटो आंटो काढे, देखो स्थान कोई यहां ठाडे, जोवो इत उत जाय ॥२॥

॥ दोहा ॥

सखी शिखर पर जाय के, देखे निजर पसार।
मुनिवर देख्या ध्यान में, पाई हर्ष अपार ॥१॥

तर्ज—चालो सजनी बहिली।

चालो जल्दी बाई, देखोनी वन के मांही; मोरी सजनी ज्ञानी गुरु उभा ध्यान में ॥ टेर ॥ भलो भाग्य बाईजी थांरो, सांचा सतगुरु मिलिया। दरसन करसां चरण भेटसां, अब

ने जास ॥३॥ रही तू घर में वांजड़ी, फिर लीनो संयम भार। अन्ते आलोचना नहीं करी, गई फिर स्वर्ग मझार ॥ ४ ॥ स्वर्ग थकी चव यहां हुई, कन्या राज कुमार। कर्म तणे परताप सूं, पावो दुःख अपार ॥५॥ तेरह वर्ष तेरह घड़ी, वढ़ गयो पूरो व्याज। पति छतां विरह रह्यो, सासु विगाड़ी लाज ॥६॥ पाडो सण सखी आ हुई, दुख पावे तुम साथ। मिलसी पति कुशले तुमें, जीत के आसी थारो नाथ ॥७॥ अब तो सदा सुख पाव सो, होगयो दुखरो अन्त। गर्भ तुमारे पुत्ररो, शूरवीर पुण्य वन्त ॥८॥

॥ दोहा ॥

मुनि मुख मंजुल वचन यह, सुणया अंजना ताम।
रोम रोम हर्षित हुये, बोली कर परणाम ॥१॥

तर्ज—जच्चा की।

मुनि मन मोहन सोहन सूरत प्यारी हो, सुखकारी मुनिराज उपकारी मुनिराज। गाऊं गुण जश जाऊं मैं बलिहारी हो मुनीन्द्र। जन मन रंजन भंजन भव भय भारी हो, सुखकारी मुनिराज। मुनि मन भंजन खल दल गंजन कारी हो मुनीन्द्र ॥१॥ सुरपति नरपति वंदित जय जय कारी हो सुखकारी मुनिराज, सतगुरु कान्त शान्त गुणधारी हो मुनींद्र। कीरति कन्त अनन्त सन्त गुणधारी हो सुखकारी मुनिराज। जिनके पदकज धोक त्रिकाल हमारी हो मुनिंद ॥२॥

॥ दोहा ॥

धर्म ध्यान करते रहो, कहकर यों मुनिराय।
विद्याचारण योग से, उड़े गगन गति जाय ॥१॥

तर्ज—पपीहा काहे मचावे शोर।

गगन में गमन कियो मुनिराज। सतगुरु धर्म की जहाज ॥ ग० ॥ बैठी सतियां ध्यान में झुका सूर्य तब अस्त। वनचर घूमे विपिन में तिमिर भयो है समस्त अस्त हुक आयो है मृगराज ॥१॥ आकुल व्याकुल हो सती पड़ी दर्द की हार। गर्भवती सखी धीर हो भजन करे नवकार दीवि फिर हम पर हम आवाज ॥२॥

तर्ज—नवकार ही मन्त्र बड़ा है।

अब कैसा कष्ट पड़ा है कोई किसो रक्षा आय के ॥टेर॥ सुनो वन के सुर अधिकारी बन आई शरण तिहारी हम दीन हैं अबला बिचारी बचाओ करुणा लाय के यह सन्मुख शेर खड़ा है ॥ १ ॥ यदि शील धर्म में साची हम मन से हैं राची सब क्षेमा रग रग राची फिर करना रक्षा आय के यांकि भूखा झगड़ा है ॥ २ ॥

तर्ज—मूल।

करुणा क्रन्दना सुनी वनविच वन रक्षक सुर राज।
अवधी ज्ञान लगा के देखा क्या है जंगल आवाजी ॥१६॥
सुन वन में दो सतियां आई दुःख पाय विस वार।
भरी हृदय में ऐसी हालत पिछु मारे भय भारती ॥१७॥

ऐसा सोच विचार देवता, बना सिंह शार्दूल ।
दे आवाज मृगराज हटायो, ज्यों वायु आगे तूलजी ॥१७१॥

खास स्वरूप बनाय देवता, नहीं मन कीनो मान ।
सती चरण में शीश झुकाकर, देव गयो निज स्थानजी ॥१७२

रात्री गई और रवि उदय हो, खिली सकल वनराय ।
सती अञ्जना सखी संगाते, मारग चाली जायजी ॥१७३॥

कर्म योग से मारग बिच में, करतो मुख फुँकार ।
क्रोधारुण हो सर्प भयंकर, पड्यो सती की लारजी ॥१७४॥

तर्ज–मल्ली जिन बाल ब्रह्मचारी ।

शील की महिमा है भारी रे २ मिट जावे संताप पाप सब है शाताकारी ॥ टेर ॥ सती अञ्जना धीरज धर कर ऐसे विचारी करूँ परीक्षा मैं प्रीतम की, सुन सहियर प्यारी ॥१॥ प्रीतम हो तन मन सेती पूरण ब्रह्मचारी । तब तूं नाग भाग कर जाना, मान आन मारी ॥२॥

तर्ज–मूल ।

सर्प गयो सती मन सुख पायो, आयो हर्ष अपार ।
पियो हमारो है पुण्यवन्तो, शीलवन्त सुखकारजी ॥१७५॥

दोनों सतियों वन में रहवे, भोजन वन फल खाय ।
धरम शरण में रहे रात दिन, सुख मांहे दिन जायजी ॥१७६॥

चैत्र मास की वद अष्टमी ने, पुष्य नक्षत्र शशिवार ।
[illegible] कुमारजी ॥१७७॥

मामो कहे सुण भाणजी सरे अब मत करिये सोच ।
म्हारे साथ में आप पधारो, ऊंचो घर आलोचजी ॥१८५॥
बैठ विमाने चालिया सरे, सती गोद हनुमान ।
मोती झूमका लेवन कारण, कुंवर करे अनुमानजी ॥१८६॥
उछल्यो कुंवर तोड़कर मोती, पड्यो भूमि पर जाय ।
सती अंजना देख दशा यह, इण विध रही अकुलायजी ॥१८७

तर्ज-रसिया नवीन ॥

म्हांरो लाल गिर्यो सुकुमार लार मैं भी गिर जाऊंगी । मैं भी गिर जाऊंगी हाय मैं तो मर जाऊंगी ॥ टेर ॥ अब नहीं हरगिज जिन्दी रहूंगी मैं दुःख पाऊंगी । लकड़ घाल कर जालो जाल में, मैं जल जाऊंगी ॥ १ ॥ जब तक लाल नहीं देखूंगी, अति दुःख पाऊंगी । हा ! कर्मो ने यह क्या कीना, किम शांति मनाऊंगी ॥२॥

तर्ज-कोरो काजलियो !

मामो ऐसे बोलियो, सुनो सती अरदास, कुंवर पुन्यवन्तो ॥ टेर ॥ सोच रति तुम मति करो, हृदय रखो विश्वास ॥ १ ॥ पुत्र तेरो मरियो नहीं तूं कहण हमारी मान । इण की सुर सेवा करे, कांई प्रगटो जग में भाण ॥ २ ॥ नीचे जाकर देखियो, कांई तूटी तरू की डार शिला तणो चूरण । कियो कांई रम रह्यो है सुकुमार ॥ ३ ॥ चकित हुआ चित्त में तदा, कांई लेकर तब घाल । आय सती ने सूंपीयो, फिर बोला एम सवाल ॥४॥ चिन्ता चित्त से छोड़ के, कांई करिये यों अभिमान । वीर जननी मैं जगत् में जनमियो श्री हनुमान ॥५॥

तर्ज-मूल

शीघ्र गति से चालिया, आया है मोसाल।
सती धर्म में लीन है, पतले मंगल माल ॥१८८॥

पवन पवन को जीत के, ले लंका सूं माल।
सीधा आया निज नगरी में पिता लियो सम्मानजी ॥१८९॥

मात पिता को वन्दन करके आयो महलां मांय।
इत सत देखी सती न लाधी, काक रहे कुलदायजी ॥१९०॥

माता धर हद घूंघट लागी भाई पुत्र की नार।
रोती रोती इस पर बोली सुण आपा सुकुमारजी ॥१९१॥

तर्ज-हां सगीजी ने पेड़ा भावे

हां लाल सुमा मयें हमारी काया कपे कहतां सारी, क्या कहूं हा! इकनाक सती मे विपदा डारी रे ॥ टेर ॥ गर्भ देख मैंने लजकारी, ऊंची टेर सती को मारी। कहा सती न सुण मुझे हा! कर लाचारी रे ॥ १ ॥ तो भी मुझे दया न आई कैसी कुमति ऊंची धारे, करके काला मुख देश से बार निकाली रे ॥२॥ पापल बुद्धि नार कहावे क्षण में धकल कठी छ जावे। हां वेगम की जात रहे नहीं, गम हितकारी रे ॥३॥

॥ दोहा ॥

पवन श्रवण कर शीघ्र ही, प्रजल्यो कोप मझार।
पर माता को देख के, बोला वचन विचार ॥१॥

तर्ज--वन को भेज दिये दो मैया

माता ! जबर जुलम कर डान्यो बन को भेज दी दो सतियां ॥ टेर ॥ अगर तुझे था निर्णय करना, देनी थी पत्तियां । जैसी हुई थी वैसी मैया, लिख देता वतियां ॥ १ ॥ मैया तूं है समझदार, क्यों छाई कुमतियां । सतियों की दया न लाई, गजब करी गतियां ॥२॥

॥ दोहा ॥

यों कहे चाले पवजी, आई माता दौड़ ।
हाथ पकड़ कर लाल का, बोली वेकर जोड़ ॥१॥

तर्ज--मारवाडी मांड

सुन लाल हमारा चाल दियारा, अर्ज मातारी मान ॥टेर॥ ऐसे हुआ तो लालजीरे, कहना था मुझे आय । क्यों दुख देती हाय सती को, क्यों होता अन्यायजी ॥१॥ भूल हमारी पुत्र भूल कर करिये भोजन चाल । पीयर होगी विनणी रे, लेसां सार संभालजी ॥२॥

तर्ज--पाणीडो भरवा दे.

मैया मत करिये लाचार, झटपट जावण दो ॥ टेर ॥ भोजन माता किस विध भावे, जीव मेरा तो अति घबरावे, आवे दुःख अपार ॥१॥ नारी विना नहीं नीर पीऊँगा, प्यारी विना अब नहीं जीऊँगा, मरसूं खाय कटार ॥ २ ॥ माता का झट हाथ छुड़ाकर, अपने मित्र के महलों आकर, बोला यों ललकार ॥ ३ ॥

तर्ज–लंगडी चाल

जोगी बन तन भस्मी रमाऊँ, प्यारी ढूंढकर लाऊँगा, जो न मिले मेरी नार यार मैं जहर खाय मर जाऊँगा देर। सा बिना यह दुनियाँ सारी मुझको झूठी लगती है बिना सा के गति हमारी दिन दिन बिगड़ी जाती है। प्यारी बिना महल अटारी खाना सोना पीना क्या बिना प्रिया के कहूं मैं जगत् बीच में जीना क्या। मरी हुई या जीती है खबर खास मैं लाऊँगा ॥१॥

तर्ज–मूल

भिम कहे सुन पवनकुंवरजी यों मत करो कपास।
चलो शीघ्र सब खबर लगावें, जाकर मिल सुसरासजी ॥११
चढ़ घोड़े तब दोनों आये महेन्द्रपुरी के पास।
आवे आया पवनकुंवरजी सुण पयो भूप उदासजी ॥१३॥
कन्या कहती थी जो बातां निजरां मांई आज।
हाय करूं क्या मैं मर जाऊं, किस विध राखूं लाजजी ॥१४

तर्ज–दोय नारंगी दोय अनार

भूपति मन में करे विचार आवे आया पवनकु मार देर
मैं मर जाऊँ या विष खाऊँ, हा! अब जाऊँ अग्नि मझार ॥१
कहा पर जाऊँ कन्या लाऊँ, किम दिखलाऊँ मुख विकार ॥२
भूपति बरबे सब परिजन मे कोई मत देना खबर बिगार ॥३
सम्मुख आई करकर भाई आया जमाई कर सत्कार ॥४
जीमन त्यारी होगई सारी, मिजर न आई है निज नार ॥५

तर्ज–पनजी मूंडे बोल.

पवनजी बोलेरे २ विन सती हमारो, मन इम डोलेरे ॥टेर॥
सती दर्श करियां विन भाई, चित्त चैन नहीं पावेरे।
खारा लागे खेल सभी, नहीं भोजन भावेरे ॥१॥
हाल तांई तो सती तणों मैं, रती पतो नहीं पायोरे।
वसन्तमाला भी सखी न दीसे, दिल घबरायोरे ॥२॥
इतेक फिरती निज शाला कीं, छोटी बाला आईरे।
गोद बिठाकर मोद लाय के, यों बतलाईरे ॥३॥
बोलो बाई थांरी फूंफी अठे आई के नाई रे।
रोती रोती बोले बाई, कहूं अब काई रे ॥४॥

तर्ज–आखिर नार पराई है.

एक दिन फूफी आई थी, पिता नहीं बतलाई थी ॥टेर॥
माता से उण करी पुकार, फिरी फेर सौ बधव द्वार, सब ने बार कढ़ाई थी ॥ १ ॥ फूफी का लख काला वेष, राजा राणी करियो द्वेष, प्यासी ने निकलाई थी ॥ २ ॥ कोई मति इण ने बतलाओ, भोजन और पाणी मत पाओ, ऐसी आण फिराई थी ॥३॥

॥ दोहा ॥

हाल श्रवण कर बाल से, उठी जालो ज्वाल।
थाल फेंक तत्काल ही, बोल एम सवाल ॥१॥

तर्ज—मूल

पवनकवंर तो पवन गति से, चालियो विपिन मझार।
महीन्दराय और मन्त्री सारे, कर रहे खूब विचारजी ॥१६५॥
मात पिता और सासु सुसरा, आये पवन की लार।
फोजां सारी सोधन लागी, नदी गुफा और पहारजी ॥१६६॥
सती मिली नहीं जद पवनकवंरजी, चलने हुआ तैयार।
मात पिता और सासु सुसरा, वरजे वारवारजी ॥१६७॥
इतेक अणुचर इण पर बोला, सती मिला मोसाल।
बैठ विमाने चालिया सरे, आय मिलीया तत्कालजी ॥१६८॥
सती हर्ष ला शीश झुकायो, साथे वीर कुमार।
देख पवन मन मुदित होकर, बोले वचन रसालजी ॥१६९॥

तर्ज-तुमको लाखों प्रणाम

धन धन तूं अवतारी प्यारी, लाखों श्याबास, पतिव्रत पालनहारी तुमको लाखों श्याबास ॥ टेर॥ मैंने अनहद दुःख दिराया, सासू ने शिर कलंक लगाया तूं ने रखी इकतारी ॥१॥ वन में विध विध कष्ट उठाया, नहीं धर्म से प्रेम हटाया, आऊँ मै वलिहारी ॥२॥ वसन्त माला भी सखी सयानी, दुःख सुख में आ रही अगवानी, है मन मोहन गारी ॥३॥

तर्ज-छोटी मोटी सुईयांए.

प्राण पति सरदार ऐसे नहीं फरमावना ॥टेर॥ मै हुं आप के चरणों की दासी, तूं मुझ प्राणाधार हार मन भावना ॥१॥ मात पिता और सासु सुसरा, है सब को उपकार, शील जश छावना ॥२॥ आप प्रताप आज दुःख टलियो, मिलियो मंगल माल आनन्द वरतावना ॥३॥

॥ दोहा ॥

सास्तु श्वसु श्वाय के, इन पर मोकी साफ।
भूलचूक सब मायरी, पहुश्वर करिये माफ ॥१॥

तर्ज—गहरोजो फूल गुलाबरो

धन धन तू सती अञ्जना, धन धन हो थारो अवतार। धन पीहर धन सासरो धन धन हो थारो अवतार ॥ १ ॥ पुं अगवन्ता मोविका तू हिज है सतियों सिरदार। चाच धर्म लग पालियो ब्रह्मचर्य हो बाहरी धार ॥ २ ॥ पति पर रति मा रीस की दीनों हो पति दुःख अपार। पतिव्रत धर्म न धारियो राखी हो कुलघटरी कार ॥ ३ ॥ कलंक दियो थां ऊपरे दीनों हो मैं दुःख अपार। माफि मांगू आपसे, दीजो हो दिल दया विचार ॥४॥

तर्ज-गनगोर की

सासूजी थे मारा थारा चरण पखासी पूर्सूजी।
चरण परवासी पूसू थांने हाथ जोड़कर पूसूजी ॥ टेर ॥
आप बड़ा गुणधाम सासूजी म्हारो मान बढ़ायोजी।
पूर्व भव के कर्म प्रतापे हामो दुःख उठायोजी ॥१॥
आप दियो तो सब दुःख देयो मैंने किया फल पायाजी।
ऐसी सुसराली सती अञ्जना अपना अवगुण गायाजी ॥२॥

तर्ज—हींडे हालो रे.

आनन्द आयोरे २ ओ सती अञ्जना जश जग छायोरे ॥टेर॥

सती वचन सुन सासुजी को, हद विन हिय हरपायोरे।
किन्ही उपर नहीं दोष दियो, निज अवगुण गायोरे ॥१॥
मात पिता भी आय सती पे, निज अपराध खमायोरे।
भाई भोजाई सभी सती ने शीश झुकायोरे ॥२॥
शीलव्रती अति सती अञ्जना, पतिव्रत धर्म निभायोरे।
नरनारी मिल मुक्त कण्ठ से, सति गुण गायोरे ॥३॥
सती मामा को सब मिल करके, पूरो मान वढ़ायोरे।
देख पौत्र को प्रह्लाद भूप के मोद न मायोरे ॥४॥

तर्ज—मूल

दादा दादी देख पौत्र को, हनुमत निज कुल हीर।
यह निश्चय नामी नर होगा. वश विद्याधर वीरजी ॥२००॥
भक्ति युक्त अति भाव धरी ने, मामे कर मनुहार।
सज्जन गण संतोषिया सरे, पवनंजय को प्यारजी ॥२०१॥
पाच सात दिन प्रीत धरी ते, रह्या घणो रस रग।
शीख मांग कर पहुंच गया सब, निज २ घर उछरंगजी ॥२०२
पवनकुवरजी निज परि कर ले आया नगरी मझारजी।
मामो पिन पहुंच.वन आयो, वरत्या जय जयकारजी ॥२०३॥
पवनकुंवर को पाट वैठाकर, ले खुद संजम भार।
तप जप से आतम शुद्ध करके, पहुचा स्वर्ग मझारजी ॥२०४॥
राज्य कार्य सब पवन चलावे, वरते मगल माल।
वसन्तमाला ने पूछने सरे, करे सार सम्हालजी ॥२०५॥

हनुमान कुमरजी पढ़कर हो गये, बढ़कर कला निधान।
वानर विद्या हासी की पढ़ सीखी, उसमें भीषण बल बलवानजी।
एक दिन बैठे सभा जोड़कर पवन और हनुमान।
लंकापुरि से चलकर आया दूत बड़ो गुणवानजी ॥२०७॥
वरुण राय फिर माने नाहीं रावण का संदेश।
हनुमत बोले सुनो पिताजी दो मुझको आदेशजी ॥२०८॥

तर्ज—मेरे प्रभु कदमों में बुलालो मुझे.

पिता युद्ध करने को मैं जाऊँगा मैं।
भुजबल को अजमाऊँगा मैं ॥ टेर ॥
इस जवानी का पराक्रम काम क्या फिर आएगा?
आपके जाने से स्वामिन्! मुझको बुरा बतलाएगा।
अपने जौहर को जाके दिखलाऊँगा मैं ॥१॥
आपके परताप से यह वरुण को समझाएगा।
मान मर्दन कर उसी का शीश नीचा आएगा॥
जग में जीत पताका फहराऊँगा मैं ॥२॥

तर्ज—घनश्याम की महिमा अपार

पिता कहे धर प्यार सुत मेरी सीख स्वीकार ॥ टेर ॥
वरुणराय का काम उदास मान कहन दे मेरे लाल!
रखिये महल मझार ॥ सुत० ॥१॥
जीमण में आयो ना भाई खेल नहीं समझो मन माँहि।
पीछे करोला विचार ॥२॥
पिता वचन सुन कहे हनुमाना मुझे जग में विस्मय आना।
लीना है दिल में धार ॥३॥

तर्ज-मूल.

देख वीरता बजरंगी की, पवनजी करे विचार।
जाओ जग में कुंवर साहव, पिन रहना हुय हुंसियारजी ॥२०९

दल बल प्रवल सजाय के सरे, चाले श्री हनुमान।
निज नानेरे आयके सर, प्रथम कियो प्रमाणजी ॥२१०॥

आई श्री हनुमान कुमर के, मन में ऐसी वात।
इस नगरी से दुःखित होकर, निकली मेरी मातजी ॥२११॥

दूत भेजियो नानाजी ने, थानो म्हारी आन।
नहीं तर थांरी रहसी नाही, थोड़ी सी भी शानजी ॥२१२॥

तर्ज-राधेश्याम की.

सुन दूत वचन ज्यों भूत लगा त्यों महेंद्ररायरी साया है।
काला मुख कर मार जूत सर दूत भणी निकलाया है॥

बस कह देना तेरे मालिक को मैं फौरन ही आ जाता हूं।
मुझको आन मनाने का मै उसको मजा चखाता हूं॥

सौ पुत्रों के साथ वीर वे दल बल ले तैयार हुए।
कायर नर को छोड़ और सब वीर, पुरुष हुसियार हुए॥

रण भेरी जो वहां बजती थी और घाव निशान लगाया है।
महिंद भूप निज सेना लेकर नगरी बाहिर आया है॥

नानाजी के निकट आय कर खड़ा वीर हनुमान हुआ।
मानों आया सूर्य उतर कर ऐसा ही अनुमान हुआ॥

महिंद्र सेन यों बोला उसको तूं तो अब तक बच्चा है।
तू मेरे से नहीं जीतेगा यह कहन हमारा सच्चा है॥

॥ दोहा ॥

नानासा की नीति को, सुनकर मारी फाल ।
बजरंगी आगी कुंवर, मोका दीघ सवाल ॥१॥

तर्ज–राधेश्याम

मत कहिये भगरूपी स्वामी धूल मांय मिल जायेगी ।
जब तीर हमारे चालेंगे तब समझि रह जायेगी ॥
मैं छोटा हूं या मोटा हूं यह मालूम भी पड़ जायेगी ।
जब जोश हमारा देख आपकी होस हवा हो जायेगी ॥
रथियों से रथियों युद्ध करके अब भारी युद्ध मचाया है ।
तीन पहर तक बजरंगी ने अपना जोर दिखाया है ॥

॥ दोहा ॥

बांध लिया मामा और नाना, सभी करके पस्त ।
कहो जोर अब कहां गया, कहे मान कर मस्त ॥१

तर्ज–मूल

मम माता को अति दुःख दीना निरपराध किया संग्राम ।
मैं हूं बालिको प्रभु आपको हनुमन्त मेरो नामजी ॥२१३॥
मोलीया बन्धन हुई देर ढलीया हनुमन्त सका आय ।
रावण राजा सन्मुख आयो देख मैख हरखायजी ॥२१४॥
वरुणराय पर चढ़ीयो पवन सुत मययुरी को वीर ।
साथ रामचन्दजी मिल आया लघु वय देखी धीरजी ॥२१५॥

वानर विद्या को फैलाकर, जीतो हनुमन्त वीर ।
वरुण कहे मैं संजम लेसूं, आया सब तिण तीरजी ॥२१६॥

वरुणराय को संजम देकर, दीयो पुत्र ने राज ।
देख वीरता हनुमन्तजी की, खुशी हुवो महाराजजी ॥२१७॥

रावण भाणजी सुग्रीव कन्या और हजार ।
बजरंगी से ब्याही एक दम, वरतीया जय जयकारजी ॥२१८॥

दत्त डायजो दियो रावण ने, जिण को छेह न पार ।
सीख लेय हनुमानजी आया निज नगरी में चालजी ॥२१९॥

पवन अञ्जना देख पुत्र ने, पाया चकित अपार ।
ऐसे करता गयो काल कितोही, सुख भोगे संसारजी ॥२२०॥

संसार असार जान के, दोनों पवन अञ्जना लार ।
हनुमान को राज पाट दे लीनो संजम भारजी ॥२२१॥

पवन कवंर और सती अञ्जना, वसन्तमाला भी लार ।
अन्ते अनसन कर्म खपावी, गया मोक्ष मझारजी ॥२२२॥

जयमल्ल गच्छ जग में जयकारी, कीरति कमला कन्त ।
जिनके अष्टम पाट विराजे, गुरु मेरे गुणवन्तजी ॥२२३॥

पूज्य श्री कालमल्लजी, सतगुण के भंडार ।
शान्त सरल विद्वान् हुये थे, गुण गावे नर नारजी ॥२२४॥

तस्य शिष्य मुनि चैनमल ने, कीना चरित्र तैयार ।
सती अञ्जना सरस रसीलो, सब जीवां सुखकारजी ॥२२५॥

उगणीसे पच्याणु वरसे आखा तीज त्योंहार ।
गाव खांगटे मरुधर माही, आया सेखेकालजी ॥२२६॥

कोठारी कनकमलजी श्रावक हैं सुखकारी ।
जिनके शांति भवन में ठहरे, पढ़ें प्रभु गणाधारीजी ॥२७॥

यद्यपि शोधा अधिको होवे, थोड़ी पुस्तक जोय ।
तेहमो त्रिकरण योग से, मिथ्या दुष्कृत मोय ॥२८॥

श्रवण पठन को सार यही है पालो शुद्ध मन शील ।
तिण घर संपति संपदा सारे कर सदा ही लीलजी ॥२९॥

सती मदना पवन वीर का, गुण गायो नरनार ।
सब बोलो जिन राज की सारे बरते जय जय कारजी ॥३०॥

ॐ शांति ! शांति !! शांति !!!